अनुसंधान विधि

(Research Methodology)

बी. ए.–II

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक–124 001

Copyright © 2003, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय सूची

अध्याय 1 सामाजिक अनुसंधान की मूलभूत अवधारणाएँ

Basic Concepts of Social Research 5

अध्याय 2 सामाजिक घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन

Scientific Study of Social Phenomena 27

अध्याय 3 शोध विधि तथा आंकड़े एकत्रित करने की तकनीकी

Methods of Research and Techniques of Data Collection 53

अध्याय 4 स्रोत, वर्गीकरण तथा आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण

Sources, Classification and Presentation of Data 87

अध्याय 5 सामाजिक शोध में सांख्यिकी विधि

Statistical Methods in Social Research 109

RESEARCH METHODOLOGY

Max. Marks : 100
Time : 3 Hours

Unit – I

Basic Concepts in Social Research: Meaning, Scope and Significance of Social Research; Concept, Hypothesis, Fact and Theory.

Unit – II

Scientific Study of Social Phenomena: Nature and Characteristics of Scientific Method; Objectivity and Subjectivity in Social Research; Empiricism in Sociology; Social Survey, Social Research and its Steps; Research Design.

Unit – III

Methods of Research and Techniques of Data Collection: Quantitative and Qualitative Methods; Comparative Method, Observation, Case Study and Content Analysis; Techniques of Data Collection; Sampling, Questionnaire, Schedule and Interview.

Unit – IV

Sources, Classification and presentation of Data: Primary and Secondary Sources of Data; Classification; Coding, Tabulation, Graphical Representation, Histograph, Polygon, Pie-chart.

Unit – V

Statistical Methods in Social Research: Significance of Statistics in Social Research; Measures of Central Tendency: Mean, Mode and Median; Measures of Dispersion: Range, Mean Deviation, Standard Deviation.

अध्याय-1
सामाजिक अनुसंधान की मूलभूत अवधारणाएँ
(Basic Concepts of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान का अर्थ
(Meaning of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान (Social Research) का समाजशास्त्र में एक विशेष महत्त्व है। समाज में घटने वाली क्रियाओं के व्यवस्थित अध्ययन के लिए सामाजिक अनुसंधान की विधि को लेकर कई मत व्यक्त किए गए हैं। कुछ समाजशास्त्रियों ने यह महसूस किया कि समाजशास्त्र में सामाजिक अनुसंधान को विधिवत स्थापित करने के लिए विज्ञान में अपनाये गयी विधि का प्रयोग काफी उपयोगी हो सकता है। वह दूसरी ओर समाजशास्त्र के कुछ ऐसे भी विचारक थे, जिन्होंने इस मत का खंडन करते हुए यह बताया कि सामाजिक शोध की विधि विज्ञान से भिन्न होनी चाहिए। जिन लोगों ने विज्ञान के विधि को उत्तम मानकर सामाजिक अनुसंधान पर जोर दिया उनमें फ्रांस के समाजशास्त्री अगस्त काम्ट, इमाइल दूर्खिम के नाम मुख्य रूप से लिये जाते हैं।

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति
(Nature of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान के प्रकृति की व्याख्या करते हुए अगस्त काम्ट (1798-1857) का विचार था कि जिस प्रकार प्रकृति विज्ञान में तथ्यों का विश्लेषण वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जाता है उसी प्रकार सामाजिक क्रियाओं का अध्ययन भी समाजशास्त्र में वैज्ञानिक विधि को अपनाकर सामाजिक शोध करना संभव है। काम्ट के अनुसार सामाजिक अनुसंधान के निम्न चार विधि का अनुसरण करना आवश्यक है-

a. निरीक्षण (Observation)
b. प्रयोग (Experiment)
c. तुलनात्मक विधि (Comparative Method)
d. ऐतिहासिक विधि (Historical Method)

निरीक्षण (Observation): निरीक्षण का सीधा संबंध सामाजिक क्रियाओं के अवलोकन से है। इस विधि का प्रयोग हमारे ज्ञानेन्द्रियों के इस्तेमाल से जुड़ा है। घटनाओं को हम अपने आँखों से देखकर उस घटना, क्रिया तथा प्रक्रिया के बारे में अनुमान लगाते हैं। जिन तथ्यों का अवलोकन नह किया जा सके उसे विज्ञान की कसौटी पर विश्वसनीय नह माना जा सकता है। इसलिए निरीक्षण को सामाजिक अनुसंधान का एक महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है।

प्रयोग (Experiment): प्रयोग विधि का इस्तेमाल यद्यपि विज्ञान में विशेषकर पदार्थ विज्ञान, रसायन विज्ञान तथा जीव विज्ञान में प्रयोगशाला में नियंत्रित वातावरण में किया जाता है। समाजशास्त्र में विज्ञान के स्तर का प्रयोग संभव नह हो सकता। इसलिए यह कहा जाता है कि समाज विज्ञान में प्रयोग करना तथा प्रकृति विज्ञान में प्रयोग किया जाना अलग स्थिति को दर्शाते हैं। समाजशास्त्र में प्रयोग से तात्पर्य कारक तत्त्वों के नियंत्रण से है। उदाहरण के लिए एक गाँव में परिवार नियोजन की सफलता के लिए उस गाँव को परिवार नियोजन पर आधारित फिल्म व उससे संबंधित जानकारी दी जाए और दूसरे गाँव को इससे वंचित रखा जाये तो यह एक प्रकार के नियंत्रण की प्रक्रिया मानी जायेगी।

तुलनात्मक विधि (Comparative Method): तुलनात्मक विधि का इस्तेमाल अक्सर विज्ञान में मानव समाज और प्राणी जगत के बीच तुलना के द्वारा किया जाता है। समाजशास्त्र में तुलनात्मक विधि का प्रयोग परंपरागत समाज और आधुनिक समाज जिसे ग्रामीण तथा शहरी समाज कहा जाता है - के लिए किया गया। एक ही समाज की तुलना दो विभिन्न समय तथा काल के संदर्भ में भी की जा सकती है। इतिहास के संदर्भ में ही एक समाज का अध्ययन दो विभिन्न समय को ध्यान में रखकर किया जाता है। मुगल काल तथा ब्रिटिश काल के समय समाज के स्वरूप में काफी अंतर पाया जाता है। इस प्रकार समाजशास्त्र में भी तुलनात्मक विधि का प्रयोग कर महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

ऐतिहासिक विधि (Historical Method): ऐतिहासिक विधि से काम्ट का तात्पर्य समाजशास्त्र में सिद्धान्त प्रतिपादित करने से था। मानवीय विचारों में जो बदलाव आते हैं उस बदलाव का अध्ययन समाज को आधार मानकर किया जा सकता है। यद्यपि काम्ट ने इस विधि का प्रयोग सीमित स्तर पर किया था परंतु सामाजिक अनुसंधान के लिए इसका व हत स्तर पर प्रयोग कर महत्त्वपूर्ण उपकल्पनाएं बनाये जा सकते हैं।

सामाजिक अनुसंधान की परंपरा व अवधारणाएं

(Traditions & Concepts of Social Research)

अगस्त काम्ट के द्वारा दिये गये विचार से यह स्पष्ट है कि उनका मत समाजशास्त्र में वैज्ञानिक विधि को अपनाने से था। समाजशास्त्र में अनुसंधान की जो दूसरी परंपरा है उससे जिन समाजशास्त्रियों के विचारों को जोड़कर देखा जाता है उसमें विशेषकर जर्मनी के समाजशास्त्री मैक्स वेबर (1864-1920) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मैक्स वेबर का यह मानना था कि सामाजिक क्रिया का विश्लेषण व्यक्ति विशेष के सांस्कृतिक परिवेश तथा समाजीकरण की प्रक्रिया में किया जाना चाहिए। उन्होंने अनुभव पर आधारित ज्ञान जिसका एक अमूर्त्त स्वरूप होता है उसके लिए एक विशेष प्रकार के अध्ययन विधि को अपनाने की पेशकश की। धार्मिक क्रियाओं का अध्ययन लोगों के विश्वास व आस्था से जुड़े क्रियाओं का अध्ययन वस्तुनिष्ठ (objective) तरीके से करना संभव नह है। ये मनुष्य के आत्मनिष्ठ (subjective) सोच से जुड़े हैं इसलिए मैक्स वेबर का मत था कि मनुष्य ने सामाजिक व्यवहार के अध्ययन में उन्ह तरीकों का इस्तेमाल अक्षरसः उसी रूप में नह हो सकता जिस रूप में प्रकृति विज्ञान अपने अध्ययन विधि का प्रयोग कर सकते हैं। सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में इन दो परंपराओं से जुड़े अध्ययन विधि का विशेष महत्त्व है और इस प्रकार के सोच ने अनुसंधान विधि से जुड़े उसके वैज्ञानिक संदर्भ को सीमित नह किया है। बल्कि इसके विपरित अनुसंधान विधि के वैज्ञानिक पक्ष को ज्यादा प्रासंगिक भी बनाया है।

सामाजिक अनुसंधान की उपर्युक्त परंपरा को ध्यान में रखकर निम्न पूर्व अवस्थाओं को ध्यान में रखना आवश्यक हैं-

1. सामाजिक घटना का एक क्रमबद्ध स्वरूप होता है।
2. अज्ञानी होने से ज्ञानी होना बेहतर है।
3. शोधकर्त्ता का बाह्य जगत के साथ संपर्क आवश्यक है।
4. भौतिक जगत या सामाजिक जगत के संदर्भ में सामाजिक शोध के लिए कार्य-कारक संबंध स्थापित किया जाना आवश्यक है।
5. शोधकर्त्ता के कुछ उद्देश्य होते हैं-
   (i) शोधकर्त्ता शोध के आधार पर मानवीय स्थिति को सुधारने का उपाय बताता है।
   (ii) शोधकर्त्ता अपने शोध संबंधी निरीक्षण को घटना क्रम से जोड़कर कुछ सिद्धान्त बनाने का प्रयास कर सकता है।
   (iii) समाज, शोधकर्त्ता के शोध-कार्य को प्रोत्साहित करता है।

किसी भी शोध का एक खास उद्देश्य होता है। शोध के उद्देश्य सैद्धान्तिक हो सकते हैं या फिर व्यवहारिक। शोधकर्त्ता इन दोनों के बीच एक संबंध स्थापित करने की कोशिश करता है। उदाहरण के लिए पिछले दिनों मार्च, 2003 में हांगकांग में श्वास की बिमारी से जुड़े एक वाइरस का पता चला जिसे सार्स (Severe Acute Respiratory Syndrome) के नाम से जाना जाता है।

इस बिमारी में निमोनिया के लक्षण पाये जाते हैं और इसके कारगर इलाज नह होने के कारण चीन में सैकड़ों लोगों की जान चली गयी। इस जानलेवा बिमारी के नियंत्रण के लिए तथा इस बिमारी से ग्रसित लोगों के उपचार के लिए जो अनुसंधान किया जाना चाहिए उसके महत्त्व को आज सभी लोग पहचानते हैं।

सामाजिक अनुसंधान में तथ्यों का विधिवत चयन किया जाता है। तथ्यों का विधिवत चयन मनुष्य को एक इकाई मानकर किया जा सकता है या फिर उसके सामाजिक संदर्भ को ध्यान में रखकर उसके सामूहिक जीवन से जुड़े व्यवहार को ध्यान में रखकर किया जा सकता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक अनुसंधान एक वैज्ञानिक पद्धति से खोज करने की प्रक्रिया है। वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा जिस तकनीकि का प्रयोग सामाजिक शोध के लिए किया जाता है उसके निम्न उद्देश्यों की चर्चा करते हुए पी०वी० यंग ने कहा है-

1. सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य नये तथ्यों की खोज या पुराने तथ्यों का परीक्षण है।
2. तथ्यों का क्रमबद्ध विश्लेषण तथा इसके बीच के संबंध को किसी सिद्धान्त द्वारा प्रतिपादित मूल्यों के अनुरूप भी किया जा सकता है।
3. इसके अंतर्गत नये वैज्ञानिक तकनीकि, अवधारणा तथा सिद्धान्त का विकास भी शामिल है जो मानव व्यवहार के विश्वसनीय अध्ययन पर बल देते हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सामाजिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य मानवीय व्यवहार को समझना तथा उस व्यवहार से संबंधित तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। इस प्रकार से अर्जित ज्ञान का चयन एक प्रमाणिक, व्यवस्थित विधि को अपनाकर किया जाता है ताकि समस्याओं व घटनाओं के उपर किये गये खोज के द्वारा उन समस्याओं को नियंत्रित करने के उपाय भी सोचे जा सकें। इसके शब्दों में सामाजिक अनुसंधान तथ्यों को खोजने का एक क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित तरीका है जिसमें निम्न बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता हैं-

1. तथ्यों का चयन (Selection of Facts)
2. विधिवत तरीके से नये तथ्यों की खोज (Discovery of New Facts)
3. तथ्यों का विश्लेषण (Analysis of Facts)
4. सामाजिक जीवन के अध्ययन से जुड़े अवधारणाओं तथा सिद्धान्तों का निर्माण (Formulation of Concepts & Theories)
5. ज्ञान के दायरे को विस्त त करना, निश्चित करना तथा उनका मुल्यांकन इस प्रकार करना कि सिद्धान्तों तथा तथ्यों को और भी पुष्ट किया जा सके। (Extend, correct or verify knowledge)

इस प्रकार एक शोधकर्त्ता का प्राथमिक उद्देश्य मानवीय जीवन से संबंधित उसके व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्त्वों की खोज करना है। इन तत्त्वों की खोज करने के संबंध में उसके व्यक्तिगत या सामाजिक संदर्भ को ध्यान में रखकर उसके सामाजिक जीवन को प्रभावित करने वाले तत्त्वों की खोज भी सम्मिलित होती है। उन तत्त्वों की पहचान हो जाने के बाद शोधकर्त्ता कारक तत्त्वों को नियंत्रित करने के उपाय व तरीकों के बारे में सोच सकता है। संक्षेप में पी०वी० यंग के शब्दों में सामाजिक अनुसंधान व शोध की परिभाषा देते हुए यह कहा जा सकता है कि सामाजिक अनुसंधान एक खोज करने, विश्लेषण करने तथा सामाजिक जीवन से जुड़ी अवधारणाओं को विकसित करने की एक विधि है जो उसे ज्ञान को बढ़ाने, निश्चित करने या उसके परीक्षण में सहायक होती है जिसके आधार पर सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी संभव हो जाता है।

अतः सामाजिक अनुसंधान के द्वारा जिन क्रियाओं की पहचान हम नह कर सकते, उसकी पहचान संभव हो जाती है जिसके द्वारा किसी भी पूर्व धारणाओं तथा परंपरागत अवैज्ञानिक सोच को वैज्ञानिक सोच से जोड़कर भ्रामक विचारों का खंडन किया जा सकता है। एक समय था जब चेचक, हैजा, निमोनिया जैसे बिमारी को लोग दैवी प्रकोप माना करते थे और ऐसी बिमारी के शिकार लोगों के रिश्तेदार पूजा पाठ तथा दैवी प्रकोप से बचने के उपाय के लिए कुछ धार्मिक अनुष्ठान भी किया करते थे परंतु विज्ञान की तरक्की और शोध ने इस धारणा को बदला और आज कोई भी व्यक्ति इन बिमारियों को दैवी प्रकोप से जोड़कर नह देखता।

सामाजिक शोध के उपर्युक्त उद्देश्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध के निम्न दो उद्देश्य महत्त्वपूर्ण हैं-

1. **मौलिक शोध (Pure Research):** मौलिक शोध व अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य शैक्षणिक होता है जिसके आधार पर शोधकर्त्ता के खोज से जो जानकारी मिलती है उसके द्वारा नयी अवधारणाएं या सिद्धान्त बनाये जाते हैं। उदाहरणस्वरूप यह कहा जा सकता है कि संदर्भ समूह (Reference Group) के अवधारणा के आधार पर भारतीय समाजशास्त्री एम० एन० श्रीनिवास का संस्क तिकरण तथा पश्चिमकरण (Sanskritisation and Westernisation) इस प्रकार के शोध का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

2. **व्यावहारिक शोध (Applied Research):** व्यवहारिक शोध का उद्देश्य तात्कालिक समस्याओं का निवारण करना होता है। इस प्रकार शोध व सर्वेक्षण (Research and Survey) के द्वारा किसी बिमारी व आकस्मिक घटना को समझना हो तो ऐसी परिस्थिति में भी अनुसंधान काफी सहायक सिद्ध होता है जिसके द्वारा घटनाक्रम का तात्कालिक समाधान ढूंढ़ने की कोशिश की जाती है। पिछले दिनों देश के कुछ राज्यों में भी सार्स के मरीज होने की संभावना को ध्यान में रखकर कुछ तात्कालिक उपाय किए गए। उसी प्रकार गंदे पानी से होने वाली बिमारी को दूर करने का उपाय भी गर्मी के दिनों में विशेषकर उन प्रांतों में शोध कर किया जाता है जहाँ सुखे से जान-माल की क्षति अधिक होने की संभावना होती है। इस प्रकार के शोध का उद्देश्य व्यवहारिक होता है और तात्कालिक समस्याओं के निदान में इस प्रकार के शोध काफी लाभदायक साबित होते हैं।

सामाजिक अनुसंधान का विषय क्षेत्र

(Scope of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान के अध्ययन क्षेत्र की बात को लेकर साधारणतया यह सवाल उठाया जाता है कि सामाजिक अनुसंधानकर्त्ता कितने तथ्यों की जानकारी शोध द्वारा करते हैं? किन अवधारणाओं और अनुमानों पर वे अपने शोध का आधार बनाते हैं? शोध का प्रयोजन क्या होता है? क्यों शोध किये जाते हैं? क्या शोध के बिना तथ्यों की जानकारी संभव है? अगर इन सवालों को ध्यान में रखकर चर्चा की जाये तो संभवतः शोध का क्षेत्र इतना व्यापक हो जाये कि उसका वर्णन करना थोड़ा कठिन प्रतीत हो। इसलिए शोध से संबंधित इसके विषय क्षेत्र का वर्णन कुछ मौलिक बातों को ध्यान में रखकर ही किया जाना ज्यादा उचित होगा।

1. जैसा कि आपने अध्याय के शुरू में पढ़ा होगा की शोध का उद्देश्य नये तथ्यों की खोज करना है। फ्रांस के महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्री इ० दुर्खिम ने आत्महत्या का अध्ययन करते हुए इसे एक मनोवैज्ञानिक तथ्य मानने से इन्कार किया। उनका कहना था कि आत्महत्या एक समाज की परिस्थितियों से जुड़े होने के कारण एक सामाजिक क्रिया है जिसका अध्ययन सामाजिक संदर्भ को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। इस प्रकार के द ष्टिकोण को अपनाकर आत्महत्या करने वाले लोगों के समाज से उनके संबंध को समझने में काफी मदद मिली। उन्होंने अपने शोध के आधार पर पाया कि जो व्यक्ति समाज के मानदंडों के अनुरूप अपने आप को नह निरूपित कर पाता है उसमें अलगाववाद कि धारणा घर कर जाती है और ऐसे व्यक्ति में आत्महत्या करने के लक्षण काफी प्रबल होते हैं। इसलिए अविवाहित व्यक्ति, धर्म में आस्था नह रखने वाले व्यक्ति में आत्महत्या करने की प्रव त्ति ज्यादा प्रबल होती है। इसी प्रकार के अध्ययन जार्ज हर्बट मीड, चार्ल्स कुले तथा राबर्ट के मर्टन ने भी किये।

2. एक दूसरा महत्त्वपूर्ण क्षेत्र जिससे सामाजिक शोध अनायास ही जुड़ जाता है वह है नयी खोज के द्वारा नये तरीकों से शोध करना। शोध के तरीकों में भी बदलाव लाकर शोध के लिए नयी सामग्री इकट्ठी की जाते हैं। इस प्रकार के शोध में इ० डब्लू बर्गेस ने अपने अध्ययन के दौरान विवाहित युगल कैसे सामाजिक स्तर पर संबंध को सफल रूप से कायम करते हैं। किन विवाहित युगलों को कठिनाई आती है और क्यों इसके बारे में उन्होंने पहले से ही पूर्वानुमान लगाने की सफलतापूर्ण चेष्टा की थी।

   एक दूसरे सामाजिक शोध के अध्ययन में डब्लू० आइ० थोमस ने व्यक्तित्व के अध्ययन के दौरान नये तकनीकि के इस्तेमाल के द्वारा इसका अध्ययन कैसे किया जाता है, इस पर चर्चा की थी। इसके साथ ही उन्होंने फ्लारिया जिननियेकी के साथ यूरोप और अमेरिका के पौलेण्डवासी कृषक के उपर शोध किया। इस पुस्तक में पहली बार पुस्तकालीय शोध और अमूर्त सिद्धान्त के दायरे से बाहर निकलकर एक सैद्धान्तिक ढाँचे का प्रयोग करते हुए

आनुभविक विश्व में पदार्पण किया। आठ वर्ष तक क्षेत्र कार्य का परिणाम यह हुआ कि यह शोध मुख्यतः पौलेण्डवासी प्रवासियों के ऊपर सामाजिक विघटन का एक नया अध्ययन माना गया। पद्धति विज्ञान की द ष्टि से इस खोज ने आनुभविक अनुसंधान की एक नयी विद्या की आधारशिला रखी है। पहली बार इस प्रकार के शोध-कार्य में व्यक्तिगत दस्तावेजों और जीवन इतिहास का प्रयोग कर इसके महत्त्व को उजागर किया गया।

3. एक तीसरा शोध का अध्ययन क्षेत्र वह होता है जहाँ पूर्व निर्धारित सिद्धान्त का परीक्षण या फिर उसे चुनौती दी जाती है। और इस प्रकार के अध्ययन क्षेत्र का महत्त्व इस बात से लगाया जा सकता है कि इस प्रकार के शोध के द्वारा भी नये तथ्यों की पहचान की जाती है जिसके शोध के द्वारा ही अवधारणाओं तथा सिद्धान्तों को पुष्ट करने में मदद मिलती है। उदाहरण के लिए मार्गरेट मीड के द्वारा किये गये अध्ययन का हवाला दिया जा सकता है। मार्गरेट मीड ने भी स्टैनली हाल के सिद्धान्त जिसमें यह कहा गया था कि किशोरावस्था से गुजरने वाले युवा के व्यक्तित्व विकास में 'एक आँधी और तनाव जैसा व्यवहार' स्वाभाविक रूप से आवश्यक स्थिति है- और इसे उनके जैवकीय व्यवहार के महत्त्वपूर्ण लक्षण के रूप में देखा जाना चाहिए। मीड ने समोआ किशोर लड़कियों के अध्ययन में यह पाया कि ये आदिवासी जीवन के सदस्यों में एक अति सामान्य प्रक्रिया है जिसमें उनके व्यक्तित्व विकास के दौरान ऐसा कोई भी आँधी और तनाव का क्षण नह आता। इसलिए मीड ने इसे संस्कृति से जुड़ी प्रक्रिया बतायी और अपने शोध के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि युवाओं व किशोंरों को पश्चिमी संस्कृति की तरह एक अलग समूह का सदस्य नह माना जाता है बल्कि उन्हें पूरे समाज की प्रक्रिया से जुड़ा माना जाता है जहाँ उनके व्यक्तित्व का विकास सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुरूप होता है और संभवतः यही कारण है कि किशोरावस्था से गुजरते हुए उनके जीवन में कोई तनाव का क्षण नह आता है।

मार्गरेट मीड के इस अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि शोध का एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन क्षेत्र पुराने शोध की सत्यता की जाँच करना है। इस प्रकार किसी स्थापित व प्रमाणिक सिद्धान्त को नये शोध के आधार पर गलत भी ठहराया जा सकता है। पुराने तथ्यों के संबंध के आधार पर हमारे ज्ञान असत्य या अपूर्ण या फिर गलत हो सकते हैं जिसे नये तथ्यों के रोशनी में सत्य या पूर्ण मानने की संभावना शोध के आधार पर ही संभव हो पाती है।

4. सामाजिक शोध के अध्ययन क्षेत्र की विशेषता इस बात पर भी निर्भर करती है कि उसके किसी वैज्ञानिक सिद्धान्त को ध्यान में रखकर तथ्यों का विश्लेषण किया जा सके। कभी-कभी तथ्यों के विश्लेषण के लिए नये अध्ययन की भी जरूरत पड़ सकती है और शोध के अध्ययन क्षेत्र में इस प्रकार के अध्ययन करने की संभावना बन जाती है जिसके फलस्वरूप नये अध्ययन विधि की भी खोज हो जाती है।

साथ ही सामाजिक शोध के अध्ययन क्षेत्र में ही सामाजिक समस्याओं की प्रकृति एवं कारणों की खोज करना भी शोध के अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत ही आता है। सामाजिक समस्याएँ भी सामाजिक जीवन का एक अभिन्न अंग है। कोई भी सामान्य समाज सामाजिक समस्याओं से परे नह है। अतः सामाजिक जीवन तथा अन्तर्निहित प्रक्रियाओं व नियमों के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान तब तक पूर्ण नह हो सकता, जब तक सामाजिक समस्याओं के कार्य-कारण सम्बन्धों का भी पता न लगा लिया जाए। इसलिए सामाजिक शोध सामाजिक समस्याओं को भी अपने अध्ययन-क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित करता है। पर इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि सामाजिक शोध सामाजिक समस्याओं को अपने अध्ययन-क्षेत्र के अन्तर्गत इस उद्देश्य से सम्मिलित नह करता है कि उनके उपचारों या सुधार के लिए वह उपायों को सुझाएगा अथवा सामाजिक समस्याओं को हल करने की व्यावहारिक योजना प्रस्तुत करेगा। उसका लक्ष्य तो केवल सामाजिक समस्याओं के कार्य-कारण सम्बन्धों को ढूँढ़ निकालना अथवा उन समस्याओं में अन्तर्निहित प्रक्रियाओं, मानव-व्यवहारों तथा उनके नियम के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना है। पी०वी० यंग ने लिखा है, "सामाजिक शोध व्याधिकीय समस्याओं (pathological problems) से केवल वह तक सम्बद्ध है जहाँ तक वे आधारभूत सामाजिक प्रक्रियाओं, मानव-व्यवहार तथा व्यक्तित्व के विकास अथवा विघटन पर प्रकाश डालते हैं।"

इसके अतिरिक्त नियन्त्रित अवस्थाओं के अन्तर्गत सामाजिक जीवन या घटनाओं के सम्बन्ध में व्यवस्थित अध्ययन के लिए जो प्रायोगक प्रकृति (experimental nature) के अनुसन्धान किए जाते हैं वे सामाजिक शोध के विस्त त क्षेत्र के नवीनतम भाग के अन्तर्गत आते हैं। आधुनिक झुकाव इसी प्रकार के प्रयोगात्मक प्रकृति के अनुसन्धानों की ओर है।

आज यह माना जाता है कि प्राकृतिक व भौतिक विज्ञानों की भाँति सामाजिक विज्ञानों में भी प्रयोगात्मक अनुसंधान सम्भव है। विद्वानों ने इस बात की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है कि सामाजिक शोध का क्षेत्र प्रयोगात्मक अनुसंधानों से परे नह है, अपितु समाज व सामाजिक जीवन एवं घटनाओं के सम्बन्ध में यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिए इस प्रकार के अनुसंधानों को भी इसके क्षेत्र के अन्तर्गत लाना आवश्यक है।

प्रयोगात्मक अनुसंधान की परंपरा भी ई० दर्खिम द्वारा ही शुरू की गयी जिसका उत्कृष्ट उदाहरण उनके प्रसिद्ध पुस्तक आत्महत्या (Suicide) में मिलता है। आगे चलकर अर्नस्ट ग्रीनवुड ने अपनी पुस्तक Experimental Sociology: A Study in Method में 1945 में किया। अपने पुस्तक में उन्होंने नियंत्रित निरीक्षण विधि को प्रयोगात्मक विधि के एक उत्कृष्ट पद्धति के रूप में प्रस्तुत किया। एफ०एस० चेपिन ने भी अपनी पुस्तक Experiemental Designs in Sociological Research में प्रयोग को एक महत्वपूर्ण शोध में अध्ययन क्षेत्र में विस्तार का आधार बनाया है। मानवीय संबंध में अध्ययन में इस प्रकार अध्ययन को प्रयोग से जोड़ने का यह एक उत्तम निर्देशिका साबित हो सकती है।

सामाजिक शोध के अध्ययन क्षेत्र के संबंध में कई विशिष्ट विद्वानों ने समाजशास्त्रीय मंच से अपने विचार व्यक्त किये हैं। उसी के अनुरूप भारतीय समाजशास्त्रियों ने प्रसिद्ध शोध पत्रिका Contribution to Indian Sociology में भी समाजशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र तथा इसके agenda का उल्लेख भी किया है। अमेरिकन समाजशास्त्रीय समुदाय ने अमेरिकन 'सोश्योलॉजीकल सोसाइटी' ने सामाजिक शोध के क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित अध्ययन-विषयों को सम्मिलित करने की पेशकश की है:

(i) मानव-प्रकृति तथा व्यक्तित्व का अध्ययन।

(ii) जनसमूह तथा सांस्कृतिक समूह का अध्ययन।

(iii) परिवार की प्रकृति, अन्तर्निहित नियम, संगठन व विघटन का अध्ययन।

(iv) सामाजिक संगठन तथा संस्थाओं का अध्ययन।

(v) जनसंख्या तथा प्रादेशिक समूहों का अध्यन जिनके अन्तर्गत एक क्षेत्र विशेष में निवास करने वाली जनसंख्या तथा उस क्षेत्र में विद्यमान सामुदायिक परिस्थितियों का अध्ययन सम्मिलित है।

(vi) ग्रामीण समुदायों का अध्ययन। इसके अन्तर्गत ग्रामीण जनसंख्या; ग्रामीण परिस्थिति, ग्रामीण व्यक्तित्व व व्यवहार-प्रतिमानों और उनमें अन्तर्निहित धाराओं तथा नियमों एवं ग्रामीण संगठन और संस्थाओं का अध्ययन सम्मिलित है।

(vii) सामूहिक व्यवहारों का अध्ययन इसके अन्तर्गत समाचार-पत्र, मनोरंजन, त्यौहारों का मानना, प्रचार, पक्षपात, जनमत, चुनाव, युद्ध, क्रान्ति आदि सामूहिक व्यवहारों का अध्ययन आता है।

(viii) समूहों में पाए जाने वाले संघर्ष तथा व्यवस्थान (accommodation) का अध्ययन है। इसके अन्तर्गत धर्म का समाजशास्त्र (Sociology of Religion), शिक्षा का समाजशास्त्र (Educational Sociology), न्यायालय तथा अधिनियम, सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक विकास का अध्ययन आता है।

(ix) सामाजिक समस्याओं, सामाजिक व्याधिकी (Social Pathology) तथा सामाजिक अनुकूलन (Adjustment) का अध्ययन। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित विषयों का अध्ययन आता है-निर्धनता तथा पराधीनता (dependency), अपराध व बाल-अपराध, स्वास्थ्य, मानसिक व्याधि (Mental disease), स्वास्थ्य-रक्षा आदि।

(x) सिद्धान्त तथा पद्धतियों में नवीन सामाजिक नियमों की खोज, पुराने सिद्धान्त तथा विधियों की पुनःपरीक्षा, सामाजिक जीवन में अन्तर्निहित सामान्य नियम व प्रक्रियाएँ तथा नवीन पद्धतियों व प्रविधियों (Techniques) की खोज आदि सम्मिलित हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सामाजिक शोध का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है और मानव-समाज व जीवन का शायद ही कोई पक्ष ऐसा हो जो कि इसके क्षेत्र के अन्तर्गत न आता हो। वास्तविकता तो यह है कि सामाजिक शोध के क्षेत्र की कोई सीमा-रेखा निश्चित व अन्तिम रूप में खींचना न तो सम्भव है और न ही व्यावहारिक।

सामाजिक अनुसंधान का महत्त्व

(Importance of Social Research)

सामाजिक शोध के महत्व को समझने से पहले यह जान लेना भी आवश्यक है कि शोध भी कई प्रकार के होते हैं। यों तो पहले ही इस बात का जिक्र किया जा चुका है कि मौलिक शोध तथा व्यावहारिक प्रकार के शोध का समाजिक अनुसंधान में प्रयोग होता है। परंतु इनके महत्त्व को समझने के लिए इन दो प्रकार के शोध का विस्तार से वर्णन करना आवश्यक है।

1. **मौलिक शोध** (Fundamental Research)-इस प्रकार के सामाजिक शोध में सामाजिक जीवन व घटनाओं के सम्बन्ध में मौलिक सिद्धान्तों व नियमों का अनुसन्धान किया जाता है और इस अनुसन्धान का उद्देश्य नीवन ज्ञान की प्राप्ति व व द्धि तथा पुराने ज्ञान की पुनःपरीक्षा द्वारा उसका शुद्धिकरण होता है। इस प्रकार की खोज में नवीन तथ्यों व घटनाओं का अध्ययन किया जाता है और साथ ही इस बात की भी जाँच की जाती है कि जो प्रचलित पुराने सिद्धान्त व नियम हैं वे वर्तमान परिस्थितियों के सन्दर्भ में ठीक हैं या नहीं। हो सकता है कि नवीन परिस्थितियों में भी पुराने नियम व सिद्धान्त खरे उतरें, पर यह भी हो सकता है कि नवीन परिस्थितियों के अनुसार उनमें कुछ आवश्यक सुध ाार या हेरफेर करना जरूरी हो जाए। यह भी हो सकता है कि नवीन परिस्थितियों की माँग नवीन सिद्धान्त व नियम हों। मौलिक शोध के अन्तर्गत नए सिद्धान्तों व नियमों की खोज नवीन परिस्थितियों तथा नवीन समस्याओं के उत्पन्न होने पर की जाती है। ऐसा इस उद्देश्य से किया जाता है कि इन नीवन सिद्धान्तों का वर्तमान परिवर्तित परिस्थितियों के साथ अधिकाधिक मेल बैठ जाए और हम उनके सम्बन्ध में अपने नीवनतम ज्ञान के सहारे विद्यमान परिस्थितियों की चुनौती का सामना अधिक सफलतापूर्वक कर सकें। इस द ष्टिकोण से यह स्पष्ट है कि मौलिक शोध की प्रकृति आधारभूत रूप में सैद्धान्तिक है क्योंकि इसका एकमात्र उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति, व द्धि तथा शुद्धिकरण होता है। सत्य की खोज करना इसका प्रमुख लक्ष्य है और इसीलिए समस्त घटनाओं के अनुसन्धान में यह केवल इसी लक्ष्य की प्राप्ति के प्रति सजग व प्रयत्नशील रहता है। जब यह किसी घटना का अध्ययन करता है तो उसके सम्बन्ध में उसे ज्ञान की प्राप्ति होती है, जब वह नवीन घटनाओं के सम्बन्ध में अनुसन्धान करता है तो विद्यमान ज्ञान की व द्धि होती है और जब वह परिवर्तित परिस्थितियों के सन्दर्भ में पुराने नियमों तथा सिद्धान्तों की फिर से जाँच करता है तो उनके सम्बन्ध में उसके ज्ञान में आवश्यक सुधार या हेर-फेर हो जाता है। इस प्रकार फिर हम इसी निष्कर्ष पर आते हैं कि अपने अनुसंधानों के द्वारा जो सामाजिक शोध का ज्ञान प्राप्ति, परिमार्जन व परिवर्द्धन को अपना लक्ष्य मानता है उसे मौलिक शोध कहते हैं।

2. **व्यावहारिक शोध** (Applied Research)-पी. वी. यंग ने लिखा है कि एक निश्चित सम्बन्ध लोगों की प्राथमिक आवश्यकताओं तथा कल्याण से होता है। वैज्ञानिक की मान्यता यह है कि समस्त ज्ञान सारभूत रूप से उपयोगी हो इस अर्थ में है कि वह एक सिद्धान्त के निर्माण में या एक कला को व्यवहार में लाने में सहायक होता है। सिद्धान्त तथा व्यवहार आगे चलकर बहुधा एक-दूसरे में मिल जाते हैं। इसी मान्यता के आधार पर सामाजिक शोध का जो दूसरा प्रकार प्रकट होता है उसे ही हम व्यवहारिक शोध कहते हैं। व्यवहारिक शोध का सम्बन्ध सामाजिक जीवन के व्यवहारिक शोध कहते हैं। व्यवहारिक शोध का सम्बन्ध सामाजिक जीवन के व्यवहार पक्ष से होता है; और वह सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में ही नहीं अपितु सामाजिक नियोजन, सामाजिक अधिनियम, स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी नियम, धर्म, शिक्षा, न्यायालय, मनोरंजन आदि विषयों के सम्बन्ध में भी अनुसंधान करता है और इनके सम्बन्ध में कारण-सहित व्याख्या व तर्कयुक्त ज्ञान से हमको सम द्ध करता है। पर इसका तात्पर्य यह नहीं है कि व्यावहारिक शोध का कोई सम्बन्ध समाज-सुधार करता है। पर इसका तात्पर्य यह नहीं है कि व्यावहारिक शोध का कोई सम्बन्ध समाज-सुधार से, सामाजिक व्याधियों के उपचार से, सामाजिक अधिनियमों को बनाने या सामाजिक नियोजनों को व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत करने से होता है। वह स्वंय यह सब-कुछ नहीं करता है; यह काम तो समाज-सुधारक, राष्ट्रीय नेता, प्रशासकों तथा अधिकारियों का होता है। व्यावहारिक शोध का काम केवल व्यावहारिक जीवन से सम्बद्ध विषयों तथा समस्याओं के सम्बन्ध में हमें यथार्थ ज्ञान देना है।

   सामाजिक जीवन में व्यावहारिक शोध के महत्व को दर्शाते हुए भी स्टाउफर ने लिखा है कि यदि समाज-विज्ञान को अपना महत्व बढ़ाना है तो उसको अपने व्यवहारिक पक्ष पर बल देना होगा। उदाहरणार्थ, यदि समाज-विज्ञान स्पष्ट

रूप से यह दर्शा सके कि एक परामर्श देने वाली व्यवस्था (Counselling sytem) सार्वजनिक स्कूलों में किस भाँति सर्वाधिक प्रभावपूर्ण हो सकती है तो यह स्पष्ट ही है कि समाज विज्ञान के महत्व की स्वीकृति बढ़ जायेगी।

सामाजिक अनुसंधान में अवधारणा
(Concept in Social Research)

किसी भी सामाजिक अनुसंधान में अवधारणा का अपना अलग महत्व होता है। शोधकर्ता तथ्यों के अवलोकन तथा संकलन कर उन तथ्यों को शब्दों के द्वारा अभिव्यक्त करना चाहता है। तथ्यों की वैज्ञानिक अभिव्यक्ति के लिए अवधारणाओं की मदद ली जाती है। ये अवधारणाएं एक सोचने की अमूर्त प्रक्रिया है जिसके द्वारा घटनाओं व तथ्यों का वर्णन हो पाता है। अवधारणाओं की मदद से किसी घटना, प्रक्रिया या तथ्य का संक्षेप में वर्णन संभव हो पाता है। गुडे तथा हाट ने इसलिए अवधारणा को एक तार्किक मानवीय सोच की प्रक्रिया बताया है जो हमारे सोचने समझने की नैसर्गिक प्रक्रिया है। यह हमारे ज्ञान व सोच की एक मानसिक तथा अमूर्त प्रक्रिया है जिसका महत्व सिद्धान्त के संदर्भ में कॉफी महत्वपूर्ण हो जाता है। तथ्य की तरह ही यह एक अमूर्त प्रक्रिया है।

जब शोधकर्ता तथ्यों में अन्तः सम्बन्ध को देखता है अथवा एक निश्चित घटना या व्यवहार प्रतिमान को वह प थक करने में सफल होता है तो वह उस सम्पूर्ण स्थिति को अति संक्षेप में एक दो शब्द की सहायता से अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है। तथ्यों के एक वर्ग की इस संक्षिप्त अभिव्यक्ति को ही विज्ञान में अवधारणा (Concept) कहा जाता है। पी०वी० यंग ने लिखा है कि तथ्यों (data) के प्रत्येक नए वर्ग को, जिसे कि अन्य वर्गो से कुछ निश्चित विलक्षणताओं के आधार पर अलग कर लिया गया हो, एक नाम या एक लेबल दे दिया जाता है जो कि अवधारणा कहलाता है। वास्तव में एक अवधारणा तथ्यों के एक वर्ग या समूह की एक संक्षिप्त परिभाषा हैं। 'कक्षा पलायन' (Truancy) 'संस्कृति', 'नेत त्व', 'समाज' आदि अवधारणाओं के ही उदाहरण हैं। अवधारणाओं के कुछ परिभाषा को द्वारा समझना आवश्यक है।

सैरैग (Scharag) के अनुसार, 'अवधारणाएँ व शब्द या संकेत होते हैं जो सिद्धान्त की शब्दावली प्रदान करते हैं एवं उसकी विषयवस्तु को बतलाते हैं'। अर्थात् सिद्धान्त के अभिव्यक्ति का एक उत्तम जरिया है अवधारणा।

फेचरचाइल्ड ने भी इसी बात को वैज्ञानिक संदर्भ द्वारा जोड़कर देखा है। उनके अनुसार ''अवधारणाएँ वे विशिष्ट मौखिक संकेत हैं जो कि वैज्ञानिक निरीक्षण व चिन्तन के आधार पर निकाले गए सामान्यीकृत (generalized) विचारों को दिए जाते हैं।''

इस प्रकार अवधारणा द्वारा तथ्यों की वैज्ञानिक विवेचना की जाती है। इसकी विशेषताएँ निम्न हैः

विशेषताएँ

(i) अवधारणा की सबसे महत्वूपर्ण विशेषता यह है कि यह लोगों के सांझे अनुभव से जुड़ी होती है। इसीलिए अवधारणाओं के आधार पर जो बातें अभिव्यक्त की जाती हैं उसे सामान्य रूप से सभी समझते हैं। अमेरीकन समाजशास्त्रियों द्वारा भी फर्डिनाड टानिज द्वारा प्रयोग में लाये गये दो जर्मन भाषा के शब्द Gesselshaft तथा Gemeinshaft का इस्तेमाल Community और Society के लिए किया जाता है। ये दोनों मूलभूत अवधारणाएं हैं जो समाज के विविध स्वरूप को दर्शाते हैं। मैक्स वेबर के द्वारा प्रयुक्त एक और अवधारणा Ideal Type का प्रयोग कर यह कहा जा सकता है कि ये दोनों अवधारणाएं आदर्श प्रारुप (Ideal Type) हैं। इनका प्रयोग जर्मनी के ग्रामीण तथा औद्योगिक समाज में हुए परिवर्तन को दर्शाता है।

(ii) जिन शब्दावली व अवधारणा का प्रयोग एक वैज्ञानिक अवधारणा के रूप में किया जाता है उसे दूसरे संदर्भ में भी प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए संस्कृति (Culture) शब्द का प्रयोग साधारणतया अच्छे व्यवहार से किया जाता है जबकि इस शब्द का प्रयोग मानवशास्त्र (Anthropology) में समाजिक धरोहर (Social Heritage) से भी किया जाता है।

(iii) एक शब्द के द्वारा विभिन्न स्थितियों का वर्णन किया जा सकता है। समाजशास्त्र में राबर्ट के मर्टन ने प्रकार्य (function) शब्द के विविध संदर्भ में प्रयोग किये जाने का वर्णन किया है। इसके पहले रेडक्लिफ ब्राउन ने भी अपनी पुस्तक (Structure and Function in Pimitive Society) में इस शब्द के विभिन्न संदर्भों में इस्तेमाल किये जाने का विस्तार

से वर्णन किया है। इस अवधारणा को कई बार आवश्यकता (Needs) या जीवन के स्तित्व को बनाये रखने के आवश्यक शर्त (Necessary Conditions of Existence) या दुर्खिम के द्वारा प्रर्युक्त किये गए इसके संस्थात्मक संदर्भ से जोड़कर इसका प्रयोग किया गया है।

(iv) एक शब्द व अवधारणा के द्वारा विभिन्न परिस्थितियों के वर्णन के साथ ही कई बार उस शब्द के ही विविध पर्यायवाची शब्द (Synonyms) का भी प्रयोग एक ही संदर्भ में चित्रित करने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए Goode & Hatt ने चार ऐसे अवधारणाओं से जुड़े विभिन्न शब्दावली का उल्लेख किया है जिन्हें संरचना-प्रकार्य, (Structure Function) आदर्श-यथार्थ (Ideal-Real), औपचारिक-अनौपचारिक (Formal-informal) तथा प्राथमिक-द्वित्तीय (Primary-secondary) शब्द समूह मुख्य है और इन चारों शब्द समूहों के अर्थ एक दूसरे के पूरक के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

(v) शब्द व अवधारणाएं ऐसे भी हो सकते हैं जिनका कोई तात्कालिक आनुभविक (Immediate empirical) अर्थ नहीं होता है। इस संदर्भ में इसके दो अर्थ हो सकते हैं। कुछ वैज्ञानिक सिद्धान्त ऐसे भी होते हैं जिनका सीधा अवलोकन नहीं किया गया हो परंतु इस प्रकार के अवधारणा का एक तार्किक संबंध हो सकता है जिसके कारण अवधारणाओं के बीच के संबंध को समझा जा सकता हे। समाजिक संरचना (Social Structure) एक ऐसी ही अवधारणा है जिसका उल्लेख कई संदर्भ में किया जाता है। परन्तु इसके बावजूद भी यह कहा जा सकता है कि अवधारणाओं का एक आनुभाविक प्रयोग (empirical reference) भी होता है जो उसके अर्थ को वैज्ञानिक आधार देता है।

(vi) अवधारणाओं के अर्थ भी बदल सकते हैं। सभी वैज्ञानिक अवधारणाओं के अर्थ में इस प्रकार के बदलाव आये हैं। शुरू में उस शब्द का प्रयोग किसी खास तथ्य के संदर्भ में किया गया और बाद में उस शब्द का अर्थ दूसरे संदर्भ को भी दर्शाता है। या फिर शब्द का उस अवधारणा में परिवर्तन लाकर उसे और भी व्यापक किया गया है। उदाहरण के लिए जाति में गतिशीलता को दर्शाने के लिए भारतीय समाजशास्त्री एम०एन० श्रीनिवास ने (Brahmanisation) शब्द का प्रयोग किया जिसके द्वारा यह बताने का प्रयास किया गया था कि ब्राह्मण जाति के लोगों के मानकदंड को निम्न जाति के लोग अपनाने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार वे अपने स्थिति को ऊँचा उठाना चाहते हैं। बाद में दूसरे समाजशास्त्री ने इस शब्द को संकीर्ण बताया और यह सुझाव दिया कि कुछ ऐसे भी गाँव है जहाँ क्षत्रीय जाति के लोगों का प्रभुत्व है और उन जगहों पर क्षत्रिय जाति के मानदंडों को आदर्श मानकर निम्न जाति के लोग उसे अपनाने की कोशिश करते हैं। इस प्रकार की गतिशीलता को दर्शाने के लिए एम०एन० श्रीनिवास ने प्रभावशाली जाति (Dominant caste) शब्द का प्रयोग किया और जाति से संबंधित इस प्रकार की गतिशीलता को दर्शाने के लिए संस्कृतिकरण (Sanskritisation) शब्द का प्रयोग किया। इस प्रकार अवधारणा का अर्थ सदैव एक जैसा नहीं होता है उसमें भी परिवर्तन आते हैं जिसे अभिव्यक्त करने के लिए अवधारणाओं में बदलाव या परिवर्तन लाना पड़ता है।

संक्षेप में अवधारणा की निम्न विशेषताओं का उल्लेख कर सकते हैं

(i) अवधारणा तथ्यों के एक वर्ग या समूह की एक ऐसी संक्षिप्त परिभाषा होती है जिसे कि एक-दो शब्दों में व्यक्त किया जाता है।

(ii) अवधारणा किसी घटना या व्यवहार प्रतिमान की सम्पूर्ण व्याख्या नहीं अपितु उसका एक संकेत मात्र होता है।

(iii) अवधारणा का निर्माण वैज्ञानिक निरीक्षण या चिन्तन के आधार पर होता है। यह कोई अटलकपच्चू या अनुमान-मात्र नहीं होता।

(iv) अवधारणा का, इस अर्थ में, एक तार्किक आधार होता है और उसका निर्माण प्रत्यक्ष ज्ञान, वास्तविक निरीक्षण व यथार्थ अनुभव के बल पर होता है।

(v) अवधारणा अपने में अर्थयुक्त होता है क्योंकि यह तथ्यों के एक निश्चित समूह या वर्ग में पाई जाने वाली विलक्षणताओं का द्योतक होता है।

(vi) अवधारणा स्वयं सिद्धान्त का संक्षिप्त रूप नहीं होता अपितु तथ्यों के एक वर्ग की विशेषताओं को संक्षेप में बताने वाला होता है।

(vii) अवधारणा में आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी होता रहता है। नए ज्ञान के संचय होने, वैज्ञानिक विशेष के द ष्टिकोण में परिवर्तन होने अथवा तथ्यों के पारस्परिक सम्बन्धों का कोई नया स्वरूप प्रकट होने पर अवधारणाओं में परिवर्तन हो जाता है।

अवधारणा का महत्त्व
(Importance of Concept)

अवधारणा का महत्त्व इसी से स्पष्ट हो जाता है कि यह तथ्यों के एक वर्ग या समूह की एक संक्षिप्त परिभाषा होती है। अर्थात् अवधारणा के माध्यम से एक घटना या प्रक्रिया को केवल दो-एक शब्दों द्वारा सफलतापूर्वक समझाया जा सकता है। उदाहरणार्थ, यदि विद्यार्थियों के एक वर्ग में कक्षा से भाग जाने की प्रव त्ति सामान्य रूप से पाई जाती है तो इस सम्पूर्ण स्थिति को 'कक्षा-पलायन' (Truancy) की अवधारणा द्वारा समझाया जा सकता है।

अवधारणाओं के महत्त्व को समझाते हुए गूड और हॉट ने लिखा है कि अवधारणा को विकसित करने की प्रक्रिया इन्द्रियजनित बोध को प्राप्त करने व उससे निष्कर्ष निकालने में सहायक सिद्ध होती है। इस प्रकार तथ्यों के एक वर्ग या समूह के गुणों को समझना, उनका अध्ययन करना, उन्हें व्यवस्थित व प थक करना सम्भव होता है। इस प्रकार तथ्यों के एक समूह में पाए जाने वाले गुणों को एक नाम दे देने से विचार आगे बढ़ सकता है। अतः विचारों को अपनाने के लिए अवधारणाओं का निर्माण आवश्यक है। संक्षेप में, अवधारणा परिस्थिति या घटना विशेष का एक संक्षिप्त परिचय होती है जिसका कि प्रयोग सुविधा के द ष्टिकोण से तथा उस परिस्थिति या घटना विशेष के सम्बन्ध में एक सामान्य विचार-श्र ंखला के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना
(Hypothesis in Social Research)

किसी भी शोध व अनुसंधान को एक सही निर्देश व आधार प्रदान करने के लिए एक सैद्धान्तिक आधार उसका प्रारूप होना आवश्यक है। उपकल्पना एक ऐसी ही स्थिति है जो शोधकर्ता को खोज करने से पूर्व कुछ अनुमान वा कुछ वैज्ञानिक सोंच को आधार मानकर काम करने के लिए प्रेरित करता है। अगर हम किसी व्यक्ति को देखते हैं कि वह जमीन में एक सीमित क्षेत्र को खोद रहा है तो संभव है वह यह मानकर चल रहा हो कि कुछ दूर तक खुदाई करने के पश्चात उसे पानी मिल जाये। अर्थात उद्देश्यविहिन कार्य करना वैज्ञानिक विधि का कारण नहीं है। कुछ कार्य उद्देश्य को ध्यान में रखकर किये जाते हैं। संभव है हमारा अनुमान सच हो या फिर वह गलत भी हो सकता है। जंगल में धुआँ उठते देख या रोशनी को देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि धुआँ उठने वाले जगह पर या रात में जहाँ रोशनी हो रही है वहाँ कुछ लोग बसते हों। वहाँ एक कस्बा होगा जहाँ कुछ लोगों से मिलने की संभावना बनती है।

इस वैज्ञानिक पद्धति का सदुपयोग तब तक नहीं हो सकता जब तक हमें अपने अध्ययन-विषय के सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ आरम्भिक ज्ञान एवं सामान्य अनुभव न हो। इस आरम्भिक ज्ञान व अनुभव के आधार पर हम अपने अध्ययन-विषय के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में एक सामान्य अनुमान पहले से ही लगा सकते हैं। यह सामान्य अनुमान शोधकर्ता के लिए एक मार्ग-निर्देशक बन जाता है और शोधकर्ता का ध्यान कुछ निश्चित व आवश्यक तथ्यों पर ही केन्द्रित करके अनुसन्धान की दिशा को निर्धारित करता है और उसे अनिश्चितता के अन्धकार में भटकने से बचा देता है। उदाहरणार्थ, यदि हमारा अध्ययन-विषय 'बाल-अपराध' है तो हम अपने आरम्भिक ज्ञान व सामान्य अनुभव के आधार पर एक कामचलाऊ अनुमान यह कर सकते हैं कि निर्धनता व टूटे परिवार ही बाल-अपराध को जन्म देने का प्रभावशाली कारक हैं। उस अवस्था में हमारा यह अनुमान हमारे अध्ययन-कार्य में अत्यन्त सहायक सिद्ध होगा क्योंकि हमें यह निश्चित रूप में पता होगा कि हमें आर्थिक तथा पारिवारिक कारकों पर ध्यान केन्द्रित करना है। उन्हीं से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करना है और फिर देखना है कि जो 'अनुमान' हमने आरम्भ में लगाया था वह सही था या गलत। इसी आरम्भिक सामान्य तथा कामचलाऊ अनुमान को जो कि आगे के अध्ययन-कार्य का आधार और वैज्ञानिक के लिए एक सहारा बन जाता है। इसे कामचलाऊ प्राक्कल्पना या उपकल्पना (working hypothesis) कहते हैं। पी०वी० यंग के अनुसार कामचलाऊ प्राक्कल्पना का निर्माण वैज्ञानिक पद्धति का प्रथम चरण (first step) है।

अतः हम कह सकते हैं कि ''उपकल्पना का निर्माण वैज्ञानिक अनुसन्धान का अन्तिम लक्ष्य नहीं है।'' अर्थात् अपने उपकल्पना को सच प्रमाणित करने के उद्देश्य से वैज्ञानिक अनुसन्धान-कार्य में उपकल्पना का निर्माण नहीं किया जाता। वैज्ञानिक अनुसन्धान का अन्तिम लक्ष्य तो सच को ढूँढ निकालना है और सत्य की खोज वास्तविक तथ्यों के आधार पर ही सम्भव है, न कि उपकल्पना के आधार पर। उपकल्पना का निर्माण तो केवल इसलिए करते हैं कि अध्ययन-कार्य में हमें निश्चित रूप से क्या करना है उसके सम्बन्ध में हमें एक अन्दाजा लग जाए और हम एक ही समय में एक ही विषय से सम्बन्धित सभी पहलुओं पर अपने ध्यान को बिखरा देने की गलती न करके अपने अनुसन्धान-क्षेत्र को सीमित करके अपने उपकल्पना या प्राक्कल्पना के अनुसार अध्ययन-विषय के एक विशिष्ट पहलू पर अपना ध्यान केन्द्रित करें। और उसी से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करें। इस प्रकार उपकल्पना हमें अध्ययन-कार्य के दौरान इधर-उधर भटकने से बचाता है और हम एक निश्चित दिशा में सत्य की खोज में आगे बढ़ सकते हैं। वास्तविक तथ्यों को एकत्रित कर लेने के पश्चात् हम यह पाएँ कि अपने अध्ययन-विषय के सम्बन्ध में जिस उपकल्पना का निर्माण हमने किया था, वह गलत है और वास्तविक तथ्यों के सन्दर्भ में उसे बदलने की आवश्यकता है। अतः प्राक्कल्पना (उपकल्पना) के निर्माण के बाद हम अपने अध्ययन-कार्य के दौरान विषय से सम्बन्धित कुछ वास्तविक तथ्यों को एकत्रित करते हैं और फिर उन तथ्यों के आधार पर उस उपकल्पना की परीक्षा करते हैं कि वह सही है अथवा गलत। दूसरे शब्दों में, वास्तविक तथ्यों के आधार पर उपकल्पना को सही या गलत प्रमाणित करना वैज्ञानिक अनुसन्धान का अन्तिम लक्ष्य है, न कि केवल उपकल्पना का निर्माण। उपकल्पना का निर्माण कुछ वैज्ञानिक उद्देश्यों की पूर्ति करने में मदद करता है अर्थात् अनुसन्धान-कार्य में सहायक सिद्ध होता है।

प्राक्कल्पना की परिभाषा

(Definition of Hypothesis)

लुण्डबर्ग ने लिखा है ''प्राक्कलपना एक सामयिक अथवा कामचलाऊ सामान्यीकरण या निष्कर्ष है जिसकी सत्यता की परीक्षा अभी बाकी है। बिल्कुल आरम्भिक स्तरों पर प्राक्कल्पना कोई भी अटकलपच्चू, अनुमान, कल्पनात्मक विचार, सहजज्ञान (Intuition) या और कुछ हो सकता है जो कि क्रिया या अनुसन्धान का आधार बन जाता है।''

उपकल्पना की व्याख्या करते हुए पी. वी यंग ने लिखा है कि अपने तथ्यों के विषय में सामान्य ज्ञान के आधार पर एक वैज्ञानिक प्रयत्न व भूलचूक की अथवा परीक्षण द्वारा भूल-सुधार की पद्धति (trial and error method) के द्वारा उन विशिष्ट कारकों को छांट लेता है जो कि अध्ययन किए जाने वाली समस्याओं पर रोशनी डाल सकें।

उपकल्पना के स्रोत

(Sources of Hypothesis)

उपकल्पना का स्रोत अनुसन्धानकर्त्ता की अपनी अन्तर्दृष्टि, कोरी कल्पना, विचार या अनुभव हो सकता है। इस द ष्टिकोण से उपकल्पना का स्रोत अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं ही हो सकता है। स्वयं अनुसन्धानकर्त्ता के अतिरिक्त इसका बाहरी स्रोत भी हो सकता है। लुण्डबर्ग (Lundberg) ने लिखा है कि एक फलप्रद प्राक्कल्पना की खोज में हम कविता, साहित्य, दर्शन, समाजशास्त्र के विस्त त वर्णनात्मक साहित्य (descriptive literature) मानवजातिशास्त्र (ethonology) कलाकारों के काल्पनिक सिद्धान्तों या उन गम्भीर विचारकों के सिद्धान्तों की सम्पूर्ण दुनिया में विचरण कर सकते हैं जिन्होंने कि मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों के गहन अध्ययन-कार्य में अपने को नियोजित किया है। जीवन के अनुभव भी प्रमुख स्रोत हो सकते हैं।

गूड तथा हॉट (Goode and Hatt) ने उपकल्पनाओं के चार स्रोतों का उल्लेख किया है-

1. **सामान्य संस्कृति (General Culture)**-सामान्य संस्कृति, जिसमें कि एक विज्ञान पनपता है, विज्ञान की अनेक प्राक्-कल्पनाओं का एक आधार बन जाती है। दो विपरीत उदाहरणों द्वारा इस बात को सरलता से समझा जा सकता है। अमेरिकन संस्कृति में व्यक्तिगत सुख, गतिशीलता (mobility) तथा प्रतिस्पर्धा (competition) पर अत्यधिक बल दिया जाता है और ये सभी अमेरिकन समाज व उसके सामाजिक सम्बन्धों के अभिन्न अंग व उल्लेखनीय विशेषताएँ बन जाती हैं। इसके विपरीत, भारतीय संस्कृति में सामाजिक जीवन व सम्बन्धों पर गांधीवादी आदर्श, जाति-प्रथा, संयुक्त परिवार आदि का गहरा प्रभाव देखने को मिलता है।

अतः भारतीय संस्कृति में पले किसी भी समाजशास्त्री के लिए जाति-प्रथा के किसी भी पहलू के सम्बन्ध में प्राक्कल्पना का निर्माण करना कठिन नहीं है।

2. **वैज्ञानिक सिद्धांत (Scientific theories)**-गूड तथा हॉट के अनुसार प्राक्कल्पनाओं का जन्म स्वयं विज्ञान में होता है। प्रत्येक विज्ञान में विभिन्न विषयों से सम्बद्ध अनेक सिद्धान्त होते हैं। इन सिद्धान्तों से एक विषय के विभिन्न पहलूओं के सम्बन्ध में हमें जानकारी प्राप्त होती है। यह जानकारी हमारे वर्तमान शोध-कार्य का आधार बन सकती है। उदाहरणार्थ, जाति-प्रथा के व्यावसायिक सिद्धान्त (Occupational theory) से यह प्राक्कल्पना बनाई जा सकी कि 'पेशा और केवल पेशा ही भारतीय जाति-प्रथा की उत्पत्ति का कारण था। परंतु यदि पेशों की ऊँचाई-नीचाई ही जाति-व्यवस्था में पाए जाने वाले ऊँच-नीच के संस्तरण का आधार होती हो जाति-प्रथा उन सभी समाजों में देखने को मिलती, जहाँ भी पेशों के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण (social stratification) पाया जाता है। अतः उन कल्पनाओं के निर्माण में वैज्ञानिक सिद्धान्तों के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

3. **सादृश्य (Analogy)**-सादृश्य प्रायः उपयोगी प्राक्कल्पनाओं के महत्त्वपूर्ण स्रोत बन सकते हैं। उदाहरणार्थ, पेड़-पौधों पर एक परिस्थिति विशेष का गहरा प्रभाव पड़ता है, यह ज्ञान मानव के सम्बन्ध में भी इस प्राक्कल्पना को जन्म दे सकता है कि पेड़-पौधों की भाँति मानव-जीवन भी परिस्थिति विशेष ये प्रभावित होता है। हर्बर्ट स्पेन्सर (Herbet Spencer) ने उद्भव के सिद्धान्त में मनुष्य और समाज के बीच में संबंध को समझाने के लिए साहित्य का प्रयोग किया है।

4. **व्यक्तिगत अनुभव (Personal experience)**-अनुसन्धानकर्ता का व्यक्तिगत अनुभव भी प्राक्कल्पनाओं का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। लॉम्ब्रोसो (Lombroso) की 'जन्मजात अपराधी प्ररूप' (inborn cirminal type) की प्राक्कल्पना सैनिक शिविर के सर्जन के रूप में लॉम्ब्रोसो के अपने अनुभवों की ही उपज थी उसी प्रकार सन् 1901 में होने वाली जनगणना के अधीक्षक (Census Superintendent) के रूप में सर हर्बर्ट रिज़ले (Sir Hirbert Risley) ने जिस विशेष ढंग से भारतीय जनता को देखा और उनके बारे में अनुभवों को प्राप्त किया, वह उनके द्वारा प्रस्तुत प्रजातीय सिद्धान्तों की आधारशिला बनी।

इस प्रकार उपकल्पना के कई स्रोत हो सकते हैं जिसका वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सकता है।यह आवश्यक हो जाता है कि भ्रामक, अस्पष्ट तथा पूर्वधारणाओं पर आधारित वाक्यों को स्पष्ट, युक्त तथा उसे वैज्ञानिक बनाया जाये।

प्रकार

समाजशास्त्र में उपकल्पना के कई प्रकारों का वर्णन किया जाता है। गुड तथा हॉट ने उनके अमूर्त प्रकृति को ध्यान में रखकर कई प्रकारों का वर्णन किया है। अर्थात् उनके अमूर्त प्रकृति को ध्यान में रखकर उनके प्रकारों की चर्चा की जा सकती है। गुड तथा हाट ने इसके तीन स्तर की मुख्य रूप से व्याख्या की है-

1. कुछ उपकल्पनाएं आनुभविक एकरूपता को चित्रित करते हैं। यह उपकल्पनाएं अक्सर सामान्य ज्ञान पर आधारित वकतव्य को ही वैज्ञानिक कसौटी पर जाँचने का प्रयास करते हैं। किसी खास क्षेत्र का सर्वेक्षण कर उसके क्षेत्र के समस्या के बारे में जनमानस की सामान्य धारणा का मूल्यांकन किया जा सकता है। इन समस्याओं के मूल्यांकन में जो सामान्य ज्ञान पर आधारित अवलोकन किये गये हैं उनका भी महत्त्व हो सकता है। इस प्रकार के कई आनुभविक एकरूपता (Empirical Uniformilies) समाजशास्त्रीय अध्ययन में पाये जाते हैं।

2. कुछ उपकल्पनाएं ऐसी होती है जिसका उद्देश्य विश्लेषणात्मक कारक तत्वों के बीच संबंध स्थापित करना होता है। आदर्श प्रारूप के निर्माण में इस प्रकार की उपकल्पना के द्वारा एक खास प्रकार के संबंध की पहचान निरीक्षण पर आधारित होता है। जहाँ अनुभाविक एकरूपता में अवलोकन के द्वारा सामान्य अंतर की पहचान होती है वहीं विश्लेषणात्मक कारक तत्वों में संबंध को पहचानने का एक खास तरीका प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ अत्यधिक जन्म दर का संबंध धन, समुदाय के आकार तथा धर्म से जोड़कर किया जा सकता है। इन तत्वों के साथ जन्म दर का खास संबंध स्थापित कर उपकल्पना का एक आदर्श प्रारूप तैयार किया जाना संभव है। वास्तव में इस प्रकार के आदर्श प्रारूप तैयार करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि तीन कारक तत्वों में दो को नियंत्रित कर उसका संबंध तीसरे के साथ देखना चाहिए। संभव है तीसरे कारक तत्वों के अतिरिक्त कुछ और भी कारक तत्वों के विश्लेषण की आवश्यकता पड़े।

उपर्युक्त विवेचन के बाद तीन मुख्य विचार बिन्दु हमारे सामने परिलक्षित होते हैं।

(i) एक सफल शोध के लिए एक उपकल्पना का होना आवश्यक शर्त है।

(ii) उपकल्पना के निर्माण को विशेष महत्व दिया जाना चाहिए क्योंकि इसी के आधार पर उसके सिद्धान्त के साथ संबंध को स्थापित किया जा सकता है। परंतु इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि भ्रामक, अस्पष्ट तथा पूर्वधारणाओं पर आधारित वाक्यों को स्पष्ट, युक्त तथा उसे वैज्ञानिक बनाया जाये।

(iii) उपकल्पना को विभिन्न प्रकार के अमूर्त विचारों से जोड़कर बनाया जा सकता है जिससे की कुछ नए तथ्यों का संचय हो सके या फिर कुछ नयी बात अनुसंधान के आधार पर हो सके।

प्राक्कल्पना के निर्माण की प्रमुख कठिनाइयाँ

(Main difficulties in the formulation of Hypothesis)

प्राक्कल्पना या उपकल्पना का निर्माण कोई सरल कार्य नहीं है। इस दिशा में अनुसंधानकर्ता को कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है जो निम्न हैः

1. प्रथम कठिनाई अध्ययन-विषय से सम्बन्धित है। आधुनिक समाज बहुत बड़ा तथा जटिल होता है और इसीलिए आधुनिक समाज की घटनाएँ व समस्याएँ भी बहुत उलझी हुई और बहुमुखी होती हैं। उनके सम्बन्ध में पहले से ही कुछ अनुमान लगाना कठिन होता है। अतः बहुत ही सोच-समझ से काम लेने की जरूरत होती है।

2. प्राक्कल्पना के निर्माण में दूसरी कठिनाई सामाजिक घटनाओं के तेजी से परिवर्तन होने के कारण उत्पन्न होती है। सामाजिक घटनाएँ आज के युग में तेजी से बदलती हैं और आज जो सच है, कल वह झूठ हो सकता है। ऐसी अवस्था में कुछ भी अनुमान लगाना यदि असम्भव नहीं, तो कठिन है।

3. उन कल्पना का निर्माण एक समाज की कुछ सामान्य सांस्कृतिक विशेषताओं के आधार पर किया जाता है। पर आज विभिन्न संस्कृतियों में आदान-प्रदान की प्रक्रिया बहुत तेजी से चल रही है। साधनों में उन्नति होने के फलस्वरूप विभिन्न समाज या संस्कृति एक-दूसरे के अधिक निकट आते जा रहे हैं जिससे कि एक समाज की सांस्कृतिक विशेषताएँ भी स्थिर नहीं हैं। अतः अस्थिर आधारों पर प्राक्कल्पना का निर्माण कठिन हो जाता है।

4. कभी-कभी प्रचलित सिद्धान्तों के आधार पर भी उन कल्पना का निर्माण कर लिया जाता है। ऐसा करने में कठिनाई यह होती है कि वह सिद्धान्त हमारे अपने अध्ययन-कार्य के लिए कितना व्यावहारिक है इसका अनुमान हम नहीं लगा पाते हैं जिससे कि अध्ययन-कार्य को ही त्याग देना होता है उसे बदलना पड़ता है।

5. यदि अनुसंधानकर्त्ता स्वयं किसी पूर्व-आदर्श, पक्षपात या उचित-अनुचित की भावना से प्रेरित है तो वैज्ञानिक प्रयोग के योग्य उपकल्पना (प्राक्कल्पना) का निर्माण कठिन हो जाता है। यह कभी अनुसंधानकाल में बाधक हो सकती है।

6. सजातिवाद (Ethnocentrism) भी एक अच्छी उपकल्पना के निर्माण में बाधक बन जाता है। दूसरों की तुलना में अपने समाज और सामाजिक घटनाओं के लिए प्रत्येक व्यक्ति के दिल में एक खास रूझान होता है। उसकी यह दुर्बलता उसे वास्तविकता से दूर हटा देती है और वह अपने समाज व संस्कृति को ही सबसे अच्छा मान बैठता है। एक अच्छी प्राक्कल्पना का निर्माण कठिन हो जाता है। उसी प्रकार अनुसन्धानकर्ता की कोई भ्रान्त धारणा, किसी घटना के सम्बन्ध में उसका अपना व्यक्तिगत स्वार्थ भी एक अच्छी उपकल्पना के निर्माण में कठिनाई उत्पन्न कर सकता है।

7. बहुधा एक आरम्भिक अध्ययन या सर्वेक्षण करने के बाद ही प्राक्कल्पना का निर्माण किया जाता है ताकि अध्ययन-विषय की प्रकृति के सम्बन्ध में कुछ सामान्य ज्ञान प्राप्त हो जाए। इस आधार पर भी प्राक्कल्पना के निर्माण में प्रमुख कठिनाई यह होती है कि सूचनादाता या अन्य स्रोतों से जल्दी में हमें यथार्थ सूचना नह मिल पाती है। सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं से प्राप्त प्रारम्भिक सूचनाएँ भी निर्भरयोग्य न हों। ऐसी हालत में वैज्ञानिक प्रयोग के योग्य उपकल्पना का निर्माण कठिन हो जाता है। गुडे एवं हाट ने भी उपकल्पना के निर्माण में स्पष्ट सैद्धान्तिक प्रारुप का अभाव (Lack of theoretical framework) अनुसंधानकर्त्ता की सीमाएं (Limitation of Researcher) तथा अध्ययन विधि का न होना (Limitation of Technique) को बताया है।

अच्छी उपकल्पना की विशेषताएँ
(Characteristics of Good Hypothesis)

उपकल्पनाएँ उपयोगी हों, इसके लिए यह आवश्यक है कि उनमें कुछ उल्लेखनीय गुण या विशेषताएँ हों। वैज्ञानिक प्रयोग (use) के योग्य उपकल्पनाओं की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

a. **स्पष्टता (Clarity):** उपकल्पनाओं का अवधारणात्मक रूप में स्पष्ट (conceptually clear) होना परमावश्यक है। किसी भी स्तर पर अस्पष्टता वैज्ञानिक पद्धति के प्रतिकूल है। स्पष्टता में गूड तथा हॉट (Goode and Hatt) के अनुसार दो बातें सम्मिलित हैं- एक तो यह कि प्राक्कल्पना में निहित अवधारणाओं को स्पष्ट रूप में परिभाषित किया जाए ताकि किसी भी प्रकार की अस्पष्टता आगे चलकर अध्ययन-कार्य में बाधा न कर सके, और दूसरी यह कि ये परिभाषाएँ ऐसी स्पष्ट भाषा में लिखी जाएँ कि अन्य लोग भी सामान्यतः उसका सही अर्थ समझ सकें।

b. **प्रयोगसिद्धता (Empirical referents):** इस विशेषता का तात्पर्य यह है कि वही प्राक्कल्पना वैज्ञानिक अनुसंधान में प्रयुक्त की जा सकती है। इसका अर्थ यह है कि वैज्ञानिक को अपनी प्राक्कल्पना में किसी आदर्श को प्रस्तुत करने का प्रयत्न नह करना चाहिए। उसका सम्बन्ध ऐसे विचार या ऐसी अवधारणा से होना चाहिए जिसकी सत्यता की परीक्षा वास्तविक प्रयोग अथवा वास्तविक तथ्यों के आधार पर की जा सके।

c. **विशिष्टता (Specificity):** प्राक्कल्पना अगर अत्यन्त सामान्य (general) है तो उससे यथार्थ निष्कर्ष तक पहुँचना सम्भव नह होता है। किसी विषय के सभी पक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन हम एक ही समय पर नह कर सकते। अतः यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि प्राक्कल्पना अध्ययन-विषय के किसी विशेष पहलू से सम्बद्ध हो। अगर उसमें विशिष्टता का गुण नह हो तो उसकी सत्यता की जाँच करना भी कठिन हो जाता है। अक्सर ऐसा होता है कि उपकल्पना को अधिकाधिक आकर्षक व प्रभावशाली बनाने के लिए उसे ऐसे विराट व सामान्य तौर पर (in general terms) व्यक्त किया जाता है कि वह स्वयं वैज्ञानिक की पहुँच के बाहर हो जाती है। अतः प्राक्कल्पना में विशिष्टता का होना आवश्यक है जिससे कि एक सुनिश्चित वैज्ञानिक सीमा के अन्तर्गत रहते हुए सत्य की खोज सम्भव हो।

d. **उपलब्ध प्रविधियों से सम्बद्ध (Related to available techniques):** प्राक्कल्पना का निर्माण इस बात को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए कि उसकी सत्यता की जाँच उपलब्ध प्रविधियों के द्वारा सम्भव हो। गूड एवं हॉट (Goode and Hatt) का मत है, कि सिद्धान्त और पद्धति एक-दूसरे के विरोधी नह हैं। जो सिद्धान्तकार यह नह जानता है कि उसकी उपकल्पना की जाँच के लिए कौन-कौन सी प्रविधियाँ उपलब्ध हैं, वह उपयोगी प्रश्नों के निर्माण में असफल रहता है। अतः उपकल्पनाएँ ऐसी होनी चाहिएँ जो कि प्रचलित प्रविधियों की पहुँच के भीतर हों। आधुनिक समय में समस्याएँ इतनी जटिल हैं कि उनसे सम्बद्ध जटिल उपकल्पनाओं का निर्माण केवल प्रविधियों को ध्यान में रखकर बनाना सम्भव नह । उपकल्पना इस प्रकार की हो कि वह अनुसंधान का एक सामयिक आधार भी बन सकती है या नह , इसकी परीक्षा उपलब्ध प्रविधियों द्वारा की जा सके।

e. **सिद्धान्त समूह से सम्बद्ध (Related to body of theory):** गूड और हॉट (Goode and Hatt) ने लिखा है कि इस नियम की अवहेलना अक्सर सामाजिक अनुसंधान मे हो जाती हैं। उनके चुनाव में इस बात की सम्भावना अधिक होती है कि वे इस प्रकार के अध्ययन-विषय (subject-matter) को चुन लें जो कि 'रुचिकर' (interesting) हो। ऐसा करते समय वे इस बात का ध्यान नह रखते हैं कि उनका वह शोध-कार्य वास्तव में सामाजिक संबंधों से सम्बन्ध किन्ह विद्यमान सिद्धान्तों को गलत प्रमाणित करने या उन्हें सही प्रमाणित करने में सहायक होगा भी या नह । अतः उपकल्पना ऐसी होनी चाहिए जो सम्बद्ध क्षेत्र में किसी पूर्वस्थापित सिद्धान्त के क्रम में हो क्योंकि असम्बद्ध प्राक्कल्पनाओं की परीक्षा विस्त त सिद्धान्तों के सन्दर्भ में नह की जा सकती।

सामाजिक शोध में तथ्य और सिद्धान्त
(Fact & Theory in Social Research)

अर्थ, प्रकृति एवं विशेषताएँ

अवधारणाओं तथा उपकल्पना के महत्त्वपूर्ण भूमिका को समझ लेने के पश्चात् तथ्य के महत्त्व को समझना भी आवश्यक है। तथ्यों के व्यवस्थित संबंध के आधार को निश्चित कर ही सिद्धान्त प्रतिपादित किये जाते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता

है कि वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर तथ्यों का संकलन करना सामाजिक शोध का एक महत्त्वपूर्ण कदम है। तथ्य के प्रकृति एवं विशेषताओं के उपर विचार जिस तरीके से साधारण बोल-चाल की भाषा में होता है, उसके आधार पर यह समझ लेना कि सामाजिक विज्ञान में भी तथ्यों को उसी रूप में लिया जाता है भ्रामक होगा। संभवतः इसलिए फ्रांस के समाजशास्त्री इ. दुर्खिम ने इसके वैज्ञानिक तत्त्वों का विस्तार से वर्णन अपनी पुस्तक Rules of Sociological Method में किया था जिसकी चर्चा विस्तार से आगे की जाएगी। जहाँ सिद्धान्त को एक कल्पना मान लिया जाता है वह तथ्य का स्वरूप वैज्ञानिक होता है जिसका स्वरूप निश्चित तथा अर्थ स्पष्ट होता है। सिद्धान्त में तथ्यों का संकलन समाहित होता है। इसलिए तथ्यों के बारे में इस प्रकार के विचार भी व्यक्त किये जाते हैं कि तथ्य अपना परिचय स्वयं दे देते हैं। वैज्ञानिक द ष्टिकोण से तथ्यों और सिद्धान्त के संबंध की चर्चा की जाये तो यह कहा जा सकता है कि सामाजिक शोध में निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए-

1. सिद्धान्त और तथ्य एक दूसरे के परस्पर विरोधी नह हैं बल्कि ये दोनों एक दूसरे से जुड़े हैं।
2. सिद्धान्त कोई कोरी कल्पना नह है।
3. एक शोधकर्त्ता तथ्यों तथा सिद्धान्तों दोनों से जुड़ा है।

तथ्य की परिभाषा देते हुए गूड एवं हाट ने लिखा है- तथ्य एक अनुभवसिद्ध सत्यापनीय अवलोकन (empirically verifiable observation) है। अर्थात् तथ्यों का एक वैज्ञानिक स्वरूप है जिसे कभी भी कोई शोधकर्त्ता निरीक्षण व अवलोकन कर उसकी पहचान कर सकता है। जैसे अगर यह कहा जाये कि गर्मी के मौसम में दिल्ली का तापमान बढ़कर 40° सेंटीग्रेड हो जाता है। यह एक तथ्य है जिसका अवलोकन या परीक्षण कोई भी शोधकर्त्ता गर्मी के दिनों का तापमान रिकार्ड कर आसानी से पता लगा सकता है। तथ्यों का वर्णन करते हुए पी० वी० यंग का कहना था कि तथ्य मूर्त चीजों तक ही सीमित नह है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में विचार, अनुभव तथा भावनाएं भी तथ्य हैं। इसलिए उनका कहना था, तथ्यों को ऐसे भौतिक, शारीरिक, मानसिक वा उद्वेगात्मक घटनाओं के रूप में देखा जाना चाहिए जिनकी निश्चयपूर्वक पुष्टि की जा सकती है एवं जिन्हें 'साध्य की दुनिया' (World of Discourse) में सच कहकर स्वीकार किया जाता है। पी० वी० यंग ने भी तथ्यों के वैज्ञानिक स्वरूप को उजागर किया है।

इ० दुर्खिम ने सामाजिक तथ्य का विश्लेषण विस्तार से किया है उनका कहना था कि सामाजिक तथ्य ही समाजशास्त्रीय अध्ययन का प्रमुख अध्ययन क्षेत्र है। वे सामाजिक तथ्य को एक ऐसा तथ्य मानते हैं, जो वस्तुनिष्ठ होता है, और इसका निरीक्षण हम एक वस्तु के रूप में कर सकते हैं। इसलिए वे सामाजिक तथ्य को एक वस्तु, एक चीज, एक भौतिक पदार्थ के रूप में देखा है। जिस प्रकार एक भौतिक पदार्थ का अध्ययन भौतिकी विज्ञान में किया जाता है, उसी प्रकार समाजशास्त्री, सामाजिक तथ्य का अध्ययन करते हैं।

दुर्खिम के द्वारा सामाजिक तथ्यों का जो विश्लेषण किया गया है, उसके आधार पर समाजिक तथ्य (Social Facts) की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया जाता है:

1. बाह्यपन (Externality)
2. आन्तरिक (Internality or Constraint)
3. सार्वभौमिक (Universality)
4. वस्तुनिष्ठ (Objective)

1. **बाह्यपनः** दुर्खिम ने 'सोशल फैक्टस' सामाजिक तथ्य की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए यह बताया की सामाजिक तथ्य मनुष्य के बाहर रहता है मनुष्य के बाहर रहते हुए भी यह उसके विचारों को प्रभावित करता है। चूँकि सामाजिक तथ्य मनुष्य के बाहर रहता है इसलिए इसे समझना आसान हो जाता है।
2. **आन्तरिकः** यद्यपि सामाजिक तथ्य मनुष्य के बाहर रहता है परन्तु यह व्यक्ति को प्रभावित करता है। इसके प्रभाव तथा महत्व को सभी अपने अन्दर महसूस कर सकते हैं। उदाहरणस्वरूप समाज के जो अनुमोदन (Sanction) हैं, उसका मनुष्य के ऊपर उसके व्यवहार को नियंत्रित करने में एक प्रकार का दबाव होता है। जिसके कारण व्यक्ति अपने व्यवहार को नियंत्रित करता है।

3. **सार्वभौमिकता:** सामाजिक तथ्यों का स्वरूप सार्वभौमिक होता है, अर्थात् यह सभी व्यक्तियों की चेतन अवस्था को समान रूप से प्रभावित करता है। इस रूप में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक तथ्य, समाज के सभी व्यक्तियों को प्रभावित करते हैं, इसलिए यह मनुष्य के सामूहिक जीवन में समान रूप से अपना प्रभाव बनाकर रहता है। उदाहरण के लिए यह कहा जा सकता है कि जब हम धर्म की बात करते हैं तब यह स्वीकार करते हैं कि धार्मिक विश्वास तथा उसके अनुरूप उपासना करना सभी व्यक्तियों के सामूहिक जीवन का एक अंग होता है। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि तथ्यों के दो स्वरूप होते हैं - एक स्वरूप वह है जो व्यक्ति तक ही सीमित रहता है और दूसरा स्वरूप उसका सामाजिक स्वरूप है जो उसके कार्य करने की पद्धति, सोचने की पद्धति को व्यक्तिगत रूप से भी प्रभावित करता है। इसके साथ तथ्य का एक दूसरा सामाजिक स्वरूप भी होता है, जिसके कारण व्यक्ति के बजाय पूरा समाज उससे प्रभावित रहता है।

   जहाँ तक दुर्खिम द्वारा दिए गए सामाजिक तथ्य की अवधारणा का प्रश्न है, दुर्खिम ने सामाजिक तथ्य के सामाजिक स्वरूप का विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने आत्महत्या के विवेचन में इस बात का विस्तार से वर्णन किया है कि आत्महत्या यद्यपि एक व्यक्ति के व्यक्तिगत सोच से जुड़ी होती है, परन्तु जब यह व्यक्तिगत सोच सामाजिक सोच का रूप ले लेती है, तब इसका एक सामूहिक स्वरूप भी हो जाता है जिसके कारण समाज भी प्रभावित होता है। इसलिए उन्होंने आत्महत्या को एक सामाजिक तथ्य के रूप में समाजशास्त्रीय अध्ययन किए जाने पर बल दिया।

4. **वस्तुनिष्ठ:** जब सामाजिक तथ्य को वस्तुनिष्ठ कहा जाता है तो इससे अभिप्राय यह होता है कि कैसे इस तथ्य का अध्ययन बिना किसी पूर्वाग्रह के किया जा सके। आत्महत्या के अध्ययन में उन्होंने यह पाया की आत्महत्या के बारे में पहले से ही कुछ मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किए गए थे। उनकी यह मान्यता थी कि आत्महत्या का विश्लेषण न तो जैविकीय आधार पर किया जाना चाहिए और न ही मनोवैज्ञानिक आधार पर। उन्होंने इन दोनों सिद्धांतों का खंडन करते हुए यह बताया कि आत्महत्या की वारदातों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जाना चाहिए, और इसलिए उन्होंने पूर्वनिर्धारित सोच की आलोचना करते हुए आत्महत्या को एक नई सोच के तहत समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत किया। उन्होंने पाया कि जब व्यक्ति समाज के साथ अपने आपको अलग महसूस करने लगता है तब आत्महत्या करने की संभावना बढ़ जाती है। धर्म में आस्था रखने वाले व्यक्ति में आत्महत्या करने की संभावना अपेक्षाक त कम होती है। इसी प्रकार उनका मानना था कि विवाहित व्यक्ति के बजाय, अविवाहित व्यक्ति में आत्महत्या करने की प्रव ति ज्यादा पाई जाती है। इस प्रकार दुर्खिम ने आत्महत्या को एक सामाजिक तथ्य मानकर उसके सामाजिक संदर्भ में विश्लेषण करने पर ज्यादा महत्व दिया।

   इसके अतिरिक्त सामाजिक तथ्य की विशेषता को बताते हुए उन्होंने सामाजिक तथ्य को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में देखा। उन्होंने सामाजिक तथ्य को सुई जेनिरिस (Sui Generis) कहा है। सुई जेनेरिस से तात्पर्य, सामाजिक तथ्य का एक स्वतंत्र रूप से अपना अस्तित्व बनाकर रखना है। सामाजिक तथ्य को उन्होंने एक वस्तु माना है। अर्थात सामाजिक तथ्य उतना ही मूर्त्त है जितना एक वस्तु या चीज होती है। इन्हें किसी और तथ्य की आवश्यकता नहीं होती इसलिए यह स्वतंत्र होते हैं।

   इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि दुर्खिम द्वारा प्रतिपादित सामाजिक तथ्य की अवधारणा एक वैज्ञानिक अवधारणा है जिसके द्वारा उन्होंने समाजशास्त्र में तथ्यों का सामाजिक विश्लेषण के आधार को वैज्ञानिक कसौटी पर स्थापित करने की कोशिश की है।

इस प्रकार तथ्य की निम्नलिखित विशेषताओं की चर्चा की जा सकती हैं-

1. तथ्य का अध्ययन एक सामाजिक घटना के रूप में किया जा सकता है।
2. तथ्यों का स्वरूप जैसा कि दुर्खिम ने बताया है, मूर्त होता है अर्थात् इसे एक वस्तु की तरह ही जाँचा और परखा जा सकता है।
3. तथ्यों के अमूर्त अस्तित्व को भी समाजशास्त्रियों ने स्वीकार किया है। इसके अनुसार तथ्यों को हम अपनी अनुभूति के आधार पर महसूस कर सकते हैं और इस प्रकार यह आवश्यक नह कि तथ्यों का स्वरूप प्रत्यक्ष हो। यह अप्रत्यक्ष रूप से हमारे आत्मनिष्ठ अनुभूति (subjective experience) का भी एक अभिन्न अंग होता है।

4. जिन लोगों ने तथ्यों के मूर्त व वास्तविक स्वरूप की चर्चा की है वे मानते हैं कि तथ्य का अध्ययन एक वास्तविक स्थिति के रूप में किसी भी दूसरे व्यक्ति के द्वारा परीक्षण कर किया जा सकता है। जैसे कि अगर हम कहते हैं कि जल का तापमान 100° सेंटीग्रेड से ज्यादा हो तो वाष्पीकरण की क्रिया शुरू हो जाती है। यह एक तथ्य है। किसी व्यक्ति के शरीर का तापमान अगर 97° सेंटीग्रेड हो तो उसे हम सामान्य मानते हैं। ये सभी एक तथ्य के रूप में हमारे सामने आते हैं जिसका परीक्षण संभव है। अतः यह कहा जा सकता है कि किसी भी तथ्य को वैज्ञानिक द ष्टि से तभी तथ्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है जब उसके सत्यापन की जाँच संभव हो।

5. जब तथ्यों के अमूर्त्त स्वरूप की बात की जाती है तो हमें अनुभव का सहारा लेना पड़ता है। अनुभव के आधार पर ही हम कह सकते हैं कि सुर्योदय या सुर्यास्त का समय हो गया होता है। सुर्य को एक दिशा में उदित होते देख निरंतरता के आधार पर एक तार्किक रूप से अनुमान लगाया जाता है जिसके द्वारा यह कहा जाता है कि अगले दिन भी सुर्य उस दिशा में उदित होगा।

   काले बादल देखकर हम यह अनुमान लगा बैठतें हैं कि वर्षा होने वाली है। अक्सर काले बादल को वर्षा होने के प्रथम लक्षण के रूप में स्वीकार किया जाता है। इसलिए हम अनुमान लगाते हैं कि मानसून का सही समय पर आना किसानों के लिए प्रसन्नता का कारण होता है।

6. सामाजिक तथ्य को भी एक कार्य-कारण संबंध के रूप में जोड़कर देखा जाता है। दूर्खिम ने यह पाया कि विवाहित व्यक्ति में अविवाहित व्यक्ति के अपेक्षा आत्महत्या करने की प्रव त्ति कम पायी जाती है। इस प्रकार जो व्यक्ति समाज से जितना अलग होता है या जितना एकाकी जीवन व्यतीत करता है उसके आत्महत्या करने की प्रव त्ति उतनी ही बढ़ जाती है और इसके विपरित जो व्यक्ति समाज से जितना जुड़ा होता है उसमें आत्महत्या करने की प्रव त्ति उतनी ही कम होती है।

तथ्यों की भूमिका

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सिद्धान्तों के निर्माण में तथ्यों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। विज्ञान सदैव तथ्यों के साथ एक सापेक्ष संबंध बनाये रखना चाहता है ताकि सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सके। तथ्यों और सिद्धान्तों के बीच एक निरंतर संबंध बना होता है जिसमें ये दोनों एक-दूसरे से परस्पर संबंध बनाकर एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। अगर सिद्धान्त, तथ्य के लिए एक प्रेरणा स्रोत है तो तथ्य भी सिद्धान्त के लिए प्रेरणा स्रोत है। इसलिए तथ्यों की निम्न भूमिका को स्वीकार किया गया है-

1. तथ्य सिद्धान्त निर्माण का पहला कदम है। शोधकर्त्ता अपने शोध के दौरान कुछ ऐसे तथ्यों का संकलन कर लेता है जिससे सिद्धान्त के निर्माण में काफी मदद मिलती है। इन तथ्यों की खोज को एक नये तथ्य के रूप में भी देखा जा सकता है। उदाहरणस्वरूप चिकित्सा विज्ञान में अचानक ही यह तथ्य प्रकट हुआ कि पेंसिलिन फंफुदी (Fungus) के द्वारा जीवाणु के व द्धि पर अंकुश लगाया जा सकता है। एक पेंडुलम से जुड़ा एक ही माप का धागा अगर गतिशील हो तो उसे इसके आगे-पिछे जाने की दूरी और समय भी एक समान होगी। सामाजिकरण के प्रक्रिया में जो व्यवहार सीखे जाते हैं उसका एक स्थायी असर मनुष्य के व्यक्तित्व विकास पर पड़ता है।

2. तथ्यों के द्वारा सिद्धान्तों को अस्वीकार किया जाता है और सिद्धान्तों के सत्यापन की जाँच सम्भव हो जाती है। तथ्य संपूर्ण रूप से किसी भी सिद्धान्त को सत्यापित नह कर सकते क्योंकि सिद्धान्तों को कुछ विशेष निरिक्षण के द्वारा भी स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। सिद्धान्तों को तथ्यों के अनुरूप होना आवश्यक होता है और अगर ऐसा नह हो सके अर्थात् अगर तथ्यों के आधार पर प्रतिपादित सिद्धान्त उसके अनुरूप नह हो तो ऐसी स्थिति में उस सिद्धान्त को अस्वीकार किया जाता है। और इस प्रकार शोध एक निरंतर प्रक्रिया है जिसमें सिद्धान्तों को अस्वीकार करना तथा उनके सत्यापन की जाँच हो जाने के बाद उसे स्थापित करना दोनों संभावनाएं होती हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि नये तथ्य के आधार पर पुराने सिद्धान्तों को स्वीकार करना मुश्किल हो जाता है। ऐसी स्थिति में सिद्धान्तों में परिवर्तन किया जाता है या नये तथ्यों की रोशनी में सिद्धान्तों को छोड़ना पड़ता है। कई वैज्ञानिकों ने तथ्यों के आधार पर पुराने सिद्धान्तों को गलत बताया है। किसी सिद्धान्त को गलत बताने का तात्पर्य यह नह है कि नये सिद्धान्त को उसी क्षण स्थापित किया जाना आवश्यक हो। नये सिद्धान्तों को स्थापित किये बिना भी पुराने सिद्धान्तों को त्यागा जा सकता है, अगर वे तथ्यों की व्याख्या करने में असमर्थ हों।

इस संदर्भ में दुर्खिम द्वारा आत्महत्या पर किये गये शोध का अपना अलग महत्त्व है। पहली बार दुर्खिम ने आत्महत्या के अध्ययन के लिए जैविकीय तथा मनोवैज्ञानिक कारणों को नकारते हुए इस बात पर बल दिया कि आत्महत्या का कारण सामाजिक परिस्थिति से जुड़ा होता है और इसलिए उन्होंने आत्महत्या के विभिन्न प्रकारो का वर्णन करते हुए बताया कि इन सभी कारणों के पीछे सामाजिक कारक तत्त्वों को तथ्य के रूप में पहचानने की आवश्यकता है।

3. तथ्य सिद्धान्त को स्पष्ट करते है। तथ्यों के द्वारा सिद्धान्त के सत्यापन की जाँच आसानी से की जाती है। अगर यह कहा जाता है कि सैद्धान्तिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए शुद्ध हवा, जल और साफ वातावरण महत्त्वपूर्ण हैं। इस सैद्धान्तिक विचार को पुष्ट करने के लिए दो ऐसे क्षेत्र लिए जा सकते हैं जहाँ इस बात का पता चलाया जा सकता है कि दो क्षेत्र जहाँ एक जगह शुद्ध हवा, जल और साफ वातावरण है वहाँ बिमार मरने वालों की संख्या कम है अपेक्षाकृत उस जगह के जहाँ लोगों को शुद्ध हवा, दूषित जल और गंदा वातावरण मिलता है।

इस प्रकार उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि तथ्यों का एक घनिष्ठ संबंध सिद्धान्त से है और सिद्धान्त निर्माण के लिए तथ्यों के स्वरूप का वैज्ञानिक होना एक आवश्यक शर्त है।

सिद्धान्त का अर्थ, प्रकृति एवं विशेषताएं

(Meaning, Nature and Characteristics)

किसी भी शोध का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य तथ्यों की खोज करना होता है। परंतु कोई भी विषय तथ्यों के खोज तक ही सीमित नह रहता बल्कि खास प्रकार के तथ्यों का पता लगाकर उसके निरंतर स्वभाव का अध्ययन कर लेने के बाद वह तथ्यों को व्यवस्थित कर उसे समझने के लिए या तो किसी अवधारणा का सहारा लेता है या फिर किसी सिद्धान्त को प्रतिपादित करने की कोशिश करता है। इसलिए सिद्धान्त की एक सीमित परिभाषा देते हुए गुड तथा हाट ने लिखा है कि सिद्धान्त तथ्यों के बीच के संबंध को दर्शाता है। परसी एस० कोहेन ने अपनी पुस्तक Modern Social Theory में सिद्धान्त की व्याख्या विस्तार से प्रस्तुत की है। उनका कहना था कि जहाँ एक ओर तथ्य केवल एक घटना से संबंधित होते हैं वह सिद्धान्त में उन सभी घटनाओं तथा प्रक्रियाओं को समझने की क्षमता होती है। आने वाली घटनाओं का अंदाजा भी सिद्धान्त के आधार पर ही लगाया जा सकता है। इसलिए कोहेन का मत था कि सिद्धान्त तथ्यों से परे है। एक पत्ते का जमीन पर गिरना एक घटना है परंतु प थ्वी के गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त के द्वारा उसकी व्याख्या उस प्रकार की गई अन्य घटनाओं तथा भविष्य में घटने वाली घटनाओं की भी व्याख्या की जा सकती है।

पर्सी कोहेन ने सिद्धान्त के अर्थ की व्याख्या करते हुए लिखा है कि सिद्धान्त एक खुले चैक की तरह है जिसका इस्तेमाल उस चैक के इस्तेमाल करने वाले के उपर निर्भर करता है। अगर किसी एक कथन को एक सिद्धान्त के रूप में प्रयोग किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि यह सिर्फ तथ्य को ही व्यक्त करता है। जब व्यक्ति यह कहता है कि उसके पास एक दुकानदार के व्यवहार को समझने का एक सिद्धान्त है तो इसका यह निष्कर्ष निकाला जाना उचित होगा कि वह उस दुकानदार के प्रत्येक क्रियाकलापों को समझने की क्षमता रखता है और वह दुकानदार उसे ठग नह सकता।

गुड एवं हाट का कहना था कि सामान्यतः लोग यह गलती कर बैठतें हैं कि वे विज्ञान को सिर्फ तथ्यों से जुड़ा मानते हैं। और सिद्धान्त को दर्शनशास्त्र से जोड़कर देखते हैं। इस भ्रामक विचार का खंडन करते हुए गुड व हाट ने यह कहा है कि एक शोधकर्त्ता अपने वैज्ञानिक शोध में निम्न बातों का विशेष ध्यान रखता है-

1. वह यह मानता है कि सिद्धान्त और तथ्य दोनों एक-दूसरे के परस्पर विरोधी नह हैं बल्कि दोनों एक-दूसरे से जुड़े हैं।
2. सिद्धान्त कोरी कल्पना नह है।
3. वैज्ञानिक सिद्धान्त और तथ्य दोनों एक दूसरे से जुड़े हैं।

इसके अतिरिक्त गुड व हाट का यह भी मानना है कि विज्ञान के तथ्य निरीक्षण से जुड़े हैं और वे अनायास ही नह प्रकट होते बल्कि उनका प्रकट होना अर्थपूर्ण है और इसलिए वे सैद्धान्तिक द ष्टिकोण से प्रासंगिक हैं। राबर्ट के मर्टन ने सिद्धान्त की परिभाषा देते हुए लिखा है कि जब अवधारणाएं एक योजना के रूप में अंतः संबंधित हो जाते हैं तब सिद्धान्त शुरू होता है।

कुछ समाजशास्त्रियों ने सिद्धान्त को अवधारणा से जोड़कर यह विचार व्यक्त किया है कि अवधारणाओं का जो स्वरूप परिभाषित होता है उसे प्रयोग व परीक्षण के परिणामों के द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। (टालकाट पार्सन्स) का कहना था कि सिद्धान्त एक सामान्वीकरण है जो ज्ञात व प्रकट तथ्यों पर आधारित होता है। अर्थात् सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सिद्धान्त का निर्माण उन तथ्यों के आधार पर किया जाता हैं जिनके संबंध में पूर्ण जानकारी मिल चुकी हो। इन्ह प्रयोग सिद्ध तथ्यों को आधार बनाकर कुछ सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं और सिद्धान्त की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका इस पूरे प्रकरण में स्वीकार की जाती है।

उपर्युक्त परिभाषा और सिद्धान्त के विवेचनोपरांत सिद्धान्त की कुछ विशेषताओं का उल्लेख करना आवश्यक है-

1. सिद्धान्त तार्किक रूप में अंतः संबंधित तर्कवाक्यों का एक समूह है जिसमें प्रयोग सिद्ध निष्कर्ष निकाले जाते हैं।
2. समाजशास्त्रीय सिद्धान्त सामाजिक घटना से जुड़ा होता है। इसका प्रतिपादन वास्तविक निरीक्षण-परीक्षण-वर्गीकरण के आधार पर होता है।
3. समाजशास्त्रीय सिद्धान्त उन वैज्ञानिक सिद्धान्तों की श्रेणी में आते हैं जिनका संबंध सामाजिक घटना या घटना समूह से होता है।
4. सिद्धान्त में आनुभविक सामान्वीकरण (empirical uniformity) अर्थात् सत्यापित तथ्य को प्रतिपादित किया जाता है।
5. सिद्धान्तों में अवधारणाओं का एक सम्मिलित स्वरूप व्यक्त होता है।
6. तर्करूप से क्रमबद्ध और अंतः संबंधित अवधारणाओं को आधार बनाकर ही सिद्धान्त प्रतिपादित किये जाते हैं।
7. प्रयोग सिद्ध तथ्यों से कुछ सामान्य निष्कर्ष की पूर्ण जानकारी सिद्धान्तों में मिलती है।
8. सिद्धान्त में तर्कवाक्यों को यथार्थतः परिभाषित अवधारणाओं के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
9. तर्कवाक्यों का संबंध एक-दूसरे के साथ युक्तिसंगत होता है।
10. सिद्धान्तों में सामान्वीकरण निगमनिक-तौर पर निकाले जाते हैं। परंतु समाजशास्त्रिय सिद्धान्तों में सामान्वीकरण निगमनिक तौर पर निकालना संभव नह हो पाता परंतु समाजशास्त्रिय सिद्धान्तों में युक्तिसंगत तथा परस्पर संगतपूर्ण सामान्वीकरण की संभावना से इन्कार नह किया जा सकता है।

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने की संभावना विज्ञान में है उस प्रकार के सिद्धान्तों को प्रतिपादित करना समाजशास्त्र में संभव नह क्योंकि मानवीय व्यवहार की प्रकृति ऐसी है जिसमें परिवर्तन की संभावना सदैव बनी होती है और संभवतः इसलिए निश्चित रूप से कोई भी सामान्वीकरण जो तथ्यों के आधार पर किये जा सकते हैं वे निश्चित नह होते। पर्सी कोहेन का मत था कि सामाजिक सिद्धान्तों में विज्ञान की आदर्श शर्तों को प्राप्त करना सदैव मुश्किल होता है। निम्न कठिनाइयों की चर्चा उन्होंने की हैं-

1. प्रकार्यात्मक सिद्धान्त (Functional Theory) की चर्चा करते हुए उन्होंने बताया कि इस प्रकार के सिद्धान्त में तार्किक वाक्यों के सत्यता की जाँच संभव नह क्योंकि ये वाक्य चक्रिय तरीके से प्रस्तुत किये जाते हैं।
2. समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों की सत्यता की जाँच संभव नह क्योंकि न तो यहाँ युक्तिसंगत समान्वीकृत वाक्यों का प्रयोग होता हैं और न ही तथ्यों के आधार पर वाक्य विन्यास होते हैं।
3. मुख्य रूप से समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों में वाक्य विन्यास चुस्त नह होते इसलिए वे सदैव अस्पष्ट रहते हैं। उदाहरणार्थ यह कहना कि सभी पूँजीवादी समाज में वर्गों के आधार पर संघर्ष विद्यमान होते हैं। इन वाक्यों मे सत्यता की जाँच करना मुश्किल है क्योंकि इस प्रकार के वाक्य से कोई इनकार नह करता परंतु इनके विशेष संदर्भ के आधार पर इसकी सत्यता की जाँच करना भी संभव नह है।

सिद्धान्त की भूमिका

1. सबसे प्रथम और महत्त्वपूर्ण भूमिका का उल्लेख करते हुए गुड एवं हाट का मत है कि सिद्धान्त को एक स्थिति निर्धारण (Orientation) के रूप में देखा जाना चाहिए। सिद्धान्त का महत्त्वपूर्ण कार्य तथ्यों के व्यापकता को सुनिश्चित कर उसे सीमित करना है। किसी भी तथ्य को विविध तरीकों से देखा जा सकता है और उन तरीकों से देखने के पश्चात् उसकी

सीमाओं को निर्धारित कर कुछ खास पहलुओं का वैज्ञानिक तरीके से निरिक्षण-परीक्षण तभी संभव है जब उसके दायरे संकुचित हों। इस प्रकार सिद्धान्त का प्रमुख उद्देश्य यह हो जाता है कि वह तथ्यों की प्रासंगिकता को दर्शाता है। समाजशास्त्रियों ने जिस प्रकार से सिद्धान्त निर्माण की व्याख्या की उन सभी ने इस बात का प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से उल्लेख किया। इ० दुर्खिम तथा राबर्ट के मर्टन ने सिद्धान्तों को प्रभावी बनाने के लिए तथ्यों का वर्गीकरण तथा उसके दायरे को सुनिश्चित करने की शर्तों का विस्तार से उल्लेख किया है।

2. **सिद्धान्त को एक अवधारणा तथा वर्गीकरण के रूप में** - अगर ज्ञान को संगठित तरीके से प्रस्तुत करना है तो तथ्यों को निर्धारित करने तथा उसके विविध आयामों को सीमित करने व एक तार्किक, व्यवस्थित तरीका अपनाना आवश्यक है। इस प्रकार से तथ्यों को व्यवस्थित करने में सिद्धान्त अवधारणाओं तथा वर्गीकरण के द्वारा एक महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन का काम करता है। राबर्ट के मर्टन ने भी समाजशास्त्र की शब्दावली को चुस्त और उसके अस्पष्ट अर्थ को वैज्ञानिक अर्थ देकर उनमें एकरूपता लाने का विचार व्यक्त किया है। समाजशास्त्र में भी जिन शब्दावली का प्रयोग किया जाता है उसमें एकरूपता लाने के लिए अधिकांश समाजशास्त्रियों ने शब्दों को परिभाषित कर उसे एक स्पष्ट निश्चित संदर्भ में प्रयोग किये जाने पर बल दिया है। प्रकार्यवादी सिद्धान्त के समर्थक रैडक्लिफ ब्राउन ने भी प्रकार्य शब्द का विस्तार से वर्णन कर उसके एक खास अर्थ का वर्णन किया था। जिस किसी विषय में तकनीकि शब्दों के शब्दार्थ को चुस्त रखा गया है वहाँ सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

3. सिद्धान्तों द्वारा घटनाओं तथा तथ्यों का संक्षिप्त विवरण संभव हो पाता है। सिद्धान्तों की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका घटनाओं तथा तथ्यों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करना भी है। कभी-कभी सिद्धान्तों द्वारा पहले से ही ज्ञात तथ्यों का सार भी सिद्धान्त द्वारा मिल पाता है। इन संक्षिप्त विवरण को दो साधारण श्रेणियों में बाँटा जा सकता है-

   (i) आनुभाविक समान्वीकरण (Empirical Generalisations)

   (ii) प्रस्तावनाओं के मध्य के संबंध (Systems of Relationships between Propositions)

   समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान में प्रयोग पर आधारित तथ्यों का नीरिक्षण-परीक्षण कर जो समान्वीकरण किये जाते हैं इससे तथ्यों का संक्षिप्त विवरण कर सिद्धान्त प्रतिपादन में काफी मदद मिल जाती है। न्युटन तथा आइंस्टाइन के विशेष सिद्धान्तों में इस प्रकार के प्रयोग पर आधारित प्रस्तावना को संक्षिप्त कर उसका विवरण देने का प्रयास किया गया है। न्युटन ने अपने प्रिंसपिआ (Princpia) तथा आइंस्टाइन ने अपने सापेक्षवाद (Relativity) के सिद्धान्त में इस तथ्य का उदघाटित किया है। टालकाट पार्सन्स ने अपनी पुस्तक Structure of Social Action में महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्रियों मुख्यतः वेबर, दुर्खिम तथा पैरेटो के विचारों तथा सिद्धान्तों का खंडन करते हुए यह बताया है कि कैसे ये सभी पुराने सिद्धान्तों से अलग हटकर एक सर्वमान्य सिद्धान्त जिसे क्रिया का संकल्पवादी सिद्धान्त (Voluntaristic theory of Action) कहा जा सकता है के रूप में वर्णित किया है।

4. **सिद्धान्त तथ्यों की स्थिति का भविष्य भी बखान करते हैं** - अगर सिद्धान्त में यह क्षमता है कि वे तथ्यों को उनके एकरूपता के आधार पर तात्कालिक निरिक्षण के पूर्व ही उसके बारे में अनुमान लगा सकें तो इसका एक सीधा सा अर्थ यह निकलता है कि तथ्यों के बारे में पूर्वानुमान लगाकर उसकी भविष्यवाणी की जा सकती है। इस भविष्यवाणी के भी विविध स्वरूप हो सकते हैं। सर्वाधिक मान्य धारणा वह है जिसमें ज्ञात तथ्यों के आधार पर गुप्त व अप्रकट तथ्यों के बारे में पूर्वानुमान लगाया जाता है। उदाहरणस्वरूप यह कहा जा सकता है कि जहाँ बेरोजगारी ज्यादा होगी वहाँ युवाओं में अपराधिक प्रव त्ति या विचलन की क्रिया ज्यादा देखने को मिलेगी, इस प्रकार के अनुमान व निष्कर्ष निकालने के निम्न आधार हो सकते हैं-

   (i) हम यह मानकर चलते हैं कि किन कारक तत्त्वों के परिणामस्वरूप ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है।

   (ii) हम यह भी मानकर चलते हैं कि कुछ कारक तत्त्व कुछ खास परिस्थिति में ही परिभाषित होते हैं।

   इस प्रकार सिद्धान्त के द्वारा हम कुछ तथ्यों के प्रकट होने का अनुमान निश्चित तौर पर लगा सकते हैं। जैसे गर्भवती महिला में कुपोषण के कारण बच्चों की म त्युदर में व द्धि देखी जा सकती है।

5. **सिद्धान्त हमारे प्राप्त ज्ञान के अधूरेपन का भी एहसास दिलाते हैं** - सिद्धान्त तथ्यों में पाये जाने वाले अधूरेपन को भी दर्शाते हैं और उन टूटे कड़ी को जोड़कर तथ्यों के आधार पर सिद्धान्त को पुष्ट करने का भी कार्य करते हैं।

अपराध विज्ञान के क्षेत्र में सुदरलैंड ने जिन तथ्यों को संजोकर अपराधी प्रव त्ति व व्यवहार का अध्ययन कर जिन तथ्यों का पता लगाया उसके आधार पर यह कहा जा रहा था कि हत्या, लूट, आगजनी, चोरी आदि के पीछे ज्यादातर हाथ निम्न वर्ग के लोगों का होता है। इस तथ्य के आधार पर यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया कि अपराध को प्रोत्साहन निम्न वर्ग के लोगों के द्वारा मिलता है। सुदरलैंड ने अपनी इस धारणा को पुष्ट करने के लिए कुछ और गहराई से जब इन तथ्यों के उपर विचार किया तो उन्हें ऐसा लगा कि उन्होंने अपराध की उन वारदातों का ध्यानपूर्वक अध्ययन नह किया जिसमें उच्च वर्ग के लोगों का हाथ होता है और जब उन्होंने इस ओर ध्यान दिया तो पाया कि अपराध की दुनिया में सफेदपोश (white collar crime) का अपना अलग स्थान है और कई मायने में उच्च वर्ग के द्वारा लिप्त अपराध की वारदातें ज्यादा नुकसानदेह होता है। इस प्रकार इस क्षेत्र के उपर ध्यान देने के बाद अनेकों शोध सफेदपोश अपराध के अध्ययन में लगा।

सिद्धान्त के प्रकार

(Types of Theory)

व्यवस्थित सिद्धान्त जिसे एक सामान्य विचार के रूप में किसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर प्रतिपादित किया जाता है, के चार प्रमुख प्रकारों का वर्णन पर्सी एस कोहेन ने किया है-

1. **विश्लेषणात्मक सिद्धान्त (Analytic Theories):** इस प्रकार के सिद्धान्त अधिकांश रूप से ऐसे सिद्धान्त होते हैं जिसका वास्तविक जीवन से कुछ खास संबंध नह होता है। इस प्रकार के सिद्धान्तों में कुछ स्वयंसिद्ध प्रस्तावना (Axiomatic Proposition) जो सत्य पर आधारित होते हैं और जिन्हें आधार बनाकर कई और कथनों को निकाला जाता है। इस प्रकार के सिद्धान्त अधिकतर तर्कशास्त्र (Logic) तथा गणित (Mathematics) में पाये जाते हैं।

2. **आदर्शात्मक सिद्धान्त (Normative Theories):** इस प्रकार के सिद्धान्त आदर्श अवस्थाओं के एक समूह को दर्शाते हैं। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कोहेन ने इस प्रकार के सिद्धान्त का वर्णन करते हुए किसी भी रूप में मैक्स वेबर के आदर्श प्रारूप (Ideal Type) को ध्यान में नह रखा था। इसलिए मैक्स वेबर के आदर्श प्रारूप से प थक कोहेन ने उन सिद्धान्तों का उल्लेख किया है जो नीतिशास्त्र (Ethics) तथा सौंदर्य बोधी सिद्धान्त (Aesthetics) से जुड़े हैं जिनमें कलात्मक सिद्धान्त तथा वैचारिक स्तर पर पाये जाने वाले सिद्धान्तों का समावेश होता है। उदाहरणार्थ यह कहना कि ईमानदारी एक अच्छी नीति है या गाँधी के द्वारा दिये गये वक्तव्य 'पाप से घ णा करो, पापी से नह ' इस प्रकार के वक्तव्य या कथन कुछ आदर्शमूलक प्रव त्तियों को उभारते हैं और इन सिद्धान्तों का स्वरूप आदर्शात्मक होता है।

3. **वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific Theories):** वैज्ञानिक सिद्धान्त की कुछ आधारभूत विशेषताओं का उल्लेख कर सकते हैं और उनमें पहला यह है कि वैज्ञानिक सिद्धान्त सार्वभौम या सर्वव्यापी (universal) होता है। क्योंकि यह कुछ ऐसी अवस्थाओं (conditions) के बारे में बतलाता है जिनके अन्तर्गत कुछ घटना या घटना के प्रकार सदैव घटित होते हैं। दूसरा, वैज्ञानिक सिद्धान्त निश्चय ही आनुभविक (empirical) या प्रयोगसिद्ध भी होता है। इसका तात्पर्य यह नह है कि वे केवल-मात्र आनुभविक निरीक्षण के परिणाम हैं। आनुभविक निरीक्षण किसी विशिष्ट घटनाओं का होता है; पर चूँकि सिद्धान्त सर्वव्यापी होते हैं इस कारण वे किन्ह विशिष्ट घटनाओं के बारे में कथन नह हो सकते। वैज्ञानिक सिद्धान्त इस अर्थ में आनुभविक होते हैं कि उनसे ऐसे कथनों का निर्गमन किया जा सकता है जो कि किन्ह विशिष्ट घटनाओं के बारे में हैं, और इनकी जाँच-पड़ताल निरीक्षण के द्वारा की जा सकती है। तीसरा, एक वैज्ञानिक सिद्धान्त को कारणात्मक (causal) भी होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिक सिद्धान्त को यह बतलाना चाहिए कि घटना के कतिपय प्रकारों के घटित होने के लिए कुछ अवस्थाएँ पर्याप्त (sufficient) हैं अथवा कुछ अवस्थाएँ आवश्यक (necessary) हैं। इस विशेषता के सम्बन्ध में तीन मत प्रचलित हैं-

   (a) कुछ विद्वानों का कथन है कि सभी वैज्ञानिक सिद्धान्तों का कारणात्मक स्वरूप नह होता है;

   (b) कुछ विद्वानों का मत है कि किसी भी वैज्ञानिक सिद्धान्त का कारणात्मक स्वरूप नह होता है; और

   (c) कुछ विद्वानों की यह निश्चित धारणा है कि सभी वैज्ञानिक सिद्धान्तों का कारणात्मक स्वरूप होता है;

   क्योंकि विज्ञान का आधारभूत कार्य इस बात की व्याख्या करना है कि घटनाएँ क्यों एवं कैसे घटित हुई। टीमाशेफ, टाउमीन तथा कार्ल पापर ने इन विशेषताओं की चर्चा विस्तार से की हैं।

4. **तात्त्विक सिद्धान्त (Metaphysical Theory):** तात्त्विक एवं वैज्ञानिक सिद्धान्तों में मुख्य भेद या अन्तर यह है कि तात्त्विक सिद्धान्त वस्तुतः परीक्षण-योग्य नह होते यद्यपि उनका तार्किक मूल्यांकन किया जा सकता है। कुछ तात्त्विक सिद्धान्तों का विज्ञान के साथ मतलब ही नह होता।

   अन्त में, बहुत से समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का परीक्षण इसलिए भी कठिन होता है क्योंकि वे कुछ ऐसे अस्पष्ट विधान देते हैं जिनका कि द ढ़तापूर्वक परीक्षण सम्भव नह होता। उदाहरणार्थ, 'सभी औद्योगिक समाजों में वर्ग-संघर्ष होता है'। स्पष्ट है कि इस सिद्धान्त को इतना सामान्य व अस्पष्ट (general and vague) स्वरूप प्रदान किया गया है कि उसका वैज्ञानिक आधार स्वतः ही नष्ट हो जाता है। मार्क्स द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त का परीक्षण संभव नह है।

   परन्तु इस सन्दर्भ में कोहेन (Cohen) ने यह भी कहा है कि सभी समाजशास्त्रीय सिद्धान्त इस प्रकार के नह होते। कुछ परिशुद्ध एवं परीक्षण-योग्य सिद्धान्त भी हैं। उदाहरणार्थ "औद्योगिक समाजों में सामाजिक गतिशीलता की मात्रा उस समाज में हासिल किए गए औद्योगिकरण की मात्रा के अनुसार प्रत्यक्षतः बदलती रहती है।" यह कथन सैद्धान्तिक है-अर्थात् यह तथ्य के बारे में नह कहता, अपितु एक अचल सम्बन्ध को दर्शाता है-यह आनुभविक या प्रयोगसिद्ध है एवं यह कारणात्मक है। यह सच नह भी हो सकता है, पर वह दूसरा विषय है।

सिद्धान्तों के विभिन्न प्रकारों की चर्चा से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ तक सामाजिक व्यवस्था का प्रश्न है उसके अध्ययन में उपरलिखित चारों सिद्धान्त सामाजिक व्यवस्था की उत्पत्ति के बारे में प्रमाणिक रूप से कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित कर सकते हैं। कोहेन ने संघर्ष सिद्धान्त (Coercion Theory), अधिष्ठित सिद्धान्त (Interest Theory), तथा अवस्थितत्व सिद्धान्त (Inertia Theory) तीनों की चर्चा करते हुए बताया है कि सामाजिक व्यवस्था में उत्पत्ति को समझने में तीनों असमर्थ हैं। अधिष्ठित सिद्धान्त को वे फिर भी महत्त्वपूर्ण मानते हैं क्योंकि इसके आधार पर अव्यवस्था से व्यवस्थित समाज के प्रतिमानों को समझने में मदद मिलती है।

इकाई का संक्षिप्त आशय

उपर्युक्त इकाई में सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति का वर्णन किया गया। सामाजिक अनुसंधान की परिभाषा, अर्थ, उद्देश्य, इसके विषय क्षेत्र तथा इसके महत्त्व की जानकारी से भी अवगत कराया गया है। सामाजिक अनुसंधान में अवधारणाओं के अर्थ, प्रकृति एवं महत्त्व की भी चर्चा विस्तार से की गयी है। किसी भी सामाजिक शोध में उपकल्पना का काफी महत्त्व होता है। इस पाठ में उपकल्पना के अर्थ, स्त्रोत, इसके महत्त्व, प्रकार एवं उपकल्पना के निर्माण में आने-वाले संभावित कठिनाइयों का भी विस्तार से वर्णन किया गया है। इस इकाई के अंतिम खंड में तथ्य तथा सिद्धान्तों की विस्तार से चर्चा करते हुए उसके अर्थ, भूमिका, महत्त्व, विशेषताओं, संबंध तथा सिद्धान्त के प्रकार का वर्णन करते हुए यह बताने कि कोशिश की गयी है कि किस प्रकार सामाजिक शोध में अध्ययन विधि का इस्तेमाल सही संदर्भ में करने से पहले विधि के दार्शनिक तथा सैद्धान्तिक बातों के उपर भी ध्यान देना आवश्यक है।

स्वतः मूल्यांकन के लिए प्रश्न

इस पाठ को अच्छी तरह पढ़ने के बाद मूल्यांकन के लिए कुछ प्रश्नों का उत्तर देना संभव हो सकेगा जो निम्न है-

1. अनुसंधान क्या है? सामाजिक अनुसंधान की विधि का वर्णन करें।
2. सामाजिक अनुसंधान की परंपरा को ध्यान में रखते हुए इसकी प्रकृति एवं अध्ययन क्षेत्र का वर्णन करें।
3. सामाजिक अनुसंधान में अवधारणाओं के अर्थ, प्रकृति एवं विशेषताओं का वर्णन करे।
4. उपकल्पना क्या है? अच्छी उपकल्पना बनाने की शर्तों का वर्णन करें।
5. सामाजिक शोध में तथ्यों के महत्त्व और भूमिका का वर्णन करें।
6. सामाजिक शोध में सिद्धान्त की क्या भूमिका है? इसकी विशेषताओं का उल्लेख करें।
7. सामाजिक शोध में सिद्धान्तों के महत्त्व की चर्चा करते हुए इसके विभिन्न प्रकारों का वर्णन करें।
8. तथ्य और सिद्धान्त के बीच के संबंध को स्पष्ट करें।

अध्याय-2

सामाजिक घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन
(Scientific Study of Social Phenomena)

वैज्ञानिक विधि अर्थ एवं परिभाषा
(Scientific Method: Meaning and Definition)

विज्ञान का आधार कुछ ऐसी मान्यताएं है जिसे न कि स्थापित किया जा सकता है और न ही इसके वास्तविक व प्रकट स्तित्व को झुठलाया जा सकता है। परंतु वैज्ञानिक अनुमानों के बारे मे यह जरूर कहा जा सकता है कि वे सत्य पर आधारित है और इसीलिए यह स्वाभाविक है कि हम वैज्ञानिक खोज को सत्य मानकर उसे स्वीकार करें। यहाँ पर यह भी ध्यान रखना होगा कि विज्ञान ज्ञान के वास्तविक स्त्रोत की खोज करता है। इस संदर्भ में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वैज्ञानिक पद्धति व विधि ज्ञान के वैज्ञानिक आधार से संबंधित होता हैं। इसीलिए गुडे व हाट ने विज्ञान के वैज्ञानिक आधार का वर्णन किया है। इसके कुछ आधारभूत मान्यताएं (Basic Assumptions) निम्न हैं:

a. भौतिक जीवन का स्तित्वः- विज्ञान इस आधार पर टिका है कि भौतिक जीवन का स्तित्व है और यह आरंम्भिक कथन सत्य है। जिस दुनिया में हम रहते है उसका भौतिक स्वरूप (Material form) है जिसे जाँचा व परखा जा सकता है। वैज्ञानिक विधि के द्वारा हम इस दुनिया के भौतिक जीवन को समझ सकते हैं।

b. संसार की गतिविधियों को समझा जा सकता हैः- वैज्ञानिक विधि के द्वारा विज्ञान में विश्व जगत के गतिविधियों तथा यहाँ घटने वाली क्रियाओं की जानकारी हो सकती है।

c. संसार के नियमों को हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा समझ सकते हैः- विज्ञान कि यह मान्यता है कि हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा निरीक्षण व परीक्षण कर संसार की विभिन्न प्रक्रियाओं को समझ सकते हैं।

d. घटनाओं के बीच कार्य-कारक संबंध होता है अर्थात् किसी भी घटना को प्रभावित करने के कुछ कारक तत्व होते हैं जिसकी पहचान विज्ञान में वैज्ञानिक विधि को अपनाकर किया जा सकता है।

विज्ञान के कुछ आधारभूत मान्यताओं का वर्णन करने के पश्चात् वैज्ञानिक विधि के अर्थ को समझना आसान हो जाता है। समाजशास्त्र मे वैज्ञानिक विधि के समर्थन करने वाले समाजशास्त्रियों मे अगस्त काम्ट का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। उन्होंने ही सर्वप्रथम अपने पुस्तक पॉजिटिव फिलोसफी (Postive philosophy) में मनुष्य के व्यवहार का समाजिक संदर्भ की प ष्ठभूमि में वैज्ञाजिक तरीके या विधि का प्रयोग कर समाजिक घटनाओं के अध्ययन किये जाने पर बल दिया था। उनका कहना था कि जिस प्रकार प्राक तिक घटनाओं का विश्लेषण प्रक ति विज्ञान के सिद्धान्तों के द्वारा वैज्ञानिक रूप से किया जाता है उसी प्रकार समाजिक क्रियाओं का अध्ययन भी वैज्ञानिक तरीके से किया जाना चाहिए। काम्ट ने उन वैज्ञानिक तरीकों का विस्तार से उल्लेख करते हुए निम्न चार विधि का मुख्य रूप से वर्णन किया है जो निम्न हैः-

a. **निरीक्षण** (Observation)

b. **प्रयोग** (Experiment)

c. **तुलनात्मक** (Comparision)

d. **ऐतिहासिक** (Historical)

अपनी महत्त्वपूर्ण पुस्तक पोजिटिव फिलोसफी मे उन्होंने मानव ज्ञान के निम्न तीन स्तरों का वर्णन किया है।

a. **धार्मिक स्तर** (Theological stage)

b. **तात्विक स्तर** (Metaphysical stage)

c. **वैज्ञानिक स्तर** (Scientific stage)

काम्ट के अनुसार वैज्ञानिक पद्धति मे आध्यात्मिक व धार्मिक या तात्विक आधारों के बजाय वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर खोज बीन की जाती है। यहाँ न तो धर्म, न जादू टोना और न ही अंधविश्वास व पंरपरागत सोच को आधार बनाकर अनुसंधान किया जाता है। बल्कि इन कल्पनाओं तथा अधकचरी सोंच के बजाय वैज्ञानिक पद्धति का आधार निरीक्षण, परीक्षण, प्रयोग, तुलनात्मक विवेचन या फिर ऐतिहासिक सोच होता है इसलिए इस विधि में किसी प्रकार की पूर्वाग्रह का समावेश नहीं होता है।

जार्ज लुंडबर्ग ने अपनी पुस्तक समाजिक अनुसंधान मे वैज्ञानिक विधि की व्याख्या करते हुए कहा था कि वैज्ञानिक विधि का इस्तेमाल करने वाले समाजिक वैज्ञानिक विधिवत् निरीक्षण, परीक्षण, वर्गीकरण तथा घटनाओं के विश्लेषण किये जाने को प्राथमिकता देते है। इस प्रकार वैज्ञानिक पद्धति में एक विषय से संबन्धित तथ्यों को वास्तविक निरीक्षण द्वारा संगठित किया जाता है तत्पश्चात् समानता के आधार पर संकेकित तथ्यों का वर्गीकरण और इसका विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

फ्रांस के समाजशास्त्री इ० दुर्खिम का यह मानना था कि समाजशास्त्र में घटनाओं का अध्ययन व विश्लेषण समाजिक तथ्य (Social Facts) के रूप मे किया जाता है। समाजिक तथ्य का अध्ययन व विश्लेषण वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जाता है और वैज्ञानिक विधि को अपनाने के लिए समाजिक तथ्यों के निम्न विशेषताओं को ध्यान मे रखना आवश्यक हैः-

a. **बाह्यपन** (Externality)

b. **आंतरिक** (constraint)

c. **सार्वभौमिक** (Universality)

d. **वस्तुनिष्ठ** (Objective)

दुर्खिम ने भी वैज्ञानिक विधि के द्वारा समाजिक तथ्यों के निरीक्षण किये जाने को महत्त्वपूर्ण माना है। उनके अनुसार वैज्ञानिक विधि के प्रयोग के द्वारा निरीक्षण के निम्न नियमों का अनुसरण करना आवश्यक है

a. समाजिक तथ्य को एक वस्तु माना जाना चाहिए।

b. समाजिक तथ्यों के अध्ययन मे सभी पूर्वाग्रहों को हटा देना चाहिए।

c. समाजिक तथ्यों को वर्गीकरण उनके समान्य तथा असमान्य विशेषताओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

d. समाजशास्त्रिय अध्ययन की वैज्ञानिक पद्धति में सामाजिक तथ्यों को प्रभावित करने के लिए किसी घटना के लिये जिम्मेदार कारक तत्वों की पहचान सहवर्तिता रूपान्तरण विधि (methods of concommitant variations) के द्वारा की जा सकती है। समाजशास्त्र में प्रतिपादित वैज्ञानिक विधि के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि तथ्यों का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से तभी संभव है जब वैज्ञानिक पद्धति के तत्वों को तथा उनकी विशेषताओं के बारे मे एक आम सहमती हो। इसी बात को ध्यान में रखकर कार्ल पियर्सन ने निम्न तत्वों को वैज्ञानिक विधि के लिए आवश्यक माना है

1. तथ्यों का सर्तक व यथार्थ वर्गीकरण तथा उनके बीच के संबंधों एवं अनुक्रमों का निरीक्षण
2. वैज्ञानिक नियमों की खोज के लिए स जनात्मक सोच
3. आत्म आलोचना
4. समस्त वैज्ञानिकों के लिए समान रूप से प्राथमिकता की अंतिम कसौटी।

वैज्ञानिक विधि की विशेषताएं : वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताओं का उल्लेख ऊपर लिखित परिभाषाओं तथा उनके तत्वों के विवेचन से भी मिल जाता है परंतु उन विशेषताओं को अगर क्रमबद्ध तरीके से प्रस्तुत किया जाये तो निम्न विशेषताओं का उल्लेख आवश्यक प्रतीत होता हैः

a. **निरीक्षण** : निरीक्षण को सभी समाजशस्त्रियों ने वैज्ञानिक विधि का आवश्यक तत्व माना है। निरीक्षण का अर्थ अपने आँखों से देखी चीजों के अनुशासित अवलोकन से है। एक वैज्ञानिक निरीक्षण में वे सभी गुण विद्यमान होते है जिसके कारण एक साधारण व्यक्ति के देखने की क्रिया से भिन्न है। निरीक्षण द्वारा तथ्यों का ज्ञान संक्षिप्त और क्रमबद्ध रूप में तभी संभव है जब इसका प्रशिक्षण किया गया हो।

निरीक्षण के द्वारा ही वैज्ञानिक पद्धति में वस्तुनिष्ठता का समावेश हो पाता है। वैज्ञानिक पद्धति मे निरीक्षण के द्वारा वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय है अपने अध्ययन विषय को जैसा वह है ठीक उसी रूप मे प्रस्तुत करना। ऐसा करते हुए शोधकर्त्ता अपने समस्त पूर्णधारणाओं तथा अनुमानों का त्याग कर किसी भी खास विचारधारा का पक्षधर न होकर अपने आप को उनसे विमुख रखकर उनका अध्ययन करता है। वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा जिस निष्कर्ष पर एक शोधकर्त्ता पहुँचता है उसे दूसरे शोधकर्त्ता भी निरीक्षण कर उसके सव्यता की जाँच कर सकते है। इसीलिए निरीक्षण विधि के इस्तेमाल को वैज्ञानिक पद्धति के लिए महत्त्वपूर्ण विधि समझा जाता है।

b. **स्पष्टता (Clarity)** : वैज्ञानिक पद्धति की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है स्पष्टता। अर्थात वैज्ञानिक पद्धति के इस्तेमाल के बाद किसी भी घटना व तथ्य के बारे मे हमें स्पष्ट जानकारी मिलती है जो घटना के वास्तविक व निश्चित रूप से उसकी जानकारी प्राप्त करने मे सहायक होती है। जहाँ कहीं भी किसी घटना के वर्णन या अध्ययन करने मे थोड़ा भी संकोच व संदेह हो तो उससे घटना की जानकारी अस्पष्ट तथा अनिश्चित हो सकती है। इसीलिए घटनाओं व तथ्यों की जानकारी मे उसका निश्चित स्वरूप ही वैज्ञानिक पद्धति की सफलता को दर्शाता है। इस रूप में यह कहना ही काफी होगा कि जहाँ कही अनिश्चितता की स्थिति होगी वह वैज्ञानिक सिद्धान्त के विपरीत होगी और ऐसी परिस्थिति मे वैज्ञानिक सोंच को स्थापित करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वैज्ञानिक विधि के द्वारा एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचा जाये। उदाहरण के लिए अगर यह कहा जाये कि पानी गरम होने पर वाष्प बन जाता है। यह वक्तव्य अपने आप मे सत्य होते हुए भी निश्चित व स्पष्ट तापमान में पानी के वाष्प बन जाने की क्रिया का हमे आभास नहीं देता। परंतु अगर वहीं दूसरी ओर जब हम कहतें हैं कि 100 डिग्री सेंटीग्रट पर पानी भाप बनता है तो यह हमें स्पष्ट तथा निश्चित तथ्य के रूप मे निष्कर्ष के तौर पर हमें जानकारी देता है। वैज्ञानिक पद्धति में इस प्रकार के निश्चित निष्कर्ष का ही महत्त्व है। इसीलिए वैज्ञानिक पद्धति के इस्तेमाल से न केवल हमें स्पष्ट व निश्चित जानकारी मिलती है बल्कि यह निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने का एक वांछित जरिया भी बन जाता है।

c. **सामान्वीकरण (Generalization)** : वैज्ञानिक पद्धति की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता इसमे सामान्वीकरण के रूप में भी देखी जा सकती है। कुछ तथ्यों की जानकारी प्राप्त कर लेने मात्र से ही वैज्ञानिक पद्धति का काम समाप्त नहीं हो जाता है। वैज्ञानिक विधि के द्वारा घटनाओं के क्रमबद्ध अध्ययन के द्वारा जो सामान्वीकरण किये जाते है उसके फलस्वरूप सिद्धान्त के निर्माण में सहायता मिलती है। वैज्ञानिक विधि के प्रयोग द्वारा तार्किक रूप से दो प्रकार के सामान्वीकरण किये जाते हैं जिन्हें तार्किक पद्धति के निम्न पद्धति के रूप में जाना जाता है:

1. **निगमन पद्धति (Deductive Method)**: निगमन पद्धति के द्वारा जो सामान्वीकरण होता है उसमे तर्क का क्रम सामान्य से विशिष्ट की ओर होता है। यहाँ सामान्य सत्य के आधार पर किसी स्पष्ट निष्कर्ष पर हम पहुँचते हैं। अगर तार्किक रूप से हम यह मान लेते है कि मनुष्य मरणशील (Mortal) है जो विशिष्ट निष्कर्ष भी निकाले जा सकते है वे ज्यादा निश्चित व स्पष्ट होते है। यहाँ पहले कथन के सत्यता की जाँच करने की आवश्यकता नहीं होती है वे स्वयंसिद्ध सत्य (Axiomatic truth) के रूप में हमारे सामने प्रकट होते हैं। वाक्यों के निम्न उदाहरण के द्वारा इस प्रकार के तार्किक पद्धति को स्पष्ट किया जा सकता है।

   मनुष्य मरणशील है।

   राम एक मनुष्य है।

   इसलिए राम मरणशील है।

इस प्रकार से निष्कर्ष मे सामान्य से विशिष्ट की ओर हम बढ़ते हैं।

2. **आगमन पद्धति (Inductive Method)** : वैज्ञानिक पद्धति की ही एक दूसरी विधि के द्वारा भी सामान्वीकरण किया जाता हैं। अस प्रकार के समान्वीकरण में विशेष जानकारी व तथ्यों के ज्ञान प्राप्त करने के बाद उस प्रकार के और अन्य तथ्यों की जानकारी प्राप्त की जाती है। जब उस प्रकार के अन्य तथ्य जो एक खास निष्कर्ष की ओर ईशारा करते हैं जब हम इसे सामान्वीक त कर स्वीकार कर लेते है। इस प्रकार तथ्यों के क्रमशः अध्ययन व अवलोकन के बाद किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की प्रक्रिया मे तर्क का क्रम विशिष्ट से सामान्य की ओर होता है। समाजशास्त्र मे अधिकांश शोध

का आधार आगमन पद्धति पर आधारित होता है क्योंकि यहाँ कुछ घटनाओं व तथ्यों का अध्ययन करने के बाद ही सामान्वीकरण संभव हो पाता है।

उपर्युक्त विवेचन के बाद यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वैज्ञानिक विधि मे सामान्वीकरण के परिणामस्वरूप तथ्यों के प्रक ति के बारे मे जो ज्ञान प्राप्त होते है उसके आधार पर एक निश्चित खोज में मदद मिलती है।

d. **भविष्यवाणी (Predictability) :** वैज्ञानिक विधि की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता घटनाक्रम तथ्यों के अध्ययन के उपरान्त भविष्यवाणी करने की है। भविष्यवाणी करने के दो निम्न रूप हो सकते हैः

i. सामान्य भविष्यवाणी (General Prediction)

ii. वैज्ञानिक भविष्यवाणी (Scientific Prediction)

जब हम सामान्य भविष्यवाणी की बात करते हैं तो कई बार किसी धार्मिक पुरूष के कथन के आधार पर समाज के बारे मे कुछ अनुमान लगाकर बात कही जाती है। आदिवासी लोगों की यह धारणा कि एक सुनहरा दिन आयेगा जब उनकी कठिनाइयाँ भगवान के द्वारा दूर हो जायेंगी और उस दिन की प्रतिक्षा मे वे धार्मिक अनुष्ठान कर उस दिन का इंतजार करते है। पपुआ न्युगिनी के उपद्वीय पर बसने वाले क्वाक्युटल (Kwatiutl) जनजाति के लोगों की आस्था को कार्गो कलट (Cargo Cult) के रूप में जाना जाता हैं। इस उपद्वीप में रहने वाले जनजाति एक जहाज का इंतजार करते है जो उनके यहाँ आकर उनकी जरूरत के सामान उन्हें दे जायेगा। इस प्रकार कि बातें सोंचना या किसी व्यक्ति को इस प्रकार का विश्वास दिलाना वैज्ञानिक पद्धति का हिस्सा कदापि नहीं हो सकता। इसीलिए कार्ल मेनहाइम (Karl mannheim) ने अपनी पुस्तक Ideology and Utopia में दो प्रकार के भविष्यवाणी का विस्तार से वर्णन किया है। जब हम काल्पनिक जगत के बारे मे सोंचते हुए यह मानकर चलते है कि रामराज्य की स्थापना होगी तो यह एक प्रकार की कोरी कल्पना (utopia) है समाजशास्त्र मे भी इस प्रकार की कोरी कल्पना करने वाले विचारको की बात की गयी है। अगस्त काम्ट का भी यह मानना था कि ज्ञान की तीन अवस्थाएं हैं और जो अंतिम अवस्था ज्ञान की है वह है वैज्ञानिक सोंच जिसे उन्होंने अपने प्रत्यक्षवाद के सिद्धान्त के साथ जोड़ कर देखा हैं। परंतु यह कहना कि आज भारतीय समाज मे वैज्ञानिक सोंच पर ही हमारी सारी क्रियाकलाप आधारित हैं बिल्कुल ही गलत होगा क्योंकि इस आधुनिक युग मे लोग दैवी प्रकोप, जादू टोना या कुछ अंधविश्वासों के कारण पढ़े लिखे लोग भी अुंगठी धारण कर ग्रहों के प्रकोप को दूर रखने की बात सोंचते है। मार्क्स (Marx) की विचारधारा में भी इस प्रकार के भविष्यवाणी का असर दिखता है। उन्होंने अपनी पुस्तक कम्युनिष्ट मैनिफेस्टों (Communist Manifesto) मे लिखा है, मानव सभ्यता का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास रहा है। अतीत मे संभव है इस प्रकार की स्थिति रही हो परंतु उसके आधार पर भविष्यवाणी कर बैठना कि आगे आने वाले समय मे भी वर्गसंघर्ष के इतिहास को दोहराया जायेगा यह एक भविष्यवाणी है।

परंतु जब वैज्ञानिक विधि के आधार पर भविष्यवाणी की बात की जाती हैं तो वैज्ञानिक नियमों को आधार बनाकर कार्य-कारक संबंधों के आधार पर भविष्य में घटने वाले घटनाओं के बारें में पूर्वकथन किये जाते है। जैसे कम उम्र मे शादी करने वाले बच्चों के स्वास्थ्य अक्सर ठीक नहीं होते। कम उम्र में शादी करने वाले माता-पिता के बच्चों में म त्युदर ही संख्या अधिक पायी जाती है। इसी प्रकार शराब पीकर ट्रक चलाने वाले ड्राइवर के दुर्घटना की संभावना बढ़ जाती है। ज्यादा स्पीड से गाड़ी चलाने पर भी दुर्घटना की संभावना बढ़ जाती है। उसी प्रकार सिगरेट पीने वालों मे कैंसर कि बिमारी होने की संभावना अधिक पायी जाती है अपेक्षाक त उन लोगों के जो सिगरेट नहीं पीते। ये सभी भविष्यवाणी ऐसी भविष्यवाणी है जिनका आधार वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित है। इसीलिए यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक विधि मे वैज्ञानिक भविष्यवाणी की संभावना बढ़ जाती है क्योंकि यह कार्य-कारण संबंधों पर आधारित होती है।

e. **सत्यापन की जाँच (Verification of Truth) :** वैज्ञानिक विधि की एक प्रमुख विशेषता है उपलब्ध तथ्यों के परीक्षण के आधार पर उस तथ्य के सत्यापन की जाँच। तथ्यों के सत्यापन की जाँच के लिए पदार्थ विज्ञान तथा रसायन विज्ञान में तो प्रयोगशालाएं होती है जहाँ परीक्षण करना आसान होता है। नियंत्रित वातावरण में प्रयोगशालाओं मे जो परीक्षण किये जाते है उससे न केवल तथ्यों के सत्यापन की जाँच हो पाती है वरन् तथ्यों के बारे मे एक निश्चित धारणा भी बन जाती है। प्राक तिक विज्ञान की भाँति इस प्रकार के परीक्षण का सत्यापन की जाँच यद्यपि समाजिक विज्ञान में संभव नहीं है परंतु फिर भी यहाँ कार्य-कारक संबंध स्थापित करने के लिए एक कारक तत्व को नियंत्रित कर प्रयोग किये जाते हैं। इस प्रकार के प्रयोग की संभावना समाजिक विज्ञान में होती है। सामाजिक मनोविज्ञान मे विशेषकर मानवीय

व्यवहार के अध्ययन में इस प्रकार के प्रयोग की परंपरा काफी पुरानी है तथा कार्य-कारक संबंधों को स्थापित करने के लिए तथ्यों का प्रमाणिक रूप से निरीक्षण व परीक्षण हो जाता है।

इ० दुर्खिम ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया था कि आत्महत्या का कारण किसी व्यक्ति का समाज से अलग रहना है। अगर कोई व्यक्ति अविवाहित हो, धर्म में उसकी आस्था न हो, संयुक्त परिवार के बजाये एकाकी परिवार में रहता हो तो ऐसी सामाजिक परिस्थिति में आत्महत्या करने की संभावना बढ़ जाती है। इस सिद्धान्त के सत्यापन की जाँच आत्महत्या से संबंधित आंकड़ों को एकत्रित कर आसानी से की जा सकती हैं।

सत्यापन की जाँच के लिए ब्रिटिश दार्शनिक कार्ल पॉपर (Karl Popper) का मत था कि सत्यापन की जाँच की एक आदर्श पद्धति तथ्यों से संबंधित जानकारी को नकारने (Falsify) की होती है। जिस तथ्य के सत्यापन की जाँच करनी हो उसके विपरित किसी कथन को झुठा साबित करना भी सत्यापन की जाँच के लिए आवश्यक शर्त हो जाती है। उदाहरणार्थ जब हम यह कहते है कि मनुष्य मरणशील है इस कथन की पुष्टि इसे तथा इसके सत्यापन की जाँच इस तथ्य को झुठला कर भी की जा सकती है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सामाजिक विज्ञान में जो दर्शनशास्त्र से जुड़ी कुछ अवधारणाएं ऐसी है जिसके द्वारा तथ्यों के सत्यापन की जाँच पड़ताल भी की जाती है।

वैज्ञानिक विधि की प्रकृति एवं महत्त्व (Nature and Importance of Scientific Method: वैज्ञानिक विधि की प्रक ति एवं महत्त्व के ऊपर विचार इसी अध्याय में विस्तार से वैज्ञानिक पद्धति के विभिन्न चरणों की विवेचना करते समय की जायेगी। यहाँ यह बताना आवश्यक हो जाता है कि वैज्ञानिक विधि के प्रक ति की बात जब की जाती है तो अक्सर हम वैज्ञानिक विधि का जिस प्रकार प्रयोग प्राक तिक विज्ञान में की जाती है उस संदर्भ में ही सामाजिक विज्ञान में वैज्ञानिक विधि का इस्तेमाल देखना चाहते है।

समाजशास्त्र मे भी कुछ ऐसे विचारक थे जिन्होंने इस बात पर ज्यादा बल दिया कि जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञान में वैज्ञानिक पद्धति का इस्तेमाल कर एक निश्चित निष्कर्ष निकाला जाता है उसी प्रकार समाजशास्त्र में भी तथ्यों की जानकारी निश्चित रूप से की जा सकती है। इस प्रकार के विचार को प्रतिपादित करने वालो मे फ्रांस के प्रमुख समाजशास्त्री अगस्त काम्ट तथा दुर्खिम का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। इन विद्वानों का यह मत था कि वैज्ञानिक विधि का इस्तेमाल समाजशास्त्रीय अध्ययन में संभव है। इसीलिए समाजशास्त्र में तथ्यों को खोजने तथा जानकारी प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक विधि ही सर्वोत्तम विधि है और इसका विकल्प कोई और नहीं हो सकता।

इस धारणा के विपरित जर्मनी के कुछ विचारकों खासकर डिल्थे (Dilthey) के विचार बिल्कुल ही भिन्न थे। डिल्थे के विचारों से प्रभावित होकर ही मैकस वेबर (Max Weber) ने यह माना कि वैज्ञानिक विधि का इस्तेमाल विषय वस्तु को घ्यान में रखकर किया जाना ही संभव है। तथ्यों की जानकारी के लिए वैज्ञानिक विधि उत्क ष्ट विधि हो सकता है पंरतु समाज विज्ञान को वे सांस्क तिक विज्ञान के रूप मे देखते है। उनका यह मानना था कि मनुष्य के व्यवहार उसकी संस्कृति और समाजिकरण प्रभावित होता है इसलिए मनुष्य के व्यवहार का अध्ययन उसके सांस्कृतिक परिवेश को ध्यान में रखकर ही करना उचित होगा। इसीलिए मैकस वेबर ने अपनी पुस्तक प्रोटेस्टेन्ट एथिक एंड स्पीरीट ऑफ कैपिटलिज्म (The protestant ethic & spirit of capitalism) में धर्म का विश्लेषण करते हुए कहा है कि धर्म का संबंध पूंजीवादी व्यवस्था से जुड़ा होता है और धर्म भी पूंजीवादी द ष्टिकोण को प्रभावित कर सकता है। इसलिए मार्क्स के विचारों का खंडन करते हुए मैक्स वेबर का यह मानना था कि धार्मिक विचारों के द्वारा भी भौतिक चीजों के प्रति आकर्षण बढ़ सकता है। उनके द्वारा किये गये अध्ययन के आधार पर ही कई और अध्ययन भारतीय संदर्भ में उन समुदायों पर किये गये जिनमे धार्मिक रूझान अधिक पाया गया परंतु साथ ही वे सफल उद्यमी के रूप में भी जाने जाते हैं। टीमबर्ग मे मारवाड़ी समुदाय के अपने अध्ययन में यह पाया।

अतः यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञान में निश्चित तरीके तथा वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने की परंपरा तो नहीं है परंतु फिर भी जिस प्रकार के अध्ययन समाजशास्त्र में वैज्ञानिक पद्धति को अपनाकर किये जाते है उसका अपना एक अलग महत्त्व है। उसके महत्त्व को समाजशास्त्र में प्रत्यक्षवाद के पक्षधरों ने भी स्वीकार किया है और संभवतः इसीलिए मैक्स वेबर, कार्ल मनहाइम (Karl mannheim) के द्वारा ज्ञान के समाजशास्त्र (Sociology of Knowledge) की विशेष रूप से चर्चा राबर्ट के मर्टन (Robert K.Merton) ने अपनी पुस्तक शोश्ल थ्योरी एण्ड शोश्ल स्ट्रक्चर

(Social theory and social structure) में की है। वैज्ञानिक पद्धति के महत्त्व की चर्चा करते हुए राबर्ट के मर्टन ने विज्ञान के मूलभूत सिद्धान्तों के वैज्ञानिक आधार देने में इसके महत्त्व को स्वीकार किया है। उनके अनुसार वैज्ञानिक पद्धति का महत्त्व विज्ञान के निम्न तत्वों को प्रचार करने मे काफी महत्त्वपूर्ण है

a. वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा उन विधियों को प्रमाणित (Certify) किया गया है जिसके द्वारा तथ्यों का संकलन विश्वसनीय तरीके से संभव हो पाता है।

b. वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा ही विश्वसनीय रूप से सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में भी ज्ञान का भंडार इकट्ठा किया जा सका है। अगर इन वैज्ञानिक विधियों के इस्तेमाल के द्वारा तथ्यों को इकट्ठा नहीं किया जाता तो सामाजिक विज्ञान के सभी निष्कर्ष पर आज प्रश्न चिन्ह लगा होता।

c. वैज्ञानिक विधि के साथ ही साथ इसके इस्तेमाल से यह भी पता चल पाया कि कुछ ऐसे भी मानवीय व्यवहार है जिनके अध्ययन में वैज्ञानिक विधि जिसे आदर्श विधि समझा जाता है शायद वे सही जानकारी दिलाने मे ज्यादा कारगर न साबित हो। इसलिए सांस्कृतिक परिवेश तथा सामाजिक मान्यताओं को भी ध्यान में रखकर अध्ययन किया जाना आवश्यक है।

उपर्युक्त गुणों को सम्मिलित कर जिस प्रकार से वैज्ञानिक विधि का प्रयोग कर अध्ययन किया जाता है वह भी अपने आप में काफी महत्त्वपूर्ण है। राबर्ट के० मर्टन ने ऊपरलिखित तीन शर्तो के अलावा उनके संयुक्त रूप से प्रयोग कर सामाजिक व्यवहार के अध्ययन को भी प्राथमिकता दी है।

सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठ एवं आत्मनिष्ठ द ष्टिकोण का अर्थ
(Meaning of Objectivity and Subjectivity in Social Research)

सामाजिक अनुसंधान मे तथ्यों के संकलन को वैज्ञानिक तरीके से खोज कर स्थापति किया जाता है। जब हम सत्य की खोज के लिए वैज्ञानिक पद्धति का इस्तेमाल करते हैं तो उसके पीछे यह मंशा होती है कि कैसे हमारे ज्ञान प्राप्ति के स्रोत व विधि को वस्तुनिष्ठ तरीके से प्रस्तुत किया जा सके। ज्ञान के वस्तुनिष्ठ होने से तात्पर्य उस तथ्य के किसी पूर्वाग्रह या धार्मिक मान्यताओं से प्रभावित नहीं होना है। इस प्रकार ज्ञान की स्थिति भी दो प्रकार की हो सकती है। कार्ल पापर (Karl Popper) का भी मत था कि ज्ञान के दो स्रोत हैः

1. आत्मनिष्ठ ज्ञान (Subjective Knowledge)
2. वस्तुनिष्ठ ज्ञान (Objective Knowledge)

1. **आत्मनिष्ठ ज्ञान (Subjective Knowledge):** पापर का यह मत था कि परंपरागत ज्ञान का आधार आत्मनिष्ठ तरीकों पर आधारित था जिसमें ज्ञान का आधार मनुष्य का विवेक नह बल्कि उसकी अनुभूति पर आधारित था जिसके उपर कोई भी आलोचनात्मक रूख अपनाकर उसका खंडन वा परीक्षण करने की चेष्टा नह की गयी। इसमें व्यक्ति विशेष की अपनी अनुभूति को प्राथमिकता दी गयी। जैसा किसी व्यक्ति ने सोचा उसने तथ्य के बारे में वैसी ही धारणा बना ली। कहने का तात्पर्य यह है कि अनुभूति पर आधारित तथ्य कई श्रेणी के होते हैं। आरंभिक अवस्था में जो समझ होती है वह हमारे पूर्वाग्रह तथा सांस्कृतिक धारणाओं से प्रभावित होती है। इसलिए परंपरागत सोच, कि दैवी प्रकोप के कारण ही मनुष्य बिमार पड़ता है या प्राकृतिक आपदा का शिकार होकर अपना जीवन गँवा बैठता है। इस प्रकार के ज्ञान व तथ्य आत्मनिष्ठ ज्ञान के स्त्रोत होते हैं जिनमें विवेक की भूमिका कम, पूर्वाग्रहों को उसी रूप में रहने दिया जाता है इसलिए आत्मनिष्ठ सोंच में परीक्षण के द्वारा तथ्यों की खोजबीन नह की जाती है।

2. **वस्तुनिष्ठ ज्ञान (Objective Knowledge):** जहाँ ज्ञान के आत्मनिष्ठ स्वरूप का स्वभाव व्यक्ति के मनः स्थिति तथा चेतना व उसके सांस्कृतिक परिवेश से जुड़ा होता है, वह ज्ञान का वस्तुनिष्ठ स्रोत समस्या, सिद्धान्त तथा विवेकपूर्ण तौर तरीके जिनमें तार्किक सोच की प्रधानता होती है उस पर टिका होता है। यहाँ ज्ञान का एक स्वतंत्र स्वरूप होता है और ज्ञान के इस स्वतंत्र स्वरूप को स्वीकार कर ही तथ्यों का खोज किया जाता है। ज्ञान किसी स्वतंत्र रूप से सोच, कुंठा व मनोदशा का दास व गुलाम नह होता। सोंच की इस प्रव त्ति में ज्ञान का वास्तविक स्वरूप उभर कर आता है।

इस प्रकार वस्तुनिष्ठ ज्ञान में किसी एक व्यक्ति का एकाधिकार नह होता। वह ज्ञान की स्वतंत्र धरोहर होती है जिस पर व्यक्ति विशेष का नह अपितु सभी का अधिकार होता है। इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान का स्वरूप भी सार्वभौमिक (Universal) होता है। यह किसी व्यक्ति या विचारधारा का पक्षधर नह होता है इसलिए यह किसी व्यक्ति के सोच के अधीन नह होता है। इस प्रकार वस्तुनिष्ठ तरीके से प्राप्त ज्ञान का आधार वैज्ञानिक होता है जिसका निरीक्षण व परीक्षण संभव है।

कार्ल पापर का कहना था कि वस्तुनिष्ठ ज्ञान की निम्न विशेषताएं होती है-

1. वस्तुनिष्ठ ज्ञान में समस्या का स्पष्ट स्वरूप, तथ्यों के उपर आधारित होता है। जहाँ समस्या का चयन भी उसके वैज्ञानिक शर्तों पर किया जाता है। किसी दुर्भावना या पूर्वाग्रह के आधार पर समस्याओं का अध्ययन नह किया जाता। इसलिए विज्ञान की शर्तों के आधार पर समस्या का अध्ययन किया जाता है।
2. वस्तुनिष्ठ ज्ञान के द्वारा सिद्धान्त प्रतिपादित किया जाना संभव हो पाता है। यहाँ ज्ञान का स्वरूप निरीक्षण पर आधारित होता है जिसके निष्कर्ष को सामान्वीकृत कर सिद्धान्त बनाये जाते हैं। इस प्रकार के सिद्धान्त के द्वारा ही वैज्ञानिक तथ्य को स्थापित कर सिद्धान्त का रूप दिया जाता है। सिद्धान्त बन जाने से भविष्य में घटने वाली घटनाओं के लक्षण के आधार पर अनुमान लगाये जा सकते हैं जो वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होते हैं।
3. वस्तुनिष्ठ तरीके से प्राप्त जानकारी में किसी शोधकर्त्ता को उसके स्वरूप को बताने की जरूरत नह होती। वह एक प्रकार से स्वयंसिद्ध तथ्य (Axiomatic fact) के रूप में हमारे सामने आता है।

राबर्ट के मर्टन का भी मत था कि वस्तुनिष्ठ तरीके से प्राप्त ज्ञान में निम्न वैज्ञानिक मान्यताएं समाहित होती हैं-

1. **सार्वभौमिकता (Universalism):** जहाँ तक सार्वभौमिकता का प्रश्न है यह मानकर चला जाता है कि विज्ञान राष्ट्रीय तथा प्रजातिय व किसी धार्मिक विश्वासों के दायरे में नही आती। इसका स्वरूप स्वतंत्र होता है और यह वैज्ञानिक तथ्य के रूप में सर्वमान्य होता है। इसका औपचारिक स्वरूप होता है जो अपरिवर्तनशील, स्थिर व स्थायी होता है। उदाहरणार्थ प थ्वी का सूर्य के चारों तरफ परिक्रमा लगाना एक तथ्य है जो हमारे सोच व पूर्वधारणाओं से परिचालित नह होता। इस प्रकार विज्ञान का जो औपचारिक स्वरूप है वह वस्तुनिष्ठ सोच को और भी पुष्ट करता है।

   एक समय था जब यह मान्यता थी कि गोरे लोगों के अपेक्षाकृत काले लोगों की बौद्धिक क्षमता कम होती है। इस प्रकार के सोच में एक खास प्रकार की अतिरंजित सोच का वर्चस्व देखने को मिलता है जिसे आगे चलकर वैज्ञानिकों ने अपने शोध द्वारा झुठा साबित किया। अर्थात् किसी भी व्यक्ति में इस प्रकार के नैसर्गिक गुण जिसके आधार पर उनके बौद्धिक स्तर को उँचा माना जाये और दूसरों को निम्न स्तर का मानकर उनका तिरस्कार करना वैज्ञानिक विधि के द्वारा प्रमाणित नह किया गया है। रंगभेद तथा प्रजातिवाद की सोच के पक्षधर को वैज्ञानिक विधि के द्वारा वस्तुनिष्ठ तरीके से निकाले गये निष्कर्ष को सही मानना पड़ा है।

   सभी राष्ट्र के वैज्ञानिक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सार्वभौमिक समय को स्वीकार करते हैं और संभवतः इसी आधार पर विज्ञान के वस्तुनिष्ठ चिंतन को एक ठोस आधार मिला है। यद्यपि इसके विपरित विज्ञान के सार्वभौमिक लक्षण को रेखांकित करते हुए कई राष्ट्र के वैज्ञानिकों ने विज्ञान के राष्ट्रवादी स्वरूप को प्राथमिकता देकर उसके राष्ट्रवादी स्वरूप को ही सर्वोपरी बताने का भ्रम पैदा किया है। विज्ञान का अपना स्वरूप सार्वभौम होता है वह राष्ट्रवादी सोच के अधीन नह होता जबकि राष्ट्रवादी सोच का अपना एक खास स्थान एक खास सांस्कृतिक परिवेश में हो सकता है। इस प्रकार से राष्ट्रवादी सोच व विचारधारा को मानकर रंगभेद की नीति अपनाने वाले वैज्ञानिकों को वैज्ञानिक समुदाय का सामना करना पड़ा है तो उन लोगों ने भी वैज्ञानिक भावना के वस्तुनिष्ठ लक्षण को ही सार्वभौम बताकर राष्ट्रवादी सोच से तटस्थ रहने की पेशकश की है।

   सार्वभौमिकता का एक और तकाजा होता है प्रतिभा को प्रश्रय देना। विवेक द्वारा यह प्रमाणित किया जा चुका है कि विज्ञान का भी एक संस्थात्मक लक्ष्य व उद्देश्य होता है। इस आधार पर प्रत्येक व्यक्ति को निष्पक्ष रूप से स्वतंत्र रहकर प्रयोग करने तथा वैज्ञानिक तथ्यों को खोजकर सिद्धान्त व निष्कर्ष निकालने का अधिकार प्राप्त है। यद्यपि वैज्ञानिक भी संकीर्ण द ष्टिकोण अपनाकर एक खास प्रकार से शोध करने को प्रश्रय देते हैं परंतु इस प्रकार के संकीर्ण सोंच के आधार पर प्रतिभावान खोज को ज्यादा दिनों तक दबाया नहीं जा सकता है। यह कहा भी जाता है कि पदार्थ विज्ञान

मे खोज करने वाले वैज्ञानिकों में मैकेनियों तथा न्यूटन ये सभी आर्य वर्ण के थे। परंतु इन सभी वैज्ञानिकों ने भी वैज्ञानिक विधि के वस्तुनिष्ठ लक्षण को स्वीकार करते हुए विज्ञान के सार्वभौमिक विशेषता को वैज्ञानिक द ष्टिकोण का ठोस आधार माना है।

b. **सामुदायिकता (communism):** विज्ञान के वस्तुनिष्ठ कारणों में समुदायिकता को भी एक महत्वपूर्ण लक्ष्ण के रूप मे स्वीकार किया जाता है। वैज्ञानिक खोज का लाभ पूरे समुदाय को मिलता है। विज्ञान का वस्तुनिष्ठ द ष्टिकोण पूरे समुदाय के लिए लाभकारी होता है। इसलिए वैज्ञानिक खोज के द्वारा पूरे समुदाय के हितों का ख्याल भी रखा जाता है। उदाहरणार्थ यह कहा जा सकता है कि आज सार्स जैसे अनोखी निमोनिया की बिमारी को लेकर न केवल विभिन्न देशों के वैज्ञानिक खोजकर इस बिमारी के कारगर उपचार के तरीके जानने के लिए प्रयत्नशील हैं बल्कि इसके लिए विश्व स्वास्थ संगठन (World Health Organisation) ने भी महत्त्वपूर्ण जानकाारी द्वारा वैज्ञानिक खोज का लाभ पूरे समुदाय को मिले इसके लिए प्रयत्नशील है। इस प्रकार वैज्ञानिक खोज पूरे समाज के सांस्कृतिक विरासत के रूप में देखा जा सकता है। यह किसी एक देश व वैज्ञानिक के खोज तक ही सीमित नहीं रहता। इसलिए सार्स के संदर्भ में जैसे ही यह पता चला कि चीन के एक गाँव में सार्स जैसा वाइरस (Virus) किसी जानवर के संपर्क में आने से मानव समुदाय में फैला हैं इससे बचने के तरीके व रोकथाम के तरीकों के बारे में दूसरे देश के वैज्ञानिक भी चिंतित हो गये। खोज के उपरान्त मार्च 2003 में फैली इस बिमारी के बारे मे वैज्ञानिकों ने यह पता लगा लिया कि करोना वाइरस के कारण सार्स की बिमारी मरीजों मे पायी जाती है। उम्मीद है जल्द ही पूरे वैज्ञानिक समुदाय के सामूहिक प्रयाय से इस बिमारी के कारगर उपचार का उपाय मिल सकेगा।

यह स्पष्ट है कि विज्ञान का जो संस्थात्मक स्वरूप है उसमें वैज्ञानिक खोज पूरे समुदाय के लिए होता है। यहाँ वैज्ञानिक खोज को गोपनीय रखना विज्ञान के अपने उद्देश्य व मानदंडों के विपरित है। वैज्ञानिक खोज का यह तकाज़ा होता है कि उस खोज के आधार पर एक वैज्ञानिक दूसरे वैज्ञानिक से अंतः संबंध कर पूरे समुदाय को इस वैज्ञानिक खोज का लाभ पूरे समाज तक पहुंचाये। किसी भी रूप में वैज्ञानिक खोज को सीमित रखना तथा उसे जगजाहिर नहीं होने देना विज्ञान के भावना के खिलाफ है इसलिए इस प्रकार के वैज्ञानिक खोज को गोपनीय रखने वाले वैज्ञानिकों की भर्त्सना की जाती है।

विज्ञान के समुदायिक लक्ष्ण को प्रतिष्ठित वैज्ञानिकों ने भी स्वीकार किया है। वास्तव मे प्रतिष्ठित वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार करते हैं कि वैज्ञानिक खोज जो उनके पूर्व के वैज्ञानिकों ने किया उसका सीधा लाभ उन्हें मिला है। अर्थात् एक वैज्ञानिक ज्ञान के धरोहर का लाभ उठाकर ही अपने सिद्धान्त को और भी पुष्ट कर पाता है। न्यूटन का कहना था कि अगर वे आज दूरद ष्टि रख पायें हैं तो इसका श्रेय उन्हें जाता है जिनके कंधों पर खड़े होकर ऐसा करने मे वह सक्षम हो सके हैं। जाहिर है ऐसी परिस्थिति में एक वैज्ञानिक अपने को पूर्व वैज्ञानिकों के खोज व अर्जित ज्ञान का लाभ प्राप्त करने की वजह से उन वैज्ञानिकों का ऋणी हो जाता है।

c. **निष्पक्षता (Disinterestedness):** वस्तुनिष्ठ द ष्टिकोण रखते हुए वैज्ञानिक विधि को अपनानेवाला वैज्ञानिक विज्ञान के एक और संस्थात्मक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसके एक महत्त्वपूर्ण तत्व निष्पक्षता को भी स्वीकार कर लेता है। जहाँ तक संभव हो वस्तुनिष्ठ द ष्टिकोण रखने वाले वैज्ञानिक अपने शोध के विषय के बारे मे तटस्थ द ष्टिकोण रखकर उसके निष्कर्ष को प्रभावित नहीं करते हैं।

जहाँ तक विज्ञान मे निष्पक्षता का प्रश्न है वैज्ञानिकों को निष्पक्ष रहने की प्रेरणा विज्ञान के जनपक्षीय आधाार से जुड़ी है। इस प्रकार विज्ञान का जनपक्षीय आधार विज्ञान के निष्पक्ष प्रकृति की एक संस्थात्मक आधार भी प्रदान करता है। निष्पक्ष प्रकृति की एक संस्थात्मक आधार भी प्रदान करता है। निष्पक्ष रहकर एक वैज्ञानिक अपने आपको वस्तुनिष्ठ रहने का प्रमाण भी देता है जो वैज्ञानिक व शोधकर्त्ता के शोध का और भी विश्वसनीय बनाता है। एक वैज्ञानिक अपने अनुसंधान को निष्पक्ष घोषित कर अपने पारदर्शी स्वरूप का भी परिचय देता है। इस संबंध मे यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि विज्ञान का क्षेत्र दूसरे व्यवसाय से अलग भी होता है। एक वैज्ञानिक लोगों के साथ उसी प्रकार का संबंध स्थापित नहीं करना चाहता है जिस प्रकार एक चिकित्सक अपने मरीज तथा एक वकील अपने मोवक्किल के साथ कर लेता है। इस प्रकार अविश्वास, धोखा व छल देने की बात एक वैज्ञानिक कभी भी नहीं सोंचता। जो भी ये तकनीक एक वैज्ञानिक द्वारा अपनायी जाती हैं उसके आधार पर वैज्ञानिक अपने व्यवसायिक द ष्टिकोण को और भी द ढ़ करता है।

d. **संगठित संशयवाद (Organised Scepticism):** संगठित संशयवाद भी वैज्ञानिक तत्व के वस्तुनिष्ठ दूष्टिकोण से जुड़ा होता है। इस विशेषता के कारण एक शोधकर्त्ता सदैव अपने चिंतन व निर्णय को संशय के दायरे में रखता है जब तक वह तथ्यों को प्राप्त कर पूर्णतः आश्वस्त नहीं हो जाता है तब तक सभी तथ्यों को इक्ट्ठा कर उसका निरीक्षण व परीक्षण कर एक शोधकर्त्ता आश्वस्त नहीं हो जाता वह अपने निर्णय को स्थागित रखता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वस्तुनिष्ठ द ष्टिकोण के शोधकर्त्ता शोध के दौरान जिन शर्तो को ध्यान में रखकर शोध करता है वह अपने आप में वैज्ञानिक खोज के लिए आवश्यक है। परंतु इसके विपरीत आत्मनिष्ठ सोच का भी अपना महत्त्व है जिसके तहत एक वैज्ञानिक चाहकर भी अपने पूर्वाग्रहों को अपने आप से दूर रखने मे सफल नहीं हो पाता है। आत्मनिष्ठ द ष्ठिकोण के कारण यह मानकर चला जाता है कि अगर वैज्ञानिक व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करना चाहता है तो वह भी अपने आप में उस विषय से जुड़ा है जिसका वह अध्ययन कर रहा है। सांस्कृतिक परिवेश में भिन्नता पायी जा सकती है परंतु यह मान लेना कि एक शोधकर्त्ता अपने आपको बिल्कुल ही निष्पक्ष रखकर शोध करता है उस पर कई आरोप लगाये जा सकते हैं क्योंकि वह भी उसी मानव समुदाय का सदस्य होता है।

आत्मनिष्ठ उपागम
(Subjective Approach)

सामाजिक अनुसंधान मे आत्मनिष्ठ उपागम के महत्त्व को मैक्स वेबर ने अपनी पुस्तक द मेथेडोलोजी आफ द सॉशल साइंसेज में विस्तार से वर्णन किया है। उनका समाजशास्त्रीय उपागम सीधे तौर पर सामाजिक विज्ञानों में जर्मनी के विचारों से संबंध रखता है। काम्ट तथा डिल्थे जैसे दार्शनिक विचारों का प्रभाव मैक्स वेबर के विचारों पर पड़ा। इन विचारों के पक्ष में एक तरफ तो वो लोग थे जो यह महसूस करते थे कि सामाजिक विज्ञान में मानव व्यवहार को नियंत्रित करने वाले सामान्य नियमों की खोजकर उसे प्राकृतिक विज्ञान के अनुरूप ही अध्ययन के लिए प्रयोग मे लाया जा सकता है। दूसरी तरफ ऐसे भी लोग थे जिनका यह तर्क था कि सामाजिक क्रिया को एक विशिष्ट ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक संदर्भ के अनुसार देखना आवश्यक है क्योंकि मनुष्य के व्यवहार को समझना हो तो उसके व्यवहार से जुड़े उसके उद्देश्य, सामाजिक संदर्भ के परिप्रेक्षय में ही समझना बेहतर होगा। इसीलिए मैक्स वेबर ने समाजशास्त्र की परिभाषा देते हुए यह कहा था कि समाजशास्त्र एक विज्ञान है जिसका प्रयास होता है सामाजिक क्रियाओं की व्यख्यात्मक समझ पैदा कर कार्य-कारक के स्थापित संबंध का अध्ययन करना। सामाजिक क्रिया के अर्थ को समझने के लिए मैक्स वेबर ने निम्न दो अंतः संबंधित विधियों का उल्लेख किया है:

(i) **वर्सतेहन (Verstehen)**

(ii) **आदर्श प्रारूप बनाना (Formation of Ideal Type)**

मैक्स वेबर का यह मानना था कि सामाजिक क्रिया को समझने का तरीका आत्मनिष्ठ विधि के द्वारा ही संभव है जो हमारी अनुभूति से जुड़ा है। उदाहरण के लिए एक गुलाम देश मे रहने वाले व्यक्ति की गुलामी तथा दासता से भरी जिन्दगी को सही तरह से समझने के लिए उस गुलाम व्यक्ति के मानसिकता का सांकेतिक एहसास आत्मविश्लेषण (Introspection) के द्वारा ही संभव है। इसके लिए गुलाम व्यक्ति के साथ तदनुभूति (empathy) के द्वारा ही यह संभव है। तदनुभूति का सरल शब्दों मे अर्थ होता है दूसरे व्यक्ति के अनुभव को अपना बनाकर समझना, जैसे एक मजदूर व श्रमिक के श्रम की कीमत को मजदूर के नजरों से देखकर ही समझा जा सकता है। अर्थात् इस प्रकार का अनुभव तभी हो सकता है जब हम मज़दूर के जगह पर रखकर उसकी स्थिति को समझने की कोशिश करें।

आत्मनिष्ठ उपागम, सामाजिक क्रियाओं की व्याख्यात्मक समझ का एक तरीका है। परंतु इस प्रकार से समझ के द्वारा व्यवहार या सामाजिक क्रियाओं को समझने के लिए तदनुभूति (empathy) के साथ-साथ प्रकट व गुप्त इरादों (Professed or Ascribed Intention) को समझना भी आवश्यक है। इसके लिए मैक्स वेबर ने सामाजिक क्रिया के पिछे गुप्त इरादों को समझने के लिए आदर्श प्रारूप (Ideal type) का निर्माण आवश्यक माना। यह आत्मनिष्ठ विधि की एक महत्त्वपूर्ण विधि है जिसके द्वारा उन्होंने यह बताया कि जिस किसी व्यवहार या क्रिया का अध्ययन करना हो उसका वर्गीकरण कर उसके प्रकारों को समझा जाता है। सामाजिक क्रिया को आदर्श प्रारूप (Ideal type) के रूप में चिन्तित करते हुए मैक्स वेबर ने निम्न चार प्रकार के सामाजिक क्रियाओं का उल्लेख किया है:

1. **लक्ष्य युक्तिमूलक क्रिया** (Goal Oriented Action)
2. **मूल्य युक्तिमूलक क्रिया** (Value Oriented Action)
3. **भावात्मक क्रिया** (Affectiue Action)
4. **पारंपरिक क्रिया** (Traditional Action)

उपर्युक्त सामाजिक क्रियाओं मे व्यक्ति विशेष के व्यवहार को उसके लक्ष्य, मूल्य, आवेग तथा परंपरा को आधार मानकर समझा जा सकता है। उदाहरणार्थ एक विद्यार्थी का अच्छे अंक से पास करना उसके मेहनत और मन लगाकर पढ़ने से जुड़ा है जबकि एक नियमित भोजन करने वाले का भूखे रहने के वाबजूद भी माँसाहारी आहार नहीं ग्रहण करना या सगे भाई-बहन के बीच वैवाहिक संबंध स्थापित करने के उपर निषेधता (Taboo) क्रमशः लक्ष्य तथा मूल्य से जुड़े क्रियाओं के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। उसी प्रकार क्रिकेट टीम के कप्तान का विजयी होने पर कमीज हवा मे लहराकर खुशी का इज़हार करना तथा नये भवन के उद्घाटन पर नारियल फोड़ना भावात्मक तथा पारंपरिक क्रिया के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

इस प्रकार मैक्स वेबर एक ऐसे समाजशास्त्री हैं जिन्होंने मानवीय व्यवहार व सामाजिक क्रियाओं के अध्ययन मे आदर्श प्रारूप बनाने पर जोर दिया है। उन्होंने प्रकृतिक विज्ञान तथा सामाजिक विज्ञान के विधि का प्रयोग कर वैज्ञानिक विधि के द्वारा सामाजिक विविधता को समझने का एक महत्त्वपूर्ण विधि सुझाया है।

वस्तुनिष्ठ तथा आत्मनिष्ठ विधि में अंतर :

	वस्तुनिष्ठ		आत्मनिष्ठ विधि
1.	**बाह्यपन (Externality):** वस्तुनिष्ठ विधि के पक्षधर यह मानकर चलते हैं कि सामाजिक तथ्यों को एक बाह्य स्वरूप होता है जिसका निरीक्षण संभव हैं।	1.	**आंतरिक (Internal):** आत्मनिष्ठ विधि के पक्षधर यह मानकर चलते हैं कि मनुष्य के व्यवहार का आंतरिक स्वरूप होता है जो इसकी सोच, भावनाओं तथा इच्छाओं द्वारा परिभाषित होता है।
2.	अवलोकन (Observation): वस्तुनिष्ठ विधि के समर्थक यह मानते है कि सामाजिक तथ्य का स्वरूप बाह्यपपन है जिसे देखा जा सकता है। इसका मूर्त्त स्वरूप है।	2.	**समझ (understanding):** आत्मनिष्ठ विधि के समर्थक यह मानते है कि सामाजिक तथ्य चुँकि मनुष्य के आंतरिक सोच पर निर्भर करता है इसलिए इसका अवलोकन न कर उसे समझा जा सकता है।
3.	**प्रयोगात्मक विधि (Experiment):** वस्तुनिष्ठ विधि मे प्रयोगात्मक विधि के द्वारा निष्कर्ष तक पहुँचा जाता है। अगर निष्कर्ष में अंतर पाया जाता है तो उसकी पुनस्वीकृति कर तथ्यों के बारें मे एक राय कायम की जा सकती है।	3.	**तदनुभूति (Empathy):** आत्मनिष्ठ विधि के द्वारा प्रयोग की संभावना नहीं होती है परंतु फिर भी तदनुभूति के द्वारा हम यह जान सकते है कि किसी एक सामाजिक क्रिया तथा घटना के बारे मे दूसरे व्यक्ति की क्या राय व विचार हैं।
4.	**तुलानात्मक विधि (Comparative method):** तुलनात्मक तुलनात्मक विधि के इस्तेमाल के द्वारा वस्तुनिष्ठ विधि में प्रयोग किये गये वैज्ञानिक पद्धति की विश्वसनीयता पर कोई संदेह या प्रश्न नहीं किया जा सकता है।	4.	**ऐतिहासिक विधि (Historical method):** विधि का प्रयोग आत्मनिष्ठ उपागम मे उसी रूप में नहीं होता जिस रूप में इसका प्रयोग वस्तुनिष्ठ उपागम में होता है परंतु फिर भी आत्मनिष्ठ विधि के द्वारा ऐतिहासिक संदर्भ को ध्यान मे रखकर सामाजिक घटना का अध्ययन करना इस विधि कि एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है।

अनुभाविकता के अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Empiricism)

अनुभाविकता का साधारण अर्थ है अनुभवजनित ज्ञान पर आधारित सिद्धान्तों के प्रमाणिकता को विज्ञान की विधि द्वारा जाँचना। समाजशास्त्र में अनुभव पर आधारित ज्ञान की प ष्टि के लिए सांख्यिक विधि का प्रयोग आवश्यक माना है। समाजशास्त्र के

जनक अगस्त काम्ट के प्रत्यक्षवाद के सिद्धान्त को भी अनुभाविकता के महत्त्वपूर्ण प्रतिपादक के रूप में देखा जाता है। अक्सर यह कहा जाता है कि तथ्यों को निरीक्षण कर लेने से उनपर विश्वास अपने आप हो जाता है। जिन क्रियाओं, घटनाओं वा तथ्य को हम अपनी आँखों से नहीं देख सकते है उस पर विश्वास करना मुश्किल होता है। उदाहरण स्वरूप यह कहा जा सकता है कि तथ्यों, क्रियाओं व घटनाओं का एक मूर्त्त स्वरूप होता है जिसे देखा, जाँचा व परखा जा सकता है परंतु जब हम कहतें हैं कि भगवान नहीं होता क्योंकि उसके स्वरूप को ने तो देख सकते हैं और न ही उसकी जाँच व परीक्षण किसी रूप में हो सकती है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अनुभाविक ज्ञान में बाह्य जगत के स्तित्व को समझकर उसका अध्ययन संभव है। समाजशास्त्रीय अध्ययन में फ्रांस के विचारक अगस्त काम्ट ने इसे प्रचलित विधि के रूप में इस्तेमाल करने पर बल दिया। उनका सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान था कि वे समाजशास्त्रीय अध्ययन मे वैज्ञानिक विधि का इस्तेमाल कर समाजशास्त्र मे घटने वाले स्थायी (state) तथा प्रगतिशील (Dynamic) क्रियाकलापों का अध्ययन कर सकें। इसके लिए उन्होंने अपने अनुभाविक उपागम मे निम्न चार तरीकों का विश्लेषण किया है :

1. **निरीक्षण** (Observation)
2. **प्रयोग** (Experiment)
3. **तुलनात्मक विधि** (Comparison)
4. **ऐतिहासिक विधि** (Historical Method)

इस प्रकार के अध्ययन विधि को फ्रांस के ही समाजशास्त्री इ० दुर्खिम ने अपने प्रकार्यवादी सिद्धान्त के प्रतिपादन मे विस्तार से अपनी पुस्तक रूल्स आफ सोशियोलोजिकल मेथड (1895) में वर्णन किया है। उनका कहना था कि समाजशास्त्र मे सामाजिक तथ्यों का अध्ययन किया जाता है। सामाजिक तथ्य का एक विशिष्ट महत्त्व है जिसके वैज्ञानिक लक्ष्णों की चर्चा करते हुए उनका मानना था कि सामाजिक तथ्य को दो तरीके से जाना जा सकता है (a) उनका दवाब हम महसूस करते है। जिसे अक्सर समाज मे पाये जाने वाले मानदंडों के द्वारा हम अपने व्यवहार को नियंत्रित करते हैं (b) उनका सामान्य फैलाव (General diffusion) जो पूरे समूह को प्रभावित करता है। इसीलिए उनका मानना था कि सामाजिक तथ्य को एक वस्तु व चीज (Material or things) के रूप मे देखा जाना चाहिए। वस्तु उन सभी ज्ञान के लक्ष्य के तरह हमारे मानसिक क्रिया मे ही नहीं अपितु एक तथ्य के रूप में प्रकट होती है जो हमारे मस्तिष्क से बाहर होता है। इस प्रकार के वस्तु को निरीक्षण तथा प्रयोग के द्वारा खोजा जा सकता है। इस प्रकार एक समाजशास्त्री भी सामाजिक तथ्यों का अध्ययन एक प्रकृतिक विज्ञान के शोधकर्त्ता की तरह ही करता है जिसका उद्देश्य अज्ञात चीजों की खोज करना होता है।

अनुभाविकता की विशेषताएं एवं महत्त्व (Characteristics and Importance of Experimental Research) जिन समाजशास्त्रियों ने अनुभाविक अनुसंधान की नींव रखी निःसंदेह उनमें फ्राँस के समाजशास्त्रियों, विशेषकर अगस्त काम्ट तथा इमाईभ दुर्खिम का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। परंतु जिस प्रकार के अनुसंधान को अनुभाविक शोध की आरंम्भिक अध्ययनों से जोड़कर देखा जाता है उसमें इंगलैड के शोधकर्त्ता चार्ल्स बूथ का नाम विशेष रूप से लिया जाता है । चार्ल्स बूथ ने लंदन के विभिन्न समुदायों में फैली गरीबी के अध्ययन (1892-1902) को समाज के अनुभाविक शोध का एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन माना है। चार्ल्स बूथ तथा राउनट्री (1902) ने अपने गरीबी के अध्ययन मे यह माना कि जब सामाजिक सुधार की चर्चा होती है तब समाजशास्त्रियों द्वारा वस्तुनिष्ठ तरीकें से तथ्यों तथा आंकड़ों को इकटठा करने को प्राथमिकता दी जाती है। और इस संदर्भ मे बूथ तथा राउनट्री ने कई मिथ्यो का पर्दाफाश किया जो गरीबी से जुड़े थे। उनके अध्ययन के निष्कर्ष से यह पता चला कि कुछ मानव समूह ऐसे हैं जिनके वित्तिय संसाधन इतने कम होतें हैं कि उनका शारीरिक रूप से जीवित रह पाना मुश्किल हो जाता है। परंतु इस प्रकार के अध्ययन की कमजोरी यह थी कि इन अध्ययनों से मानव समूह के जैविकी क्षमता का तो पता चलता है परंतु सामाजिक संबंधों की कोई जानकारी नहीं मिलती। अम त्य सेन ने भी बंगाल के 1943 के सुखा का अध्ययन किया था और अपने अध्ययन के आधार पर उन्होंने पाया कि भारतवर्ष में क षक मजदूरों का एक ऐसा भी वर्ग हैं जो बहुत ही मुश्किल से कुपोषण और भूखमरी का सामना कर पाते हैं क्योंकि इनकी आय उनके रोजगार के अवसर से जुड़ी होती है जो बाजार की कीमतों मे उतार-चढ़ाव के कारण प्रभावित होते हैं। ये गरीब खेतीहर मजदूर परिवार अधिकांश समय भूखे रहकर ही गुजारते हैं और जब 1943 में बंगाल में सूखा पड़ा तो अम त्य सेन ने पाया कि अधिकांश लोगों की म त्यु में खेतीहर

मजदूरों की संख्या ही सबसे ज्यादा थी। अम त्य सेन का यह मानना है कि आजादी के बाद यद्यपि इस प्रकार के खेतीहर मजदूर की गरीबी सर्वविदित है परंतु जिस तरह सूखा के कारण उनकी संख्या (मौत के कारण) कम हो जाती थी वैसी स्थिति आज नहीं है। परंतु अनुभाविक शोध का सहारा लेकर आज भी हम दूरदर्शन पर जब गरीबी से मरने वालों की वारदातों का समाचार देखते हैं जो यह पता चलता है कि उड़ीया तथा मध्य प्रदेश के कुछ पिछड़े गाँवों मे बसने वाले खेतीहर मजदूर ही गरीबी के कारण भूखमरी से जान गँवा बैठते हैं या अपने आप को जीवित रखने के किए पशु समान जीवन व्यतीत करने पर मजबूर हैं।

इस प्रकार के अनुभाविक शोध की विशेषताओं एवं उनके महत्त्व का वर्णन करते हुए जान रेक्स ने अपनी पुस्तक Key Problems of Sociological Theory मे निम्न तीन विशेषताओं का मुख्य रूप से वर्णन किया है :

a. आमदनी का असमान वितरण, असमान जीवन शैली व पद्धति को प्रोत्साहित करता है और इस प्रकार के असमान जीवन शैली व्यतीत करने वाले एक खास प्रकार के वर्ग -समूह का निर्माण करते हैं।

b. उपर्युक्त शोध से एक और तत्व जो हमारे सामने प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होता है वह है परिवार या समुदाय तथा आर्थिक व्यवस्था के बीच संबंध।

c. शोध के द्वारा जो तथ्य हमारे सामने आते हैं वे सामान्य रूप से स्वीकृत मिथ्याधारणाओं से बिल्कुल ही अलग हैं।

अनुभाविक शोध की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए जान रेक्स ने सामाजिक गतिशीलता से जुड़ी समस्याओं का वर्णन करते हुए युरोप तथा अमेरीका मे ऐसे अध्ययन का हवाला दिया है जिसमें यह जानने की कोशिश की गयी है कि क्या किसी खास पेशे से जुड़े लोगों को ही अधिक तनख्याह का अवसार दिया जाना चाहिए या सभी को ऐसे अवसर मिल सकते हैं। इस प्रकार के शोध में प्रायः दो प्रकार के मापदंड होने चाहिए। शोध के द्वारा विभिन्न पेशों का एक पैमाना बनाना चाहिए जिसमे लोगों के आम सहमती के आधार पर उन व्यवसायों की स्थिति को श्रेणीबद्ध किया जा सके। दूसरे प्रकार के अध्ययन में शोध के द्वारा यह पता लगाना चाहिए कि किस देशे के लोगों में गतिशीलता अधिक है।

इस प्रकार अनुभाविक अनुसंधान द्वारा जो अध्ययन किये जाते हैं उसमे दो कारक तत्वों के बीच किस प्रकार का संबंध है उसकी खोज की जाती है। इस प्रकार के अध्ययन के द्वारा ही यह जानकारी प्राप्त की जा सकती है कि कौन से तत्व किस दूसरे तत्व से जुड़े हैं और इन दो कारक तत्वों को कौन सा तीसरा तत्व प्रभावित कर रहा है और किस मात्रा में तथा किन परिस्थितियों में यह प्रभावित करता है। अगर हम उदाहरण के लिए यह कहते हैं कि x व्यवसाय x अनुपात में प्रतिष्ठा देता है-इसका अर्थ यह हुआ कि इस प्रकार के कथन के द्वारा यह कहा जा रहा है कि x व्यवसाय को प्रभावित करने वाले बाहरी तत्व xy हो सकते हैं जिसकी जाँच पड़ताल कर सिद्धान्त स्थापित किया जा सकता है। दुर्खिम ने अपनी पुस्तक सुसाईड में **आत्महत्या** करने वाले लोगों के व्यवहार का अनुभाविक पद्धति से अध्ययन कर यह पता लगाने की कोशिश कि किन लोगों में आत्महत्या करने की प्रव ति ज्यादा होती है और ये प्रव तियाँ किन परिस्थितियों में और भी बढ़ जाती हैं।

सामाजिक विचलन के अध्ययन में भी अनुभाविक विधि द्वारा किये गये अध्ययन का महत्व स्वीकार किया जाता है। यहाँ तक कि अपराध की वारदातों का अध्ययन कर अपराधी मानसिकता रखने वालों के सामाजिक परिस्थिति का अध्ययन कर यह पता लगाने की कोशिश भी की गयी है कि किन परिस्थितियों मे अपराध की मानसिकता ज्यादा तीव्र होती है। जो लोग उस परिवार मे रहते हैं जिसे खंडित परिवार (broken homes) कहा जाता है तो यह पाया गया कि इस प्रकार के परिवार मे रहने वाले सदस्यों में अपराध व विचलन कि क्रिया ज्यादा सक्रिय थी। उसी प्रकार दुर्खिम ने भी अपने आत्महत्या के अध्ययन में पाया कि परिवार मे अलग-अलग रहने वाले सदस्य जो शादी के बाद अलग होकर रहतें है उनमे आत्महत्या की प्रव ति ज्यादा प्रखर होती है बजाय उन लोगों के जो परिवार मे अपने पत्नी तथा बच्चों के साथ वैवाहिक जीवन व्यतीत करते हैं। उसी प्रकार धर्म में आस्था रखने वालों में आत्महत्या की प्रव ति अपेक्षाकृत कम होती है उन लोगों की तुलना मे जिनका विश्वास धर्म में नही होता। अर्थात नास्तिक लोगों मे आत्महत्या करने की प्रव ति ज्यादा पायी जाती हैं अपेक्षाकृत उन लोगों के जो आस्थाबान होते हैं।

अनुभाविक शोध के महत्त्व की चर्चा करते हुए राबर्ट के मर्टन ने अपनी पुस्तक Social Theory and Social Structure में सामाजिक सिद्धान्त के प्रतिपादन में इसके महत्त्व को स्वीकार किया है। राबर्ट मे मार्टन का यह मानना था कि सामाजिक सिद्धान्त तथा अनुभाविक शोध दोनों मे सहसंबंध है अगर सामाजिक सिद्धान्त, अनुभाविक शोध को प्रभावित करता है तो वहीं

दूसरी ओर अनुभाविक शोध भी सामाजिक सिद्धान्त के निर्माण में सहायक होता हैं। राबर्ट के मर्टन ने अनुभाविक शोध के महत्व की व्याख्या करते हुए इसके निम्न प्रकार्यों की विस्तार से चर्चा की है:

a. यह सिद्धान्त के निर्माण में सहायक होता है। जो कामचलाऊ उपकल्पना सिद्धान्तों के परीक्षण के लिए बनाये जाते है। उसकी जाँच पड़ताल में अनुभाविक शोध की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

b. सिद्धान्तों के पुनःनिर्माण (Reformulation of theory) मे भी अनुभाविक शोध मे महत्त्व को स्वीकार किया गया है। किसी भी सिद्धान्त का निर्माण स्थायी रूप से नहीं किया जाता है उसमे निरंतर बदलाव आते हैं। नये तथ्य उन सिद्धान्तों को प्रभावित करते हैं। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि अनुभाविक शोध के द्वारा सिद्धान्तों के ऊपर फिर से विचार किया जा सके परंतु उस आधार को तैयार करने में अनुभाविक शोध की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

c अनुभाविक शोध के द्वारा कई बार सिद्धान्तों के समान्य नियमों को भी प्रतिपादित किया जाता है। एक ठोस सिद्धान्त को तैयार करने के लिए तथ्यों तथा आंकड़ों की जरूरत होती है जिसके संकलन में अनुभाविक शोध की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

d. अनुभाविक शोध के द्वारा अवधारणाओं को और भी निश्चित आधार (Clarification of concepts) मिलता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सिद्धान्त निर्माण मे अवधारणाओं को स्पष्ट करना अनुभाविक शोध का एक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य होता है।

सामाजिक सर्वेक्षण : अर्थ एवं परिभाषा
(Social Survey: Meaning and Definition)

सामाजिक सर्वेक्षण यद्यपि सामाजिक अनुसंधान का ही एक विशिष्ट स्वरूप है जहाँ किसी विशेष समस्या, परिस्थिति या वातावरण को ध्यान में रखकर इस प्रकार के शोध किये जाते हैं। वर्ष 2001-2002 में पंजाब के किसानों में बढ़ती आत्महत्या के सर्वेक्षण के लिए पंजाब सरकार के क्रिया कलापों का विस्तार से मुल्यांकन करने के लिए एक सर्वेक्षण के द्वारा यह पाया गया कि संगरूर जिले के 17 गाँवों में वर्ष 2002 के आंरभिक तीन महीनों में ही 27 किसानों ने जो सरकार के कर्ज के बोझ से परेशान थे उन्होंने आत्महत्या किया। इस वर्ष भी मार्च 2003 के बाद सार्स (निमोनिया) भी जानलेवा बिमारी का सर्वेक्षण कर विश्व स्वास्थ संगठन के उन देशों का नाम सूचित किया जहाँ इस बिमारी का प्रकोप ज्यादा है।

सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषा देते हुए ए०एफ० वेल्स ने लिखा है कि यह तथ्य खोजने हेतु अध्ययन है जिसमें श्रमिक वर्ग के गरीबी तथा समुदायों के समस्या और प्रकृति का मुख्य रूप से वर्णन होता है। मोजर तथा काल्टन ने अपनी पुस्तक Survey Methods in Social Investigation में लिखा है कि बेल्स द्वारा सर्वेक्षण की दी गयी परिभाषा काफी संकीर्ण है क्योंकि उन्होंने अपनी पुस्तक मे उन सभी सर्वेक्षणें का वर्णन किया है जो बाजार तथा लोगों के विचारों को जानने के लिए किये जाते है जिनमे समाजशास्त्रीय शोध का वर्णन होता है। मोजर तथा काल्टन का मत है कि सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषा देते समय सर्वेक्षण के विस्त त क्षेत्र को ध्यान में रखना आवश्यक है क्योंकि सर्वेक्षण विधि का इस्तेमाल विभिन्न परिस्थितियों में होता हैं।उदाहरण के लिए उन्होंने निम्न क्षेत्रों मे इसके इस्तेमाल किये जाने का उल्लेख किया है:

a. गरीबी की सर्वेक्षण मे।

b. गैलप पालस द्वारा लोगों के मत को जानने के लिए।

c. शहरी विकास योजना में भी सर्वेक्षण का सहारा किया जाता है।

d. बजार मे अनुसंधान के द्वारा बजार के उतार-चढ़ाव का अंदाज भी सर्वेक्षण के द्वारा संभव हो पाता है।

e. इसके अतिरिक्त सर्वेक्षण के लिए कई संस्थाएं भी विविध सहयोग देकर यह काम करवाना चाहते हैं जिसमे वैज्ञानिक तथा शोध से जुड़े अनुसंधान केंद्रों के अलावा सरकार भी सर्वेक्षण करवाकर जानकारी प्राप्त करते हैं।

एक सर्वेक्षण दूसरे सर्वेक्षण की तुलना में अलग हो सकती है। उद्देश्यों के आधार पर सर्वेक्षण एक दूसरे से भिन्न हो सकते है।

विषय वस्तु, क्षेत्र तथा जानकारी के स्रोतों को आधार बनाकर एक सर्वेक्षण को दूसरे सर्वेक्षण के अलग बनाकर देखा जाता है। परंतु जितने भी सर्वेक्षण किये जाते हैं उन सबका एक उद्देश्य सामान्य तौर पर खोजकर नयी जानकारी प्राप्त करना होता है। इसलिए सर्वेक्षण की उपयोगिता पर कोई सवाल नही उठाया जा सकता है।

सर्वेक्षण का आयोजन, प्रकार एवं महत्त्व

(Planning, Type & Importance of Social Survey)

सर्वेक्षण का आयोजन निम्न बातों पर निर्भर करता है:

a. **उद्देश्य व संसाधन (Objectres and Resources):** किसी भी सामाजिक सर्वेक्षण का आयोजन इस बात पर निर्भर करता है कि उस सर्वेक्षण का उद्देश्य क्या है? इसके उद्देश्य पर विचार करने से तात्पर्य सर्वेक्षण करने के लिए सामान्य उद्देश्य से नहीं है बल्कि निश्चित और स्पष्ट मुद्दों की पहचान जरूरी होती है। उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति या संगठन यह कहता है कि वे व द्ध लोगों के रहन-सहन का सर्वेक्षण कर रहे हैं या करना चाहते हैं तो यह उद्देश्य काफी सामान्य व साधारण है-इसके प्रमुख ज्वलंत मुद्दों को उद्देश्य के रूप में स्थापित करना आवश्यक है तभी वह सर्वेक्षण उपयोगी सिद्ध हो सकता है। अगर यह कहा जाये कि सर्वेक्षण व द्धाओं को पेंशन देकर उनकी स्थिति में सुधार लाने की है तो यह एक स्पष्ट सर्वेक्षण का विषय या मुद्दा हो सकता है। और इस मुद्दे के अनुरूप भी सर्वेक्षण में कितना समय, खर्च और कितने लोगों की आवश्यकता पड़ेगी उसके बारे में भी विचार किया जा सकता है परंतु अगर इस तरह की बात के ऊपर विचार नहीं किया जाता है तो सर्वेक्षण के लिए उद्देश्य का संसाधन के बारे में कुछ भी निर्णय लेना असंभव हो जाता है। इसलिए सर्वेक्षण के आयोजन मे सर्वेक्षण के उद्देश्य की पहचान एवं उसके अनुरूप संसाधन का पता होना आवश्यक हो जाता है।

b. **सर्वेक्षण क्षेत्र का विस्तार (Coverage) :** सर्वेक्षण क्षेत्र के आयोग से जुड़े इसके विस्तार का भी पता होना आवश्यक होता है। अर्थात् सर्वेक्षण हेतु जिन लोगों को अध्ययन में शमिल किया जाता है उसके बारे में निम्न बातों का पता होना आवश्यक है।

   (i) भौगोलिक क्षेत्र जिसमे वे लोग रहते हैं

   (ii) उनकी जनसांख्यिकीय निशेष्ता (Demographic Characteristic)

   (iii) अन्य सीमाएं (Boundaries)

   उपर्युक्त बातों की जानकारी के पश्चात ही यह तय किया जा सकता है कि किस प्रकार का निदर्शन (Sample) उपयोगी हो सकता है और उसका आकार कितना होना चाहिए। अध्ययन का क्षेत्र गाँव हो या खंड हो या जिला हो। क्या इस जगह का निदर्शन लेना संभव भी है या नहीं इसके बारे में भी तभी जानकारी प्राप्त की जा सकती है अगर सर्वेक्षण के विस्तार की पूर्व जानकारी हो।

c. **तथ्यों का संकलन (Collection of Data) :** आंकड़ों के संकलन के लिए विषय वस्तु की जानकारी तथा सर्वेक्षण का मापदंड भी आवश्यक है। अगर यह आंकड़े ही इक्टठे करने हो कि स्नातकोत्तर छात्रों को जिन्होने 75 प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त किये हैं उन्हें छात्रव त्ति दी जानी है तो ऐसे सर्वेक्षण के लिए भी आंकड़ों को एक खास तरीके से एकत्रित किय जाने के लिए खास प्रकार की सर्वेक्षण की जरूरत पड़ेगी। परंतु वहीं इसके विपरीत हमें यह पता करना हो कि एक खास कालोनी मे रहने वाले लोग किस ब्रैंड का वनस्पती घी प्रयोग करते हैं तो ऐसी परिस्थिति में प्रत्येक घर जाकर सर्वेक्षण (House to House Survey) करना होगा। इस प्रकार किस प्रकार के आंकड़े इकट्ठे करने हैं इस बात पर भी यह निर्भर करता है कि सर्वेक्षण का आयोजन कैसे किया जाना है।

d. **प्रश्नावली (Questionnaire) :** सर्वेक्षण के आयोजन में प्रश्नावली किस प्रकार से बनाया जाना है इसका भी अपना एक अलग महत्त्व है। जिस क्षेत्र में लोग रह रहें है वहाँ का सर्वे़क्षण करना है तो यह पता होना आवश्यक हो जाता है कि वहाँ रहने वाले लोगों का शिक्षा स्तर कैसा है और कौन सी भाषा वे बेहतर समझतें हैं। उसी के अनुरूप प्रश्नावली तैयार किया जाना आवश्यक है। यहाँ यह भी तय करना आवश्यक हो जाता है कि अनुसूचि (Schedule) बनाकर सर्वेक्षण का कार्य करना उचित होगा या उनसे प्रश्नावली भरवाना उचित होगा।

e. **पूर्व सर्वेक्षण (pilot survey) :** सर्वेक्षण आयोजन में जो सबसे बड़ी चुनौती एक शोधकर्त्ता का सामना करना पड़ता है वह होता है सर्वक्षण विषय के बारे मे पूर्व जानकारी प्राप्त करना। किसी भी सर्वेक्षण का सफलता पूर्वक आयोजन तब तब संभव नहीं जब तब अध्ययन किये जाने वाले विषय के बारें में पूरी जानकारी नहीं हासिल कर ली जाती है। पूर्व सर्वेक्षण के बाद ही यह तय किया जा सकता है कि सर्वेक्षण में कितना समय, खर्च और मानव संसाधन का प्रयोग किया जाना उचित होगा। सर्वेक्षण के लिए जो प्रश्नावली तैयार किये गये हैं वो किस हद तक प्रासंगिक और तथ्यों की जानकारी

देने में सक्षम हैं। इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि छोटे समूह मे तैयार किये गये प्रश्नावली की प्रासंगिकता की जाँच पड़ताल पहले से ही कर ली जाये। संभवतः इसीलिए पूर्व निश्चित तथा पूर्व सर्वेक्षण को एक खास प्रकार की लोकप्रियता मिली है और सर्वेक्षण के पूर्व अध्ययन करने की परंपरा से शोधकर्त्ता में एक विशेष प्रकार का व्यवसायिक द ष्टिकोण भी विकसित हुआ है। इस प्रकार के पूर्व सर्वेक्षण के निम्न फायदों का उल्लेख मोजर तथा काल्टन ने भी किया है। उनके अनुसार पूर्व सर्वेक्षण मंच पर अभिनय करने से पहले का पूर्वाभ्यास है जिसके कारण शोध सर्वेक्षण को निम्न निर्देश प्राप्त होते हैः

(i) निदर्शन का आकर निश्चित होता हे जिसकी वजह से तथ्यों की पूरी जानकारी मिलती है जो सर्वेक्षण के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होता है। अर्थात् सर्वेक्षण नियोजन का काम आसान हो जाता है और सर्वेक्षण के दोषयुक्त होने की संभावना बढ़ जाती है।

(ii) सर्वेक्षण से पूर्व अध्ययन का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि शोधकर्त्ता को इस बात का आभास हो जाता है कि कितने उत्तरदाता उसके प्रश्नों का सही जवाब देंगे और कितनी विश्वसनीयता शोध की होगी। इस जानकारी के आधार पर आंकड़े इकट्ठे करने के लिए किस अन्य विधि का प्रयोग किया जाना ज्यादा लाभकारी होगा।

(iii) पूर्व अध्ययन से अध्ययन विधि के विश्वसनीयता के साथ-साथ यह भी पता चल जाता है कि किस वैकल्पिक विधि के द्वारा तथ्यों की पूरी जानकारी प्राप्त कर सर्वेक्षण को ज्यादा सार्थक बनाया जा सकता है। निरीक्षण प्रश्नावली या साक्षात्कार विधि में से किसका इस्तेमाल बेहतर निष्कर्ष दे सकता है।

(iv) प्रश्नावली के सार्थकता का भी पता पूर्व अध्ययन से ही चल पाता है। यहाँ यह कहना उचित होगा कि सर्वेक्षण से पूर्व अध्ययन के द्वारा ही अनावश्यक प्रश्नों को हटाकर सार्थक प्रश्नों को शामिल करने से शोध को एक सही दिशा मिल जाती है।

अगर किसी प्रश्न के उत्तर में नहीं जानते (don't know) उत्तर का ज्यादा प्रयोग किया गया हो तो इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उसे प्रश्न के उत्तर देने मे उत्तरदाता ने एक पलायनवादी रूख अख्तियार कर उस प्रश्न का जवाब देने से बचना चाहा है। इसीलिए इस प्रकार में उत्तर की अधिकांश मात्रा अगर पूर्व अध्ययन के दौरान दिखती है तो इसका सीधा अर्थ यह निकाला जाना चाहिए कि इस प्रकार के प्रश्नों को सर्वेक्षण के दौरान नहीं हटाया गया तो वे हमारे अध्ययन को प्रभावित कर सकते हैं।

(v) पूर्व अध्ययन का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि एक शोधकर्त्ता को सर्वेक्षण आयोजन के दौरान यह पता चल जाता है कि सर्वेक्षण के लिए उसे कितनी राशी खर्च करनी होगी तथा उसे कितना समय और मानव संसाधन की आवश्यकता होगी।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सर्वेक्षण नियोजन मे पूर्व अध्ययन का महत्त्व इतना ज्यादा है कि अब कोई भी शोधकर्त्ता अपने शोध को करने के पूर्व इसका सहारा लेता है जिससे उसे न सिर्फ सर्वेक्षण नियोजन मे मदद मिलती है अपितु उसे अपने उपकल्पनाओं तथा शोध प्रश्न को चुस्त कर उसे और स्पष्ट व निश्चित करने मे खास मदद मिलती है। पूर्व अध्ययन का आकार और क्षेत्र कितना व्यापक होगा यह इस बात पर निर्भर करता है कि एक शोधकर्त्ता के पास समय, मानव संसाधन तथा विषय वस्तु का क्षेत्र और शोध प्रश्न किस प्रकार के हैं। परंतु यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि एक शोधकर्त्ता के लिए पूर्व अध्ययन उसके लिए सर्वेक्षण से पूर्व की अंतिम सुरक्षा है जिसके द्वारा वह अपने शोध को और भी निश्चित तथा उसे और भी विश्वसनीय बना सकता है।

सर्वेक्षण के प्रकार

(Types of survey)

सर्वेक्षण के प्रकार उसके उद्देश्य से जुड़े होते है और संभवत् इसीलिए सर्वेक्षण के प्रकार को लेकर जिस सैद्धान्तिक पक्ष को ध्यान मे रखकर उसके प्रकारों की चर्चा की जाती है उसमें सर्वेक्षण के निम्न दो प्रकारों की चर्चा विशेष रूप से की जा सकती हैः

a. **विवरणात्मक सर्वेक्षण (Descriptive survey) :** इस प्रकार के सर्वेक्षण का उद्देश्य किसी भी सामाजिक तथ्य के बारे मे जानकारी देना होता है। उदाहरण स्वरूप जब एलेक्स इंकलेस (Alex Inkeles) ने अपनी पुस्तक What is sociologys में यह प्रश्न उठाया कि किसी भी वैज्ञानिक जानकारी के लिए What प्रश्न का उत्तर देना शोध का प्रथम चरण होता

है तो इस वकतव्य से उनकी मंशा इस बात की तरफ हमारा ध्यान आकृष्ट करना था कि जिस घटना व क्रिया का अध्ययन किया जाना है उसके स्वरूप के बारे मे जानकारी प्राप्त कर उसका वर्णन प्रस्तुत करना शोधकर्त्ता का पहला लक्ष्य होता है।

संभवतः इसीलिए चार्ल्स बूथ ने 1886-1902 के दौरान जब गरीबी का, अध्ययन किया तो इसके पीछे उनका प्राथमिक उद्देश्य था कि लंदन मे काम करने वाले श्रमिक की काम करने की स्थिति कैसी है? अर्थात उनका रहन-सहन कैसा है? किस प्रकार के आराम के साधन उनके पास है? इस प्रकार उनका सीधा उद्देश्य श्रमिक वर्ग की गरीबी के बारे मे जानकारी प्राप्त करना और इस जानकारी को व्यवस्थित तरीके से लोगों के सामने प्रस्तुत करना था। अपने अध्ययन के आधार पर चार्ल्स बूथ ने गरीबों को दो श्रेणी में बाँटा, एक श्रेणी वह थी जिसमे गरीब लोग आते हैं जो गरीबी की न्यूनतम सीमा रेखा के ऊपर है और दूसरा वर्ग गरीबों का वह है जो अतीनिर्धन है जो गरीबी की न्यूनतम सीमा रेखा से नीचे रहतें है और जिनकी आवश्यकता कभी भी समाप्त नहीं होती है।

b. **व्याख्यात्मक सर्वेक्षण (Explantory Survey) :** सर्वेक्षण का एक और उद्देश्य होता है तथ्यों के आधार पर घटनाओं की व्याख्या प्रस्तुत करना। अर्थात् यहाँ घटना का विवरण प्रस्तुत करने की बजाय उसकी व्याख्या प्रस्तुत करना हाते है। जब घटनाओं व किसी सामाजिक क्रिया की व्याख्या प्रस्तुत की जाती है तो इसके अतिरिक्त उद्देश्य निम्न हो सकते है :

(i) **एतिहासिक सर्वेक्षण (Historical Survey):** ऐतिहासिक सर्वेक्षण का उद्देश्य भी व्याख्यात्मक हो सकता है जिसमे बिती हुई घटना का व्याख्या कर कुछ ऐसे तथ्य की खोज करना होता है जिसे किसी कारणवश खोजा नहीं जा सका। चार्ल्स बूथ तथा राउनटी द्वारा किए गये सर्वेक्षण को इस श्रेणी मे डाला जा सकता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण को आधार बनाकर समाजशास्त्र में भी कई ऐसे सर्वेक्षण के लिए एक अलग से समाजशास्त्र की शाखा जिसे ऐतिहासिक समाजशास्त्र (Historical sociology) के रूप मे प्रसिद्धी मिली है उसका अपना अलग महत्त्व है। प्रायः समाजशास्त्रियों मे सामाजिक आंदोलनों के अध्ययन मे इस प्रकार के सर्वेक्षण का इस्तेमाल किया है।

(ii) **मूल्यांकनात्मक सर्वेक्षण (Evaluative Survey):** सर्वेक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य मूल्यांकन करना भी होता है। मंडल आयोग का गठन इसी उद्देश्य से किया गया था कि पिछड़ी जाति को जिन्हें आरक्षण का लाभ दिया जाना है उनका सही पता लगाया जाना आवश्यक है ताकि उन लोगों को जिन्हें अरक्षण की जरूरत नहीं है उनकी पहचान की जा सके और जो पिछड़े वर्ग की श्रेणी में नहीं आते परंतु आर्थिक रूप से पिछड़ेपन के तत्व देखे जा सकते हैं उनकी पहचान करना उस सर्वेक्षण का एक मुख्य उद्देश्य था। इसी आधार पर हरियाणा ने भी **गुरनाम सिंह कमीटी** का गठन कर अन्य पिछड़े वर्ग की श्रेणी मे जातियों को रखने के लिए एक सर्वेक्षण करवाया।

(iii) **निदानात्मक सर्वेक्षण (Diagnostic Survey):** जब किसी समस्या के निदान हेतु किसी सर्वेक्षण का सहारा लिया जाता है वो उसे निदानात्मक सर्वेक्षण कहा जाता है। इस प्रकार के सर्वेक्षण का उद्देश्य तात्कालिक होता है। कई बार जो निदानात्मक सर्वेक्षण का आधार सरकारी नीतियों से प्रेरित होता है जिसका खंडन दूसरे सामानान्तर सर्वेक्षण के द्वारा किया जाता है। हाल ही में 24 अप्रैल को 2003 को अखिल भारतीय प्रजातांत्रिक महिला समीति (All India Democratic Women's Association (AIDWA) ने सरकार द्वारा किये गये सर्वेक्षण के आधार पर बिलो पावर्टी लाइन (BPL) तथा एबव पावर्टी लेबल (APL) कार्ड के गलत आकलन का उजागर करते हुए बताया कि जितने भी विधवाएं, एबल व्यस्क महिला, अपंग पुरूष व स्त्री तथा 60 वर्ष से ऊपर को वे लोगों को चाहे वो बी०पी० एक कार्ड धारक दो या न दो उन्हें रियायती दर पर अनाज मुहयया करवाया जाना चाहिए ताकि वो लोग भूखमरी के शिकार न हो जायें। एडवा (AIDWA) के सह सचीव ब्रिंदा करत का कहना था कि उनके सर्वेक्षणे के दौरान उन्हें यह पता चला कि उत्तर प्रदेश में एक भूमिहीन विधवा महिला को इसलिए ए०पी०एल०(APL) कार्ड दिया गया क्योंकि उसके पास चार छोटे बेटे थे और यह मानकर की लड़के बोझ नहीं होते, लड़कियाँ बोझ होती है इसलिए इसे बी०पी०एल० (BPL) कार्ड नहीं दिया गया। अर्थात सर्वेक्षणकर्त्ता की यह धारणा थी कि लड़के बड़े होकर परिवार के लिए संपत्ति हो जाते है जबकि लड़कियाँ बड़ी होने पर परिवार पर बोझ होती हैं।

(iv) **भविष्य निर्देशक सर्वेक्षण (Prediction Survey) :** कुछ सर्वेक्षण भविष्य निर्देशक सर्वेक्षण साबित होतें है। अकसर इस प्रकार के सर्वेक्षण के द्वारा कुछ तथ्यों को आधार बनाकर भविष्यवाणी की जाती है। परंतु इस प्रकार के भविष्यवाणी सर्वेक्षण का भी आधार पूर्णतः वैज्ञानिक ही होता है। भारतीय मिटरोलोजिकल विभाग ने मानसून की भविष्यवाणी कुछ वर्षो में की है और वर्ष 2003 के लिए इस विभाग की भविष्यवाणी है कि एक बार मानसून सामान्य रहेगा। उनके आंकड़ों के आधार पर वर्ष 1988 से 2002 तक के भविष्यवाणी का निम्न तालिका से पता चल जाता है कि वे कहाँ तक सही होते हैं:

वर्ष	वर्षा का औसतन प्रतिशत	
	भविष्यवाणी	वास्तविक आंकड़े
1988	113	118
1989	102	106
1990	101	106
1991	94	91
1992	92	93
1993	103	100
1994	92	110
1995	97	100
1996	96	103
1997	92	102
1998	99	105
1999	108	96
2000	99	92
2001	98	92
2002	101	81

स्रोतः फ्रंटलाइन, मई 23, 2003 : 100

सर्वेक्षण के विभिन्न प्रकारों के वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सर्वेक्षण, उद्देश्य के अनुसार कई प्रकार के होते हैं परंतु आधुनिक युग में सर्वेक्षण का महत्त्व काफी बढ़ गया है। कई सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाएं सर्वेक्षण के द्वारा अपने योजनाओं को जनता तक प्रभावी रूप से पहुँचाने का स्रोत भी मानतें हैं इसीलिए सर्वेक्षण के कई अन्य प्रकारों का भी उल्लेख आवश्यक हैं। जो निम्न हैं:

1. **सरकारी सर्वेक्षण (Government Survey):** जनसंख्या संबंधी आंकड़ों को इकटठा करने के लिए भारत मे जनगणना की परंपरा 1872 से शुरू की गयी और उसके बाद प्रत्येक 10 वर्ष के बाद क्रमशः 1881 के विधिवत इसे चलाया गया। निःसंदेह जनगणना के स्वरूप मे तकनीकि के विकास के कारण अब जो परिवर्तन आये हैं वह चौंका देने वाली है। इस शताब्दी की पहली जनगणना 2001 फरवरी में शुरू हुई और मार्च के अंत तक उसमे प्राथमिक आंकड़े सरकार द्वारा घोषित कर दिये गये।

   सरकारी सर्वेक्षण में जनगणना द्वारा जो आंकड़े दिये जातें हैं उसको आधार बनाकर सरकार कई योजनाओं को लागू करती है। राज्य अपने स्तर पर भी इन आंकड़ों को आधार बनाकर कुछ और प्रकार के सर्वेक्षण भी करवाते हैं। इस प्रकार के नियमित सर्वेक्षण से सरकार अपने पंचवर्षीय योजनाओं को ज्यादा प्रभावी बनाने में सफल हो पायी है।

2. **मार्केट सर्वेक्षण (Market Survey):** बाजार में वस्तुओं के क्रय-विक्रय के उतराव-चढ़ाव को स्थिर रखने के उद्देश्य से कई संगठन मार्केट सर्वेक्षण का सहारा लेकर अपनी कंपनी द्वारा उत्पादित चीजों को बाजार में लाकर उसे प्रचारित करने का काम करते हैं।

3. **जनमत सर्वेक्षण (Public Opinion Survey):** जनमत सर्वेक्षण का प्रचलन भी आजकल चुनाव के दौरान काफी बढ़ गया है। इन जनमत सर्वेक्षण को करवाने वाले विभिन्न दूरदर्शन के चैनल ने विधिवत निदर्शन सर्वेक्षण के द्वारा कई बार चुनाव के फैसले का अनुमान लगाते हैं। चुनाव की घोषणा के बाद तथा नामांकन भरे जाने की सीमा के समाप्त होने के बाद तथा चुनाव प्रचार के समाप्त होने के बाद और यहाँ तक की चुनाव समाप्त होने के पश्चात् और गिनती के पहले। इस प्रकार के जनमत सर्वेक्षण के द्वारा राजनीतिक दल की स्थिति का अंदाज पहले से ही चल जाता है। इन जनमत सर्वेक्षणों की विश्वसनीयता निदर्शन तथा सर्वेक्षण आयोजन पर निर्भर करता है।

4. **श्रोता सर्वेक्षण (Audience Survey):** जब यांत्रिकी संचार के साधनों का प्रचार व प्रसार पूरी तरह नह हुआ था तब प्रतिष्ठित कंपनी अपने श्रोताओं के पसंद का अनुमान लगाने के लिए नियमित रूप से सर्वेक्षण का सहारा लेते थे। विदेशी कंपनियों में ब्रिटिश ब्रोडकास्टिंग कारपोरेशन का इस प्रकार का सर्वेक्षण करना सर्वविदित है। भारत में भी महानगरों में एफ एम चैनल को पुनः लोकप्रिय बनाने के लिए 2003 के मध्य से इसका प्रसारण आरंभ किया गया है जो युवाओं के पसंद को ध्यान में रखकर जिस प्रकार से प्रोग्राम प्रस्तुत करते हैं वे आज भी युवाओं में काफी लोकप्रिय हैं परंतु इस प्रकार के प्रसारण कुछ खास मेट्रों शहरों तक ही सीमित हैं।

उपर्युक्त सर्वेक्षण के प्रकारों के अध्ययन के बाद यह कहा जा सकता है कि शोध में सर्वेक्षण की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। कई बार यह प्रश्न उठाये जाते हैं कि सर्वेक्षण, सामाजिक अनुसंधान से किस प्रकार भिन्न हैं। संक्षेप में यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि सर्वेक्षण का उद्देश्य सदैव तात्कालिक होता है जिसके कारण सर्वेक्षण का एक खास उद्देश्य होता है जिसकी पूर्ति हो जाने के पश्चात् सर्वेक्षण की क्रिया समाप्त हो जाती है। परंतु इसके विपरित सामाजिक शोध में अनुसंधान व खोज का सिलसिला अनवरत चलता रहता है जिसके कारण सामाजिक शोध के निष्कर्ष सैद्धान्तिक उपागम की तलाश में एक महत्त्वपूर्ण जानकारी हमारे सामने रखते हैं जबकि इसके विपरित सामाजिक सर्वेक्षण का कुछ निर्धारित उद्देश्य होता है। सामाजिक शोध में भी निर्धारित उद्देश्य होता है परंतु इसके उद्देश्य अधिकांश रूप में शैक्षणिक होते हैं जिसके कारण सामाजिक शोध का कार्य एक जटिल कार्य है जबकि सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य सीमित होता है।

सामाजिक शोध के विभिन्न चरण
(Steps of Social Research)

जैसा कि पहले खंड में बताया जा चुका है कि सामाजिक शोध व अनुसंधान एक तार्किक तथा घटनाओं का क्रमबद्ध अध्ययन है जिसके द्वारा नवीन तथ्यों की खोज की जाती है, पुराने तथ्यों की जाँच-पड़ताल की जाती है या फिर मनुष्य के बीच के अंतः संबंध एवं नियमों का विश्लेषण कर कार्य-कारण संबंध स्थापित करने की कोशिश की जाती है। सामाजिक शोध के इन उद्देश्यों को अगर ध्यान में रखा जाये तो इसके विभिन्न चरणों की व्याख्या भी आवश्यक है। कोई भी सामाजिक शोध जिसमें घटनाओं व तथ्यों का क्रमबद्ध अध्ययन करने का प्रयास किया जाता है उसके लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक हैं -

1. सर्वप्रथम शोधकर्त्ता को इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि जिस विषय का चयन अध्ययन के लिए किया जा रहा है वह अध्ययन के योग्य भी है या नह । अर्थात् समस्या को अध्ययन योग्य माना जा सकता है या नह (Formulation of Problem)। कोई भी समस्या समाजशास्त्रीय अध्ययन के योग्य होगी ऐसा कहना गलत है। इसलिए समस्या के अध्ययन में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि समस्या से संबंधित जानकारी कैसे ली जा सकती है। उसके विभिन्न पहलुओं को कैसे संक्षेप में एक शोध योग्य कथन के रूप में चित्रित कर उसके विभिन्न पहलुओं का वैज्ञानिक खोज किया जा सकता है या नह ।

   किसी ऐसे विषय को अगर ले लिया जाये जो अपने आप में अस्पष्ट तथा अमूर्त्त है तो उसके अध्ययन में निश्चित रूप से परेशानी आयेगी। अगर कोई कहे कि 'भगवान है या नह ', यह विषय है अध्ययन का तो इस विषय के अध्ययन में जाहिर है परेशानी आयेगी। किसी वैज्ञानिक विधि द्वारा इस अमूर्त्त विषय का अध्ययन करना संभव नह है। इसलिए इ० दुर्खिम का मत था कि समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए समस्या को एक सामाजिक तथ्य के रूप में होना एक आवश्यक शर्त है। उसका सामाजिक तथ्य के रूप में होने से तात्पर्य यह था कि इसके स्वरूप में उसका बाह्यपन, उसका समाज के लोगों पर दवाब डालना, पूरे समाज के सदस्यों को प्रभावित करना और वस्तु के रूप में उसके अस्तित्व का होना

आवश्यक है तभी उसे समाजशास्त्र में अध्ययन के योग्य समझा जा सकता है। इसलिए इ० दुर्खिम ने अपनी पुस्तक रूल्स ऑफ सोशियोलोजिकल मेथड में इसका विस्तार से वर्णन किया था और उन नियमों को आधार बनाकर उन्होंने डिविजन ऑफ लेबर, सुसाईड का विस्तार से अध्ययन किया।

विषय का चुनाव एक महत्त्वपूर्ण चरण होता है। किसी भी शोध में अगर विषय का चुनाव संक्षिप्त तरीके से कर लिया जाये तो कोई परेशानी नह आती है। इसके लिए निम्न शर्तों का होना भी आवश्यक है-

(i) शोधकर्त्ता की दिलचस्पी उस विषय में हो;

(ii) उस समस्या पर शोध कार्य के लिए सामग्री उपलब्ध हो;

(iii) उस अध्ययन से जुड़े सैद्धान्तिक पक्ष व मान्यताओं की जटिलता;

(iv) उस समस्या से संबंधित पूर्व अध्ययन किए जा चुके हों।

इस प्रकार शोध कार्य में अगर उपर्युक्त बातों का समावेश हो तो समस्या की पहचान आसान हो जाती है और शोध कार्य को करने में भी आसानी होती है।

2. **शोध कार्य के लिए उपकल्पना का निर्माण (Construction of Hypothesis):** शोध कार्य के लिए उपकल्पना का निर्माण एक महत्त्वपूर्ण चरण है। उपकल्पना एक शोध के लिए तैयार किया गया वैज्ञानिक कथन है जिसे आधार बनाकर शोध किया जाता है। दुर्खिम ने भी आत्महत्या तथा डिविजन ऑफ लेबर के अध्ययन के दौरान कुछ उपकल्पना बनाकर खास तरह का अध्ययन किया था। आत्महत्या के लिए उनका मानना था कि व्यक्ति का एकांकी जीवन इसके लिए ज्यादा जिम्मेवार है। जो व्यक्ति अविवाहित रहता है या परिवार के साथ नह रहता उसमें आत्महत्या करने की संभावना ज्यादा होती है। उन्होंने यह भी पाया कि कैथोलिक धर्म के समर्थकों के अपेक्षा प्रोटेसटेंट धर्म के मानने वालों में आत्महत्या की वारदातें ज्यादा देखने को मिलती है। उसी प्रकार उनका मानना था कि जहाँ जनसंख्या का घनत्व ज्यादा होगा वहाँ डिविजन ऑफ लेबर ज्यादा होती है। जहाँ जनसंख्या का घनत्व कम होगा वहाँ डिविजन ऑफ लेबर भी कम होगी।

मैक्स वेबर ने भी अपनी पुस्तक प्रोटेसटेंट एथिक एंड स्पीरिट ऑफ कैपिटलिज्म में यह पाया कि कैथोलिक के बजाय प्रोटेसटेंट धर्म के मानने वालों में पैसे के प्रति रूझान ज्यादा था। इस प्रकार से उपकल्पना बनाकर अध्ययन करने से शोधकर्त्ता के शोध में निश्चितता तथा स्पष्टीकरण का समावेश बढ़ता है और शोधकर्त्ता को खास तथ्यों के साथ कार्य-कारण संबंध स्थापित कर किसी सिद्धान्त के पुष्टी तथा उसे नकारना आसान हो जाता है। एक उपकल्पना कहाँ तक उपयोगी सिद्ध होगी यह निम्न बातों पर निर्भर करता है-

(i) पैना निरीक्षण;

(ii) अनुशासित कल्पना तथा रचनात्मक सोच;

(iii) कुछ प्रतिपादित सिद्धान्त।

एक काम चलाऊ उपकल्पना के अभाव में शोधकर्त्ता अपने शोध को लक्ष्य तक पहुँचाने में असफल रहता है, समय ज्यादा लगता है, निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना भी मुश्किल हो जाता है। उपकल्पना का होना एक बात है और सही उपकल्पना का होना अलग इसलिए सही उपकल्पना का होना शोधकर्त्ता का काम आसान कर देता है। उसकी वैज्ञानिक विधि को सही दिशा प्राप्त होती है और शोध कार्य का प्रयोजन आसान हो जाता है।

3. **शोध कार्य के लिए निरीक्षण तथा शोध तकनीकि के द्वारा खोज करना** - शोधकर्त्ता के लिए निरीक्षण तथा शोध तकनीकि का खोज (observation and exploration of Scientific Technique) का अपना अलग महत्त्व है। शोध के लिए उपकल्पना के निर्माण के बाद तथ्यों का निरीक्षण कैसे किया जाना है तथा किस प्रकार की वैज्ञानिक विधि के द्वारा आंकड़े इकट्ठे किये जाने हैं इसकी उपयोगिता को सभी स्वीकार करते हैं। किस वैज्ञानिक तकनीकि व विधि के द्वारा ज्यादा विश्वसनीय आंकड़े इकट्ठे हो सकते हैं यह उस विधि के सही चयन से ही संभव है। शोध में प्रश्नावली तथा साक्षात्कार विधि का अक्सर इस्तेमाल किया जाता है परंतु प्रश्नावली विधि नह कारगर हो पाती है जहाँ उत्तरदाता शिक्षित हैं तथा इस प्रकार की विधि के महत्त्व को समझकर प्रश्नावली भरने में दिलचस्पी रखते हैं। साक्षात्कार विधि को भी एक उत्तम विधि माना जाता है क्योंकि इस विधि के द्वारा शोधकर्त्ता उत्तरदाता की विशिष्ट स्थिति को समझकर उसके बारे में

जानकारी प्राप्त कर सकता है जो कि प्रश्नावली में संभव नह है। प्रश्नावली के प्रश्न निश्चित तथा अपरिवर्तनशील होते हैं जबकि साक्षात्कार विधि में ज्यादा लचीलापन होता है।

सामाजिक मानवशास्त्रियों ने सहभागी निरीक्षण (Participant Observation) विधि का इस्तेमाल कर जनजातीय समाज के बारे में जानकारी इकट्ठा की। वेरियर एलविन के बारे में यह प्रसिद्ध है कि वह लगभग एक दशक तक उन जनजाती लोगों के साथ रहे जिनके उपर उन्हें काम करना था। मैलिनोषस्की तथा रैडक्लिफ ब्राउन जैसे सामाजिक मानवशास्त्रियों ने क्षेत्र विधि का प्रयोग कर जो आंकड़ें इकट्ठे किये वह अपने आप में काफी महत्त्व रखते हैं। हाँ ! इतना जरूर है कि सहभागी निरीक्षण द्वारा एकत्रित आंकड़ों को सांख्यिकी रूप देकर उसे प्रस्तुत करना तथा इसे आधार बनाकर निष्कर्ष निकालना शोधकर्त्ता की कुशलता व क्षमता के उपर निर्भर करता है।

4. **आंकड़ों के संकलन में एकरूपता (Uniform Collection of Data):** आंकड़ों के संकलन में एकरूपता रखना आवश्यक है वरना एकत्रित आंकड़ों से कोई भी निश्चित निष्कर्ष निकाल पाना मुश्किल है। इसलिए किसी भी घटना का निरीक्षण कर उससे संबंधित आंकड़ों को एक तार्किक क्रम में रखना आवश्यक है। तार्किक क्रम में आंकड़ों को रखने के दो विधि का अक्सर सामाजिक विज्ञान में प्रयोग किया जाता है। इन दो विधि के द्वारा शोध कार्य करने की परंपरा यों तो पुरानी है परंतु निगमन विधि (Deductive method) का प्रयोग अधिकांशतः प्राकृतिक विज्ञान में होता है जबकि आगमन विधि (Inductive method) का प्रयोग सामाजिक विज्ञान में किया जाता है। जहाँ निगमन विधि में जटिल व्यवहारों के निरीक्षण के आधार पर आंकड़े एकत्रित किये जाते हैं वह दूसरी ओर आगमन विधि में आंकड़ों को क्रमबद्ध तरीके से संयोजित कर जटिल व्यवहारों के क्रमशः निरीक्षण के उपरांत निष्कर्ष निकालने की कोशिश की जाती है। निगमन विधि में सामान्य से कुछ खास विचारों से संबंधित निष्कर्ष निकाले जाते हैं जबकि आगमन विधि में खास विचारों के क्रमशः निरीक्षण के उपरान्त ही किसी खास निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है।

5. **एकत्रित आंकड़ों का वर्गीकरण (Classification of gathered Data):** आंकड़ों के एकत्र कर लेने मात्र से ही शोध का कार्य पूरा नह हो जाता है। उन आंकड़ों को एक तार्किक द ष्टिकोण अपनाकर जब तक उन्हें तथ्यों के साथ जोड़कर वर्गीकृत न किया जाये उन आंकड़ों का कोई महत्त्व नह होता है। इसलिए पी०वी० यंग का मानना था कि तथ्य तभी तर्कसंगत होते हैं जब उन्हें किसी दूसरे तथ्य के साथ जोड़कर उन तथ्यों के प्रकृति के बारे में कुछ अनुमान लगाकर कहा जा सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि तथ्यों को एकत्रित कर उसे एक क्रमबद्ध तरीके से तथ्यों के लक्षण के आधार पर वर्गीकृत किया जाये। आंकड़ों के वर्गीकरण के द्वारा ही यह संभव हो सकता है। इसलिए आंकड़ों को वर्गीकृत कर उसे एक तर्कसंगत तरीके से किसी सैद्धान्तिक उपागम के प्रतिपादन या एतिहासिक प्रव त्ति के बारे में जानकारी देकर शोध को एक नयी दिशा दे सकता है। इसी बात को ध्यान में रखकर भारत की जनगणना 2001ए सीरीज-7, हरियाणा से निम्नलिखित आंकड़े प्रस्तुत किये जा रहे हैं जिन आंकड़ों के सही व्याख्यान से शोध को एक नयी दिशा मिल सकती है।

साक्षरता दर तथा स्त्री/पुरूष अनुपात 1951-2001

	साक्षरता दर			स्त्री-पु० अनुपात
वर्ष	योग	पु०	स्त्री	
1951	–	–	–	871
1961	–	–	–	868
1971	25.71	38.9	10.32	867
1981	37.13	51.86	20.04	870
1991	55.85	69.1	40.47	865
2001	68.85	79.25	56.31	861

स्रोतः भारत की जनगणना 2001, सीरीज-7, हरियाणा

उपर्युक्त आंकड़ों के आधार पर जहाँ यह कहना आसान है कि 1971 से 2001 तक महिलाओं की शिक्षादर में पाँच गुणा व द्धि हुई है जबकि पुरूषों के शिक्षादर में यह अनुपात लगभग 1971 से 2001 के बीच दुगना हुआ है। परंतु इन्ह आंकड़ों के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि पुरूष के अपेक्षा महिलाओं में शिक्षा दर का स्तर 1971-2001 के बीच अभी भी यह अंतर 20 प्रतिशत से उपर का ही है। स्त्री-पुरूष अनुपात में भी 1951-2001 के आंकड़े इसी तथ्य को दर्शाते हैं कि महिलाओं की संख्या पुरूषों के अपेक्षा और भी कम होती जा रही है। महिलाओं की स्थिति के आकलन के लिए इस प्रकार के आंकड़ों को इकट्ठा कर उसे अगर एक सैद्धान्तिक उपागम व योजना के तहत वर्गीकृत नह किया जाये तो उन आंकड़ों का कोई औचित्य नह रह जाता है। आंकड़ों को एकत्रित कर उसे वर्गीकृत करने में निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक हैं-

1. आंकड़ों में अपेक्षित समानता तथा असमानता;
2. आंकड़ों के वर्गीकरण में संबंधित तथ्यों का पुनर्निरीक्षण तथा तथ्यों के बीच आत्मनिर्भरता।
3. घटनाओं के क्रम के बीच पुनराव त्ति।

पालिन वी यंग का यह मानना है कि वर्गीकरण के लिए सुझाए गये उपर्युक्त हिदायतों के बावजूद भी कुछ आंकड़े ऐसे बच जाते हैं जिनका सही इस्तेमाल वर्गीकरण के बाद भी नह हो पाता - ऐसे आंकड़ों को अगर छोड़ दिया जाए तो एक महत्त्वपूर्ण जानकारी के नष्ट होने की संभावना है, इसलिए ऐसे आंकड़ों को संजोकर रख लेना चाहिए ताकि भविष्य में किसी योजना के तहत उन आंकड़ों को भी वर्गीकृत कर उनसे कुछ निष्कर्ष निकाला जा सके।

सामान्वीकरण

(Generalisation)

शोधकर्त्ता किसी भी प थक घटना को ज्यादा महत्त्व नह देता। इसलिए घटनाओं तथा तथ्यों के क्रमिक रूप को तर्कयुक्त तरीके से जोड़कर उससे एक अवधारणा का निर्माण करना भी उसका प्रमुख उद्देश्य होता है। इस उद्देश्य के आधार पर न केवल अवधारणा का निर्माण होता है बल्कि अवधारणाओं के आधार पर एक सामान्वीकृत धारणा भी तथ्यों के आधार पर बन पाती है। इसलिए शोधकर्त्ता की हमेशा यह कोशिश रहती है कि तथ्यों को संकलित कर उसे एक तार्किक पद्धति को अपनाकर अवधारणाओं का निर्माण करें। यह कहा जा सकता है कि तथ्यों के निरीक्षण के बाद अगर उसे किसी एक विचार या उससे जुड़े किसी और तथ्य से जोड़कर नह देखा जाये तो उस तथ्य के आधार पर कुछ निष्कर्ष निकाल पाना मुश्किल होता है। परंतु जैसे ही तथ्यों को और उससे जुड़े अन्य तथ्यों के साथ संगठित कर किसी विचार के साथ जोड़कर विवेकपूर्ण आधार पर विचारों को संगठित किया जाता है तो सिद्धान्त या सामान्वीकरण की दिशा में वह पहला कदम साबित होगा। सिद्धान्तों के प्रतिपादन के लिए यह आवश्यक है कि तथ्यों को संगठित कर उसे उस जैसे और भी तथ्यों के साथ मिलाकर कुछ अवधारणा के तहत तार्किक रूप से सुनियोजित किया जाए। इस प्रकार की अवधारणाओं के संगठित स्वरूप तथा उनसे जुड़े संबंधों को समझने के लिए सिद्धान्त बनाये जाते हैं जिसके आधार पर सामान्वीकरण किया जाता है। पालिन वी० यंग ने आर वी० ब्रेथवट के कथन को उद्ध त कर इस तथ्य का उजागर किया है। अगर एक व्यक्ति निराश है और निराश होकर अपने आवेश या आक्रोश को व्यक्त नह कर पाता है तो इसकी यह निराशा या आक्रोश किसी और जगह परिलक्षित होती है। इस द ष्टांत से यह प्रमाणित किया जा सकता है कि क्यों अधिकतर छात्र अपने निराशा के कारण सारा दोष अपनी असफलता के लिए शिक्षकों पर मढ़ देते हैं। एक कामकाजी महिलाओं को भी इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है जब कामकाज का बोझ उनके घर में तनाव की स्थिति पैदा करता है। परीक्षा में असफल रहने वाले छात्र अक्सर निराश होकर आत्महत्या करने की मनोव त्ति बना लेते हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि शोध के कई महत्त्वपूर्ण चरण हैं जिन सभी पर शोधकर्त्ता को समय, उद्देश्य तथा शोध के महत्त्व को ध्यान में रखकर निर्णय लेना पड़ता है। एक अच्छा शोधकर्त्ता वह होता है जो शोध व अनुसंधान के पहले ही उन मुद्दों पर विचार कर शोध की तैयारी करता है।

शोध प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषा

(Meaning and Definition of Research Design)

शोध प्ररचना का प्रथम लक्ष्य शोध को नियोजित करना होता है ताकि तार्किक निष्कर्ष निकाले जा सकें। शोध प्ररचना के द्वारा ही सामाजिक अनुसंधान को एक दिशा तथा लक्ष्य तक पहुँचाना संभव हो पाता है। इसलिए सामाजिक अनुसंधान में शोध प्ररचना

के महत्त्व को सभी स्वीकारते हैं। पालिन कै० यंग ने शोध प्ररचना की परिभाषा देते हुए कहा है कि "यह एक तार्किक तथा विधिवत योजना का एक प्रारूप है जिसके द्वारा शोध कार्य को दिशा निर्देश मिलता है।" प्ररचना सामान्य वैज्ञानिक प्रारूप का एक पहलू है जिसके द्वारा अनुसंधान के विविध तरीकों को पुष्ट किया जाता है। प्रारूप तैयार करने से पहले समय, संसाधन, उपलब्ध आंकड़ों तथा उपलब्ध राशि तथा उस संस्था व संगठन के बारे में विचार करना आवश्यक है जिसके द्वारा आंकड़े इकट्ठे किये जाने हैं। इसलिए इ० ए० सुक्मैन (Suchman) का कहना है कि 'प्रारूप के लिए कोई एक सही तरीका नह होता है' उनका कथन है कि शोध-प्ररचना कोई विशिष्ट योजना नह होती जिसे स्वीकार करना अनिवार्य हो, क्योंकि एक शोध प्ररचना में कई दिशा निर्देश होते हैं और आवश्यक यह है कि उनमें से किसी एक को सही मानकर सही दिशा में शोध को संचालित किया जाये। दूसरे शब्दों मे यह कहा जा सकता है कि अध्ययन के लिए प्ररचना का स्वरूप अक्सर प्रयोगात्मक होता है। जब कभी अध्ययन की शुरूआत होती है कई नये पहलु उभरकर आते हैं। इन नयी परिस्थितियों से आंकड़ों को तथ्यों के साथ जोड़कर नयी स्थितियों के अनुरूप अगर शोध प्ररचना के द्वारा उसे संशोधित कर नह संगठित किया गया तो शोध की उपयोगिता व सार्थकता ही समाप्त हो जायेगी।

शोध प्ररचना के उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि शोध प्ररचना की उपयोगिता व सार्थकता कई बातों पर निर्भर करती हैं। सैमुएल स्टाउफर (Samuel Stauffer) ने अपनी शोध पद्धति में निम्न बातों पर ध्यान देने की हिदायत दी जिनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण हिदायतें जो शोध प्ररचना के प्रयोग के समय आवश्यक साबित हो सकती है उनका उल्लेख यहाँ किया जा रहा है-

1. समस्या का शीघ्र अध्ययन;
2. समस्या से जुड़े लोगों से व्यक्तिगत संबंध स्थापित करना;
3. समस्या से जुड़े पहलुओं पर ध्यान रखने के लिए निरीक्षण, जाँच पड़ताल तथा प्राथमिक सर्वेक्षण;
4. अनौपचारिक साक्षात्कार के द्वारा लोगों से जानकारी प्राप्त करना;
5. प्राथमिक सलाह तथा संबंधित लोगों से वार्तालाप;
6. प्रश्नावली तथा अनुसूचि का निर्माण उनका परीक्षण;
7. अस्पष्ट, अनियमित तथ्यों का बहिष्कार;
8. क्षेत्रीय साक्षात्कार के लिए तैयारी करना;
9. संकलित आंकड़ों का विश्लेषण;
10. रिपोर्ट तैयार करना।

इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान में कई बातों को ध्यान में रखकर शोध प्ररचना को ठोस आधार दिया जाता है।

शोध प्ररचना के प्रकार

(Types of Research Design)

शोध प्ररचना के उद्देश्य को ध्यान में रखकर विभिन्न विद्वानों ने इसके प्रकारों का वर्णन प्रस्तुत किया है। कर्लिंजर ने शोध प्ररचना के प्रकारों का वर्णन करते हुए प्रयोगात्मक शोध-प्ररचना (Experiment Research Design) को काफी महत्त्वपूर्ण माना है। गुडे तथा हाट ने भी शोध प्ररचना के प्रकारों में प्रयोगात्मक शोध प्ररचना के महत्त्व के समझकर सिर्फ उस शोध प्ररचना का वर्णन ही अपनी पुस्तक में किया है परंतु शोध प्ररचना के समुचित प्रकारों की जानकारी के लिए यह आवश्यक है कि इसके निम्न चार प्रकार तथा उनके उप प्रकारों का वर्णन किया जाये:

1. **वर्णनात्मक शोध प्ररचना (Descriptive Research Design):** तथ्यों को आधार बनाकर उस समस्या से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए जिन शोध प्ररचना का वर्णन प्रस्तुत किया जाता है उसे वर्णनात्मक शोध प्ररचना कहते हैं। विषय, घटना व समस्या से संबंधित जानकारी का विवरण विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया जाता है। समाजशास्त्रीय अध्ययन में किसी भी घटना व समस्या का विवरण प्रस्तुत करना वैज्ञानिक अध्ययन व शोध का पहला चरण होता है। इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उस समस्या से संबंधित सारी जानकारी प्राप्त की जा सके ताकि शोध से संबंधित कोई पहलू वास्तविक शोध के समय में अछूती न रह जाये। उदाहरण के लिए यह कहा जा सकता है कि जब

सरकार ने मंडल कमीशन को अन्य कमजोर वर्गों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए गठित किया तो इसके पीछे मन्शा यह थी कि कमजोर वर्ग चाहे वो सामाजिक, आर्थिक व अन्य कारणों से हों उसकी पहचान की जाये और उस पहचान के पश्चात् ही आरक्षण प्रदान करने हेतु कोई निर्णायक फैसला लिया जा सके। अतः कमजोर वर्ग से जुड़ी जातियों के साथ ही साथ अन्य जातियों के बारे में वास्तविक तथ्यों को किसी वैज्ञानिक विधि के द्वारा आंकड़े एकत्रित करने का प्रयास किया गया। इस प्रकार से जिस शोध प्ररचना का प्राथमिक उद्देश्य वर्णनात्मक विश्लेषण कर कुछ खास निष्कर्ष पर पहुँचना होता है उसे वर्णनात्मक शोध-प्ररचना कहा जाता हैं

वर्णनात्मक शोध प्ररचना के सफल होने के लिए उन सभी बातों पर ध्यान देना आवश्यक है जिसका वर्णन शोध पद्धति के विभिन्न चरणों के विवरण के दौरान लिखा जा चुका है।

2. **अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना (Exploratory Research Design):** अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना के पीछे सर्वप्रथम उद्देश्य नये तथ्यों की खोज करना होता है। अतः जब किसी समस्या या घटना में छिपे कारणों की खोज की बात की जाती है तो उससे जुड़े प्रारूप को अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना की संज्ञा दी जाती है। जैसे युवाओं में नशाखोरी के कारणों का पता लगाना हो कि क्यों उनमें नशाखोरी तथा मादक व्यवसन के प्रति रूझान बढ़ा है तो शोध प्ररचना की रूप रेखा को इस प्रकार तैयार किया जाता है कि इस समस्या से जुड़े उपकल्पना के निर्माण से जिस नये तथ्य की खोज हम करना चाहते हैं उसमें सफल हो सकें। अगर मादक व्यवसन के शिकार युवाओं का ही अध्ययन करना हो तो यह पता करना आवश्यक होगा कि किस सामाजिक प ष्ठभूमि से आनेवाले लोगों में इस प्रकार का व्यवसन ज्यादा पाया जाता है? क्या वे सभी होस्टल में रहते हैं? उनके अपने सीनियर छात्रों के साथ संबंध कैसे हैं? और ऐसे व्यवसन के शिकार युवाओं की महत्वकांक्षाओं को किसी कारणवश ठेस पहुँची है जिसके कारण निराश होकर उन्होंने नशाखोरी का सहारा लिया जो अब उनके लिए उनके गले का फंदा साबित हो रही है।

युवाओं में इस विचलन (Deviance) की क्रिया का अध्ययन कर युवा व्यवहार का अध्ययन किया जाना काफी प्रासंगिक भी है। आज हम आसाम, पंजाब, जम्मु व काश्मीर तथा उत्तर पूर्वी क्षेत्र के कुछ राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों की बात करें तो वहाँ भी आतंकवादी समस्या यद्यपि बाह्य मदद से चलायी जा रही है परंतु इन इलाकों के युवा वर्ग को आकर्षित करने में युवाओं की अपनी स्थिति भी इसके लिए अनुकूल वातावरण तैयार कर देती है जिसके कारण युवाओं के पास आतंकवादी गुटों में शामिल होकर अपनी हताशा को दूर करने का एकमात्र सहारा बच जाता है। इस प्रकार की ज्वलंत समस्या को खोज कर युवाओं में व्याप्त असंतोष और उसके फलस्वरूप इनके व्यवहार में आनेवाले विचलन का अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना के द्वारा युवाओं में आये विचलन के कारणों का पता लगाया जा सकता है। अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना की रूप रेखा तैयार करते समय अन्य संबंधित बातों का भी पता चल सकता है जिसके उपर हमारा अभी तक ध्यान नह आकृष्ट हो पाया है।

जहाँ तक आतंकवादी गुटों में युवाओं को नियुक्त करने की शैली पर विचार किया जाये तो संभवतः उन युवाओं की मजबूरी का फायदा उठाकर ही आतंकवादी समूह इन्हें जघन्य अपराध करने के लिए प्रेरित करते हैं परंतु उस जघन्य अपराध को धर्म, विचारधारा, राष्ट्रवादी सोच या फिर संकीर्ण सांप्रदायिक व जातिय सोच के साथ जोड़कर उन क्रियाओं को तर्कसंगत तथा इस प्रकार की क्रियाओं में मरने वाले युवाओं को शहीद, जेहादी आदि विशेषणों की संज्ञा देकर उन युवाओं को भ्रमित करते हैं। ऐसे तथ्यों का पता चलाने में अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना के द्वारा किया गया शोध-कार्य निश्चय ही नयी बातों की खोज करने में काफी सहायक साबित होता है।

3. **निदानात्मक शोध प्ररचना (Diagnostic Research Design):** जिस प्रकार एक डाक्टर किसी बिमारी के कारण का पता लगाकर उसके उपचार के बारे में सोचता है उसी प्रकार एक शोधकर्त्ता की भी यह जिम्मेवारी बन जाती है कि वह समस्या का अध्ययन कर उस समस्या के निदान व मूक्ति कैसे पायी जा सके इसका भी उपाय बताये। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि शोधकर्त्ता जिस समाज का सदस्य होता है उस समाज के प्रति उसकी कुछ नैतिक जिम्मेवारी भी होती है जिसका निर्वाह करना उसका देश के नागरिक होने के कारण कर्त्तव्य भी बन जाता है। इस भूमिका का निर्वाह करने के लिए उसे बाध्य नह किया जा सकता परंतु सी० डब्लू० मिल्स (C.W. Mills) ने अपनी पुस्तक सोशियोलोजिक इमैजिनेशन (Sociological Imagination) में सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए इस प्रकार की प्रतिबद्धता को रेखांकित करते

हुए इस बात पर बल दिया है कि शोधकर्त्ता अपने शोध कार्य के द्वारा बेहतर समाज के निर्माण में रचनात्मक भूमिका अदा कर सकता है।

इस प्रकार एक निदानात्मक शोध प्ररचना में मूलभूत उद्देश्य न केवल विशुद्ध ज्ञान की प्राप्ति तक ही सीमित होता है बल्कि उसका उद्देश्य समस्या से जुड़े कारणों का पता लगाना होता है ताकि उस समस्या से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर विचार कर उससे जुड़े समाधान ढुंढे जा सकें। संक्षेप में यह कहा जा सकता है जब किसी खास सामाजिक समस्या के निदान के लिए शोध कार्य किये जाते हैं तो उससे जुड़े शोध की रूपरेखा में निदानात्मक शोध प्ररचना का खाका ख चा जाता है।

पिछले प ष्ठ पर जिस उदाहरण का वर्णन किया गया है जिसमें युवा असंतोष के कारणों का पता लगाकर युवाओं को कैसे विचलित होने से बचाया जा सकता है इसके बारे में विस्तार से वर्णन किया जा चुका है। उस उदाहरण के द्वारा ही यह सिद्ध हो जाता है कि एक शोध कर्त्ता अपने शोध के माध्यम से इस प्रकार के निदानात्मक शोध प्ररचना का नाम पर अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

4. **प्रयोगात्मक शोध प्ररचना (Experimental Research Design):** प्रयोगात्मक शोध प्ररचना का समाजशास्त्र में एक खास महत्त्व है और इस शोध प्ररचना के महत्त्व को इस बात से ही जाना जा सकता है कि इस शोध प्ररचना के द्वारा तार्किक रूप से प्रमाण जान स्टुआर्ट मिल द्वारा दिया गया है। जे० एस० मिल ने प्रयोगात्मक विधि को विकसित किया था और उस आधार पर ही आगे चलकर उसमें और भी कई नयी बातें जोड़कर उसे और भी तकनीकि स्तर पर पुष्ट किया गया। उनके विश्लेषण में दो विधि का विशेष रूप से वर्णन किया गया है जो निम्न हैं-

(i) ***सहमति विधि*** *(Method of Agreement):* जब किसी एक समस्या व क्रिया का केवल एक ही निष्कर्ष के द्वारा स्थिति को स्पष्ट करते हों तो कार्य-कारण संबंध स्थापित करना आसान हो जाता है। सरल अर्थ में यह कहा जा सकता है कि जब एक शोधकर्त्ता c स्थिति को हमेशा पायें जब z का अवलोकन करें तो यह कहा जा सकता है कि c और z में कार्य-कारण संबंध पाया जाात है। निम्न चित्र के द्वारा इसे अच्छी तरह समझने के लिए गुडे व हाट के द्वारा दिये गये उदाहरण का सहारा लिया जा सकता है। (देखें चित्र-1)

चित्र-1

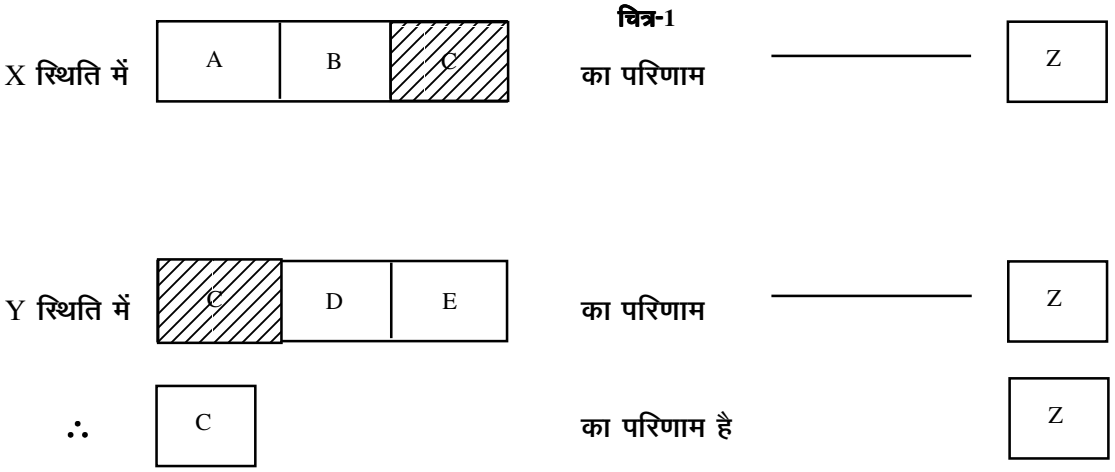

चित्र-1 से स्पष्ट है कि X स्थिति में जब ABC के होने पर परिणाम के रूप में Z निष्कर्ष दिखता है। और Y स्थिति में भी CDE के होने पर भी परिणाम के रूप में Z निष्कर्ष दिखता है। अर्थात् X तथा Y स्थिति में C एक सामान्य बात है जिसके कारण Z परिणाम के रूप में दिखता है। इस प्रकार दोनों परिस्थिति में C और Z के बीच एक सहमती है जिसके कारण यह कहा जा सकता है कि C और Z के बीच सीधा संबंध है।

(ii) ***असहमति विधि*** *(Method of Difference):* तार्किक रूप से प्रमाण असहमति विधि के द्वारा भी दर्शाया जा सकता है। जब दो स्थिति ऐसी हो जब एक में तो Z परिणाम के रूप में परिभाषित हो परंतु दूसरे में Z परिणाम के रूप में परिभाषित न हो तो इसे नकारात्मक सबूत व प्रमाण माना जा सकता है। इस स्थिति को भी चित्र-2 के द्वारा आसानी से समझा जा सकता है।

चित्र-2

X स्थिति में

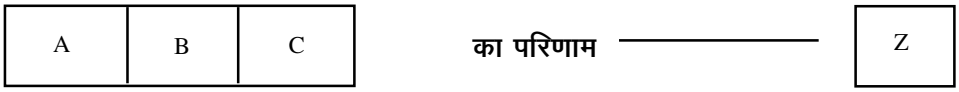

Y स्थिति में

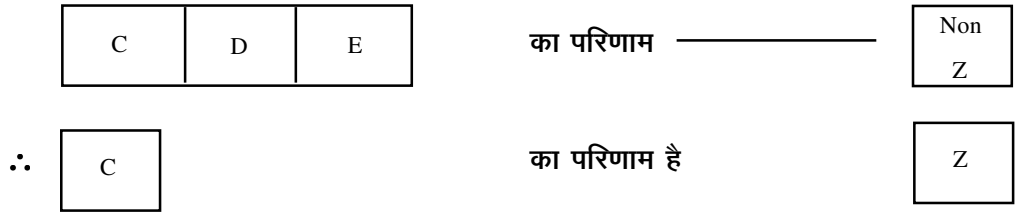

चित्र-2 से स्पष्ट है कि X स्थिति में जब ABC हो तब परिणाम के रूप में Z परिभाषित होता है और Y स्थिति में जब AB और C नह हो तो परिणाम के रूप में Z नह दिखता है तो इस उदाहरण से यह सिद्ध हो जाता है कि C का संबंध Z से है अर्थात् जब C परिभाषित नह होता है तो Z भी द ष्टिगोचर नह होता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कारक तत्त्वों को नियंत्रित कर विभिन्न प्रकार के प्रयोगात्मक निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं और इनके आधार पर निम्न तीन प्रकार के शोध प्ररचना की चर्चा आम तौर पर की जाती है-

1. **पश्चात् प्रयोग व परीक्षण (After-only Experiment):** पश्चात् परीक्षण व प्रयोग शोध प्ररचना में दो कारक तत्त्वों को चुन लिया जाता है और इनमें से एक को नियंत्रित किया जाता है और प्रयोगात्मक समूह या कारक तत्त्व में प्रयोग कर उसमें हुए परिवर्तन का आकलन कर यह देखा जाता है कि प्रथम कारक तत्त्व (X) की तुलना में प्रयोगात्मक कारक तत्त्व (Y) के व्यवहार में किस प्रकार के परिवर्तन दिखते हैं। दो विवाहित महिलाओं का समूह X और Y मान लिया जाय और X को नियंत्रित रखा जाय परंतु Y में प्रयोग के लिए उसे परिवार नियोजन के लाभ से अवगत करवाया जाये - स्लाइड्स तथा फिल्म के द्वारा। कुछ वर्ष बाद जब दोनों समूह की तुलना की जाये तो संभवतः यह नोटिस किया जा सके कि प्रयोगात्मक समूह में परिवार नियोजन के प्रति स्वस्थ द ष्टिकोण है जबकि नियंत्रित समूह में ऐसा कोई भी परिवर्तन नह आया है। इसलिए इस शोध प्ररचना को पश्चात् परीक्षण की संज्ञा दी गई है।
2. **पूर्व-पश्चात् प्रयोग व परीक्षण (Before-After Experiment):** इस प्रकार के प्रयोगात्मक शोध प्ररचना में एक ही तरह के कारक तत्त्वों अर्थात् अध्ययन समूह का चयन कर लिया जाता है और इन दो अध्ययन समूहों की तुलना एक अवस्था के पहले और बाद में किया जाता है। उदाहरणार्थ यह कहा जा सकता है कि परिवार नियोजन का अध्ययन विवाह के पूर्व और फिर विवाह के पश्चात् किया जाये तो तुलनात्मक विश्लेषण से यह पता चलाया जा सकता है कि परिवार नियोजन का ज्यादा लाभ विवाह के पश्चात् ही अध्ययन समूह को मिल सकता है। विवाह से पहले परिवार नियोजन पर दिखाये गये स्लाइड्स तथा फिल्म से फायदा नहीं होता है।
3. **कार्यान्तर-तथ्य प्रयोग व परीक्षण (Ex-post-facto-experiment):** इस प्रकार के शोध प्ररचना के बारे में पहले सोचा नह जाता है। यह परिस्थिति के अनुरूप ही प्रयोग की स्थिति उत्पन्न होने पर अक्सर इसके बारे में निर्णय किया जाता है। अर्थात् शोधकर्त्ता की आकस्मिक योजना (contingent plan) का हिस्सा होता है और परिस्थितियों के अनुरूप इस प्रकार के कार्यान्तर-तथ्य प्रयोग की आवश्यकता होती है। परंतु ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर भी इसे प्रयोग की वे सारी हिदायतें अपनानी पड़ती है जिसके पश्चात् प्रयोग तथा पूर्व पश्चात् प्रयोग के दौरान अपनाया जाता है ताकि शोधकर्त्ता अपनी शोध को सफलतापूर्वक करने में सफल हो सकें।

उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि संस्थापित प्रयोगात्मक प्ररचना (classical experimental design) में दो प्रयोगात्मक समूह को नियंत्रित तथा प्रयोग के लिए चुनकर विभिन्न स्थितियों में प्रयोगात्मक प्रेरक तत्त्वों के द्वारा शोध किये जाते हैं। इस प्रकार के शोध प्ररचना का प्रचलन कृषि क्षेत्र में भी कृषि से जुड़े उन्नत बीज की खोज में काफी सफलता पूर्वक किया गया है। यहाँ पर यह जान लेना भी पर्याप्त होगा कि शोधकर्त्ता के लिए प्रयोगात्मक प्ररचना के साथ-साथ और अन्य प्ररचनाओं की भूमिका का भी प्रयोग काफी लाभदायक साबित होता है।

सारांश

इस इकाई में वैज्ञानिक विधि के अर्थ एवं परिभाषा को समझाने का प्रयास किया गया है। वैज्ञानिक विधि के प्रकृति एवं उसके महत्त्व को समझाने के लिए इस पाठ में प्रयास यह किया गया है कि शिक्षार्थियों को जहाँ तक संभव हो सके समाजशास्त्रियों के संस्थापित अध्ययनों की भी जानकारी दी जाये। उन समाजशास्त्रियों की कृतियों का अध्ययन समाजशास्त्र की मौलिक अवधारणाओं के अध्ययन के दौरान भी आप लोगों ने किया होगा। उन्ह अवधारणाओं को आधार बनाकर सामाजिक अनुसंधान से जुड़े वस्तुनिष्ठ तथा आत्मनिष्ठ उपागम की भी चर्चा विस्तार से की गयी है ताकि शिक्षार्थी आसानी से उन अवधारणाओं तथा उपागमों को स्मरण कर सकें। अगर आगे उन पुस्तकों को आधार बनाकर समाजशास्त्रीय अध्ययनों को उदाहरण के लिए प्रस्तुत भी किया जा सके। अनुभाविक शोध के विस्तार से वर्णन के दौरान भी कुछ प्रचलित समाजशास्त्रियों के विचारों तथा अवधारणाओं को आधार बनाकर उसे समझाने की कोशिश की गयी है और सामाजिक सर्वेक्षण के उपर विस्तार से चर्चा करते हुए इससे संबंधित कुछ ऐसे उदाहरणों के द्वारा चर्चा की गई है जो हमारे दैनिक जीवन के अभिन्न अंग बन चुके हैं। इन तात्कालिक उदाहरणों की मदद से अवधारणाओं को समझना आसान हो जाता है। विद्यार्थियों को इस पाठ में सामाजिक शोध के विभिन्न चरणों का कैसे प्रयोग किया जाये, इसका भी वर्णन समाजशास्त्रिय अध्ययन के संदर्भ में ही करने का प्रयास किया गया है शोध प्ररचना का वर्णन भी इस पाठ के आरंभ में प्रस्तुत किये गये मुख्य आधारभूत तत्त्वों को आधार बनाकर किया गया है। इसलिए इस पाठ को जहाँ तक संभव हो सके विद्यार्थियों के लिए ग्राह्य बनाकर प्रस्तुत करने की कोशिश की गयी है और ऐसा करते वक्त यह ध्यान रखा गया है कि इस पाठ की गुणवत्ता बनी रहे।

मुल्यांकन हेतु प्रश्न

मुल्यांकन हेतु जिन प्रश्नों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है, उसे उदाहरणस्वरूप ही ध्यान में रखना आवश्यक है जो निम्न हैं -

1. वैज्ञानिक विधि क्या है? वैज्ञानिक विधि की प्रकृति पर एक निबंध लिखें।
2. वैज्ञानिक विधि की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए इसके महत्त्व का वर्णन करें।
3. सामाजिक अनुसंधान में वस्तुनिष्ठ उपागम की विशेषताओं एवं महत्त्व का विस्तार से वर्णन करें।
4. वस्तुनिष्ठ तथा आत्मनिष्ठ उपागम के बीच के अन्तर को स्पष्ट करें।
5. अनुभाविक अनुसंधान का समाजशास्त्र में क्या महत्त्व है? समाजशास्त्र में सिद्धान्त प्रतिपादन में यह कहाँ तक सक्षम है?
6. किन परिस्थितियों में सामाजिक सर्वेक्षण का प्रयोग ज्यादा लाभदायक साबित हो सकता है?
7. सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न सोपानों का शोध में क्या महत्त्व हैं?
8. शोध प्ररचना के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करें।
9. निम्न पर नोट लिखें-
   (i) **वस्तुनिष्ठ उपागम** (Objectivist Approach)
   (ii) **आत्मनिष्ठ उपागम** (Subjectivist Approach)
   (iii) **सर्वेक्षण आयोजन** (Survey Planning)
   (iv) **पूर्व सर्वेक्षण** (Pilot Survey)
   (v) **प्रयोगात्मक शोध प्ररचना** (Experimental Research Design)

अध्याय-3
शोध विधि तथा आंकड़े एकत्रित करने की तकनीकी
(Methods of Research and Techniques of Data Collection)

परिमाणात्मक विधि का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Quantitative Method)

जेवोन्स तथा नागेल (Jevons & Nagel) ने अपनी पुस्तक 'द प्रिंस्पिल्स आफ सांईस (The Principles of Science)' में स्वीकार किया है कि तार्किक सोच के दो अध्ययन क्षेत्र हैं- हम या तो परिमाणात्मक विधि का सहारा लेकर घटनाओं का वर्णन करते हैं या फिर गुणात्मक विधि का सहारा लेकर घटनाओं की व्याख्या करते हैं। जहाँ परिमाणात्मक विधि को विस्त त अर्थ के द्वारा उसके विशेष तत्त्व की जानकारी मिलती है, वह इसकी ओर गुणात्मक विधि के द्वारा घटनाओं के बारे में जो जानकारी मिलती है, उसके महत्त्व को भी नकारा नह जा सकता है। हाँ! शोधकर्त्ता अपने शोध के दौरान यह जरूर महसूस करते हैं कि प्रत्येक घटना क्रम को जिसे हम महसूस करते हैं उसे अगर गुणात्मक रूप से ही देखा जाये तो उसके विशिष्ट तत्त्व की पहचान निश्चित रूप से नह हो सकती और हमारी जानकारी अस्पष्ट रह जाती है। इसलिए घटनाओं के गुणात्मक क्रम को परिमाणात्मक अभिव्यक्ति प्रदान कर उसे स्पष्ट सांख्यिकी इकाई के रूप में प्रस्तुत करना ही परिमाणात्मक विधि का प्रथम उद्देश्य होता है। अक्सर हम गर्मी के दिनों में यह कहते हैं कि भीषण गर्मी पड़ रही है परंतु अगर हम कहे कि आज तापमान बढ़कर 48°c होने की संभावना है तब जो हमें जानकारी मिलती है वह चौंका देने वाली होती है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि गुणात्मक तथ्य को परिमाणात्मक अर्थात् आंकड़ों की तरह निर्धारित कर भी प्रस्तुत किया जा सकता है। गुडे तथा हाट का कहना है कि निर्धारित राशि अर्थात् quantification के द्वारा निश्चितता तथा विश्वसनीयता बढ़ जाती है। किसी भी गुणात्मक तथ्य (qualitative fact) को जब सांख्यिकी रूप दिया जाता है तो उससे सिर्फ निष्कर्ष यह निकाला जाना चाहिए कि घटना या तथ्यों को संक्षिप्त और वैज्ञानिक तरीके से प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है। गुणात्मक तथ्यों में भी मापदंड किया जा सकता है परंतु यहाँ मापदंड उतना संक्षिप्त तथा सांख्यिकी रूप से निश्चित नह होता जितना कि परिमाणात्मक विधि के द्वारा संभव हो पाता है।

गुडे तथा हाट का मानना था कि गणित तथा सांख्यिकी के प्रयोग से यह निष्कर्ष निकालना भ्रामक होगा कि तथ्यों की व्याख्या सिर्फ सांख्यिकी विधियों के प्रयोग से सही मापदंड तथा सबूत इसके द्वारा मिल जाते हैं, सही नह होगा। उनकी यह मान्यता थी कि किसी भी शोध तकनीकि में वैज्ञानिक परिणाम प्राप्त करने के लिए निम्न बातों की ओर ध्यान देना आवश्यक हैं -

1. निरीक्षण कितना सही है?
2. क्या दूसरे वैज्ञानिक उस निरीक्षण की पुनराव त्ति कर सकते हैं?
3. क्या आंकड़े निष्कर्ष के अनुरूप हैं? - शोधकर्त्ता को सावधान करने के लहजे में गुडे तथा हाट का कहना था कि अगर निरीक्षण सही नह है तो कामचलाऊ निरीक्षण के आधार पर तथ्यों को सांख्यिकी आंकड़ों का असली जामा पहना देने मात्र से शोध का काम सफल नह हो जाता है। परिमाणात्मक (quantitative method) विधि को सांख्यिकी आंकड़ों व इकाई के रूप में तबदील कर देने मात्र से ही शोधकर्त्ता का काम पूरा नह हो जाता है। इसलिए कहा जा सकता है कि यद्यपि परिमाणात्मक विधि में गुणात्मक तथ्यों (quantitative facts) को सांख्यिकी तथ्यों (Statistical

facts) के रूप में परिवर्तित कर घटनाओं व समस्याओं का विश्लेषण किया जाता है। परंतु यह कहना जितना आसान लगता है करना उतना ही मुश्किल होता है। उपर्युक्त सीमाओं के बावजूद भी परिमाणात्मक विधि के उपर्युक्त व्याख्यान को इसके निम्न विशेषताओं एवं महत्त्व का उल्लेख आवश्यक प्रतीत होता है।

(i) **गुणात्मक तथ्यों के क्रम को परिमाणात्मक तथ्यों के क्रम में परिवर्तित करना** (Conversion of Qualitative Series of Data into Qualitative Series of Data)

(ii) **अधिकाधिक सुस्पष्टता** (Greater Precision)

(iii) **सुस्पष्ट मापन** (Precise Measurement)

(iv) **वैज्ञानिक अवधारणाओं का प्रयोग** (Use of Scientific Concepts having one Definition) **जिसे तकनीकि दृष्टि से परिभाषित किया गया हो।**

(v) **विश्वसनीयता** (Reliability)

(vi) **प्रयोगात्मक आधार पर तथ्यों का परिक्षण** (Verification of Facts Based on Experiments)

(vii) **विश्वसनीय भविष्यवाणी** (Reliable Forecast)

1. परिमाणात्मक विधि की प्रमुख विशेषता होती है गुणात्मक तथ्यों के स्वरूप को बदलकर उसे एक निश्चित सांख्यिकी पहचान देना। इस प्रकार का प्रावधान किसी भी परिणात्मक अध्ययन की एक निश्चित लक्ष्य तक पहुँचाने में सफल होता है। जो उपकल्पना तैयार होते है उससे तथ्यों को इकटठा कर एक क्रम में भगाने में सहुलियत होती है जिसके आधार पर निष्कर्ष भी तथ्यों के अनुरूप होते हैं। इन तथ्यों के आधार पर सारिणी, चार्ट या अन्य ग्राफिक रूप से प्रस्तुत कर उस घटना तथा समस्या में विभिन्न आयामों को प्रभावी तरीके से प्रस्तुत किया जा सकता है।

2. **आधिकाधिक सुस्पष्टताः** शोध में शोध विषय से जुड़े उपकल्पनाओं का संक्षित होना, उसे एक सांख्यिकी चिन्ह देकर उसके विश्लेषण करने में तथ्यों को एक दूसरे से जोड़कर उसका विश्लेषण करने में काफी सहायता मिलती हैं। परिमाणात्मक विधि में जहाँ तक संभव हो पाता है शोध संबंधी प्रश्नों को संक्षिप्त रखकर उसे सुस्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है।

3. **सुस्पष्ट मापनः** परिमाणात्मक विधि एक महत्त्वपूर्ण विशेषता समस्या से संबंधित तथ्यों के मापन की होती हैं। समाजशास्त्र में मनुष्य के व्यवहार से जुड़ी क्रियाओं को उस व्यक्ति से रूझान के अनुरूप मापने का भी प्रावधान होता है। कई स्केल (मापक्रम) भी तैयार किये गये हैं जिसके द्वारा व्यक्ति का किसी चीज, वस्तु, स्थान, घटना, विचार के प्रति रूझान जानने में मदद मिलती है। लिकर्ट तथा थर्स्टन द्वारा बनाये गये स्केल की मदद से व्यक्ति के इन रूझानों का अंदाज लगाया जा सकता है। समाजशास्त्र में कुछ Sociometric स्केल भी तैयार किये गये हैं जिसके द्वारा चुनाव के अध्ययन में यह पता लगाया जा सकता है कि लोकप्रिय नेता कौन है?

4. वैज्ञानिक अवधारणाओं का प्रयोग करने के परिमाणात्मक विधि के द्वारा समस्या व घटना का मुल्यांकन करना आसान हो जाता है। किसी प्रेरक तत्व का प्रभाव जानने के लिए इस प्रकार के अवधारणाओं का स जन करना भी आसान हो जाता है। वैज्ञानिक अवधारणाओं का परीक्षण कर उसे ठोस सैद्धान्तिक आधार भी दिया जा सकता है। वैज्ञानिक अवधारणाओं के परीक्षण के बाद अगर यह पता चल जाता है कि उसका कोई प्रभाव नहीं रह गया है तो बदलते परिस्थिति के अनुसार संभव है उन वैज्ञानिक अवधारणाओं को या जो पूर्णतया छोड़ा जा सकता है या फिर उसमें संशोधन लाने की जरूरत हो सकती है।

5. **विश्वसनीयताः** परिमाणात्मक विधि का विशेषता इस विधि के द्वारा निकाले गये निष्कर्ष की विश्वसनीयता हैं। यहाँ जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं वो आंकडों पर आधारित होतें है जिन आंकडों का निरीक्षण व परीक्षण दूसरे शोधकर्त्ता द्वारा आसानी से किया जा सकता है। समाजशास्त्र में निष्कर्ष निकालने की जिस तार्किक क्रिया का इस्तेमाल किया जाता है उसमें निगमन विधि तथा आगमन विधि दोनों का प्रयोग समान रूप से नहीं होता है। निगमन विधि का ज्यादातर प्रमाण प्राकृतिक विज्ञान में किया जाता हैं जहाँ एक प्रतिपादित सिद्धान्त की पुष्टि के लिए तथ्यों की जाँच पड़ताल की जाती है। चुँकि अधिकांश समस्याओं के वर्णन में प्राकृतिक विज्ञान निगमन तर्क का प्रयोग करते हैं इसलिए इसकी विश्वसनीयता काफी बढ़ जाती है। संभवतः इसीलिए सामाजिक वैज्ञानिक भी अपने शोध की विश्वसनीयता

को बढ़ाने के लिए गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तरीकों के द्वारा उसे सांख्यिकी रूप देकर अपने शोध अध्ययन को ज्यादा विश्वसनीय बनाने की कोशिश करते हैं।

6. परिमाणात्मक विधि का आधार तथ्यों के प्रयोगात्मक परीक्षण पर निर्भर होता है। अर्थात् प्रयोग के आधार पर बार-बार किसी भी तथ्य का परीक्षण कर उसकी सत्यता कि पुष्टि की जा सकती है। जिस प्रकार से प्रयोग निरंतर करने के अवसर प्राकृतिक विज्ञान में उपलब्ध होते हैं उसी प्रकार ऐसी संभावना सामाजिक विज्ञान में किये गये समस्याओं के अध्ययन में थोड़ा जटिल होता है।

7. परिमाणात्मक विधि के द्वारा जो अध्ययन किये जाते हैं उसकी विश्वसनीयता चुँकि अधिक होती है इसलिए किसी भी भविष्यवाणी को आधार बनाकर सामान्वीकरण किया जा सकता है। चुनाव के समय प्रत्याशियों के जीतने के प्रतिशत के बारे में भी भविष्यवाणी इसी आधार पर दिये जाते हैं। यहाँ तक कि सामान्य चुनाव में किस पार्टी को बहुमत मिलेगा या फिर अगर बहुमत मिलता है तो उस बहुमत का प्रतिशत कितना होगा इन सभी बातों की जानकारी परिमाणात्मक विधि के सही प्रयोग से एक शोधकर्त्ता लगा सकता है।

उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि शोध करते समय हमें यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यह शोध परिमाणात्मक विधि के द्वारा सफलतापूर्वक किया जा सकता है या फिर गुणात्मक विधि द्वारा। परिमाणात्मक विधि के अर्थ एवं विशेषताओं तथा महत्व को समझ लेने के बाद अब यहाँ पर गुणात्मक विधि की चर्चा करेंगें।

गुणात्मक विधि का अर्थ एवं विशेषताएं
(Qualitative Method: Meaning & Characteristics)

वैज्ञानिक विधि का इस्तेमाल केवल निर्जिव पदार्थो तक ही सीमित नहीं होता है और यही कारण है कि वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करने वाले प्राकृतिक वैज्ञानिकों ने यह महसूस किया कि भौतिक पदार्थो के अध्ययन के साथ-साथ मानवीय तथा सामाजिक घटनाओं, स्थितियों, तथ्यों का अध्ययन भी हम सभी के लिए काफी महत्त्व रखता है। यहाँ भी विज्ञान की पद्धति के द्वारा हम अपने तार्किक सोच की क्रिया से जिन चीजों को हम जानतें हैं उसे समझते हूए जो घटनाएं हमारे लिए अनिभिज्ञ हैं उसे जानने की कोशिश कर सकते हैं। फ्रांसीस बेकन ने इसीलिए विशुद्ध रूप से अनुभाविक (empirical method) विधि के बजाय अनुभूति के आधार पर उपकल्पना तैयार करने की पेशकश की थी। उनका मत था कि संभावनाओं तथा कुशल बौद्धिक सोच के आधार पर भी आगमन विधि के द्धारा घटनाओं व समस्या के बारे ऐतिहासिक जीवनी या जीवनी के द्वारा भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार के अध्ययन को प्राप्त करने के लिए जिन आंकड़ों की जरूरत पड़ती है वे आंकड़ें सांख्यिकी रूप में मौजूद नहीं होते परंतु फिर भी उनके द्वारा घटनाओं के बारे में काफी जानकारी मिल जाती है। कोहेन तथा नागेल का भी मानना है कि किसी भी वैज्ञानिक कथन को दो प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है-उनके गुणात्मक पहलू के आधार पर और उनके परिमाणात्मक पहलू के आधार पर। गुणात्मक तथा परिमाणात्मक पहलू के आधार पर किसी कथन को निम्न चार निश्चित रूपों में बाँटा जा सकता है उदाहरणार्थ यह कहना कि

उपकल्पना	कथन का वर्गीकरण	सांख्यिकी पहचान
सभी साँप जहरीले होते हैं-	सार्वभौमिक सापेक्ष कथन	A
कोई भी राजनेता देशद्रोही नहीं होता है	सावैभौमिक नकारात्मक कथन	E
कुछ शिक्षक कोमल-ह्रदयी होते हैं	विशिष्ट सापेक्ष कथन	I
कुछ अनपढ़ मुर्ख नहीं होते हैं	विशिष्ट निकारात्मक कथन	O

गुणात्मक विधि का शोध में एक खास महत्त्व है। इस विधि के द्वारा शोध की पंरपरा विशेषकर सामाजिक विज्ञान में काफी पुरानी है। इस विधि के द्वारा भी सामाजिक वैज्ञानिकों ने तथ्यों की खोज निकालने तथा समस्याओं व घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने का दावा किया है। कुछ लोग गुणात्मक विधि की तुलना प्राकृतिक विज्ञान में किये जाने वाले प्रत्यक्षवाद के सिद्धान्त से जोड़कर करते हैं और प्रत्यक्षवाद की तुलना में गुणात्मक विधि द्वारा एकत्रित जानकारी को ज्यादा वैज्ञानिक नहीं माना जाता है। इस प्रकार कुछ शोधकर्त्ता गुणात्मक विधि द्वारा एकत्रित जानकारी की विश्वसनीयता की तुलना परिमाणात्मक विधि जिसमें वैज्ञानिक प्रत्यक्षवाद का प्रयोग किया जाता है उससे कर देखकर इन दोनों विधि के परस्पर गुणवत्ता

का आकलन करतें हैं जो अपने आप में भ्रामक साबित हो सकती है। चुंकि परिमाणात्मक या सांख्यिकीय विधि (Quantiative method) में प्रत्यक्षवाद को आधार बनाकर शोध की जाती है। इसीलिए जिस किसी भी समाजिक गातिविधि का अध्ययन किया जाता है उसकी माप की जा सके और इसके लिए सांख्यिकीय तथा गणित के तकनीकि का इस्तेमाल कर समस्या व घटना की व्याख्या प्रस्तुत की जाती है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि गुणात्मक विधि में शोधकर्त्ता का उद्देश्य ज्ञान प्राप्त करने के लिए मनुष्य के व्यवहार से जुड़े उन घटनाओं का अध्ययन करना होता है जिसे सांख्यिकी स्तर पर उसका माप नहीं किया जा सकता है परंतु उसके गुणात्मक पहलु का मानसिक स्तर पर विश्लेषण करने का प्रयास किया जाता है। गुणात्मक विधि के अर्थ एवं प्रकृति को समझ लेने के बाद इसकी विशेषताओं के बारे में जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है। इस विधि के निम्न विशेषताओं का उल्लेख करना आवश्यक हैः

1. गुणात्मक विधि में तथ्यों के स्वरूप को सांख्यिकी इकाई के रूप में परिवर्तित कर उसका विश्लेषण ऐच्छिक होता है। यहाँ शोधकर्त्ता को अगर जरूरत महसूस हो तब वह गुणात्मक तथ्यों को एक सांख्यिकी तथ्य बनाकर उसे विश्लेषण के लिए प्रयोग में ला सकते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि जहाँ एक ओर गुणात्मक तथ्यों को विश्लेषित कर उससे कुछ निष्कर्ष निकालने में शोधकर्त्ता की दिलचस्पी नही होती है वहीं दूसरी ओर जो शोधकर्त्ता गुणात्मक तथ्यों के महत्त्व को समझते हैं वे अपने सूक्ष्म मानसिक तथा पैनी सोच के आधार पर उन गुणात्मक तथ्य को ही अपने विश्लेषण का आधार बनाते हैं।

2. गुणात्मक विधि में मानवीय व्यवहार के विश्लेषण के लिए आत्मनिष्ठ तथ्यों को कार्य कारक संबंध के लिए भी प्रयोग में लाया जाता है। जर्मनी के प्रसिद्ध समाजशास्त्री मैक्स वेबर ने यह महसूस किया कि एक समाजशास्त्री चाहकर भी अपने आप को जिस विषय पर वह काम करना चाहता है उससे अलग रखने में अक्सर असमर्थ पाता है। ऐसा इसलिए भी होता है कि मनुष्य के प्रत्यक्ष व्यवहार सदैव उसके वास्तविक मनःस्थिति अर्थात् इसके इच्छित मनोवैज्ञानिक दशा को नहीं दर्शाते। इसलिए वेबर की यह मान्यता थी कि गुणात्मक विधि के इस्तेमाल करने वाले शोधकर्त्ता प्रत्यक्ष व्यवहार तथा मनोवैज्ञानिक रूझान (Motives) को सही परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है। वेबर ने यह बताया कि मानवीय व्यवहार के निम्न तीन लक्षण परिलक्षित होते हैः

   (i) **इच्छित क्रिया** (Intentional act)

   (ii) **अर्थपूर्ण क्रिया** (Meaningful act)

   (iii) **प्रतिकात्मक क्रिया** (Symbolic act)

3. जर्मनी के दार्शनिकों का यह मानना था कि अर्थ और विचारों में गतिशीलता लाने के लिए क्रियाओं के आत्मनिष्ठ स्वरूप को समझना आवश्यक है। आत्मनिष्ठ स्वरूप को समझने का अर्थ यह निकाला जाता है कि क्रियाओं व घटनाओं का अध्ययन बाहर से निरीक्षण द्वारा देखकर पता चला लेना ही अपने आप में पर्याप्त नहीं है बल्कि आंतरिक प्रक्रिया को समझने के बाद ही व्यवहार का सही अध्ययन किया जा सकता है। मनुष्य क्या सोचता है वह उसके व्यवहार के निरीक्षण मात्र से ही समझा नहीं जा सकता बल्कि इसके लिए यह आवश्यक है कि आंतरिक क्रियाओं को समझने के लिए एक खास समझ विकसित हो। गुणात्मक विधि के द्वारा मानसिक क्रियाओं को समाजशास्त्र में घटना-क्रिया विज्ञान के द्वारा समझने की कोशिश की गयी है।

4. ज्ञान का एक क्षेत्र इतिहास तथा संस्कृति से भी जुड़ा है। मानव क्रियाओं का उत्तरोत्तर विकास इतिहास के गर्भ में समाहित है और अगर मानवीय संस्कृति और उसके विकास के क्रम का अध्ययन करना हो तब संस्कृति के साथ-साथ इतिहास के गर्भ में छिपे ज्ञान के भंडार को समझने के लिए ऐसे स्रोतों का सहारा लेना पड़ता है। जिस पर अविश्वास करने से महत्त्वपूर्ण जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती है जर्मनी के प्रसिद्ध नव-आर्दशवादी सिद्धान्त के मुख्य समर्थक डिल्थे जो इतिहासवाद का समर्थन करते हुए गुणात्मक विधि को ज्ञान प्राप्त करने की उत्तम विधि मानते हैं का मानना था कि सभी सामाजिक व सांस्कृतिक व्यवस्था के कुछ अपने आधारभूत नियम होतें है जिन्हें समझकर एक शोधकर्त्ता घटना तथा समस्या के बारे में पर्याप्त जानकारी प्राप्त कर सकता है।

5. **समाजशास्त्र का ज्ञान उपागम का प्रयोग** (Use of Sociology of Knowledge Approach): गुणात्मक विधि को आधार बनाकर समाजशास्त्र में समाजशास्त्र ज्ञान उपागम का प्रयोग कई समाजशास्त्रियों ने किया है। कार्ल मैनहाइम

में विचारों के विश्लेषण में इसका प्रयोग किया है। उन्होंने विचारों के खास अवधारणा को समस्त या व्यापक अर्थ में विचारों की अवधारणा से अलग कर विश्लेषण करने की सलाह दी है। आलोचनात्मक विश्लेषण करते हुए उन्होंने बताया कि समाजशास्त्र के कुछ विद्वानों ने इसके सामान्य या व्यापक अर्थ तथा विचार के सीमित अर्थ को एक में ही जोड़कर देखने की कोशिश की है। इस प्रकार से विचारों का अध्ययन करने में कार्ल मैनहाईम का यह सोचना था कि विचारों के अध्ययन में विचारों सें जुड़े प्रचारात्मक तत्व का भी बहिष्कार करना आवश्यक है।

6. गुणात्मक विधि के समर्थक गैर-प्रत्यक्षवादी विचार (anti-positivistic) रखते हैः गुणात्मक विधि के समर्थक प्रत्यक्षवादी विचार के कट्टर समर्थक नहीं होते हैं। इस प्रकार से गुणात्मक विधि के समर्थक यह मानकर चलते हैं कि कोई भी घटना अपने स्वाभाविक रूप से घटित होती है। इसलिए शोधकर्त्ता के लिए यह जानकारी प्राप्त कर लेना कि किसी क्रिया के पीछे क्या वजह है उसका किन शाक्तियों से संबंध है अर्थात् कारक तत्वों की पहचान कर लेने मात्र से ही घटना के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार के सोचने की परंपरा यों तो गैर प्रत्यक्षवादी विचार से जुड़ी है जहाँ व्याख्यात्मक समझ (Interpretative understanding) को आधार बनाकर जानकारी प्राप्त की जाती है। इस प्रकार की समाजशास्त्रीय परंपरा का आधार रखनेवाले समाजशास्त्रियों में कई समाजशास्त्रियों के नाम लिए जाते हैं घटना-क्रिया विज्ञान उपागम (Phenomenological approach) के समर्थक (Alfred Shutz), बर्जर तथा लकमैन के साथ-साथ मैक्स वेबर का नाम भी इस प्रकार के समाजशास्त्रीय परंपरा से जुड़ा है। मैक्स वेबर ने इस अपने समाजशास्त्रीय द ष्टिकोण का एक प्रमुख अंग बनाया है।

7. गुणात्मक विधि के समर्थक वास्तविकता के बहुआयामी पक्ष की चर्चा विशेष रूप से करते है। इस विधि के समर्थकों का यह मानना है कि वास्तविकता केवल एक ही द ष्टिकोण अर्थात् प्रत्यक्षवादी द ष्टिकोण से ही विश्वसनीय तरीके से नहीं समझा जाता है। इसे समझने के लिए किसी घटना तथा समस्या के बारें में यह स्वीकार कर लेना कि उसका केवल बाह्य स्वरूप ही होता है जिसे निरीक्षण, मापा तथा समझा जा सकता हैं। मैक्स वेबर का मत था कि समाजिक वास्तविकता के स्वरूप अनियमित तथा असीमित है जबकि हमारे निरीक्षण के द्वारा सामाजिक वास्तविकता का परीक्षण करना सीमित है और इसलिए सीमित द ष्टिकोण से किसी सीमित प्रक्रिया का अध्ययन कभी भी समग्र की पूरी जानकारी नहीं दे सकता है। समग्र की पूरी जानकारी के लिए हमें मानसिक सोच की उस प्रक्रिया का सहारा लेना पड़ सकता है जिसमें हम सामाजिक वास्तविकता के अमूर्त्त स्वरूप को स्वीकार कर उसे समझने की कोशिश करते है।

8. गुणात्मक शोध में भी कार्य-कारक संबंध स्थापित कर घटनाओं का विश्लेषण किया जाता है। गुणात्मक पद्धति के समर्थक यह स्वीकार करते हैं कि कार्य-कारक संबंध स्थापित करने के लिए प्रत्यक्षवाद द ष्टिकोण के तरह यहाँ भी घटनाओं व समाजिक क्रियाओं के बीच कार्य-कारक संबंध स्थापित करने की कोशिश की जाती है। समाजिक क्रियाओं को पूर्ण तरीके से कार्य-कारक संबंध स्थापित कर प्रत्यक्षवादी उपागम के जरिए भी पूर्ण जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती है। पूर्ण जानकारी का वह अंशमात्र ही होता है। नवसंरचनावादी तथा नवअतिवादी सोच के समर्थक भी यह मानते है कि प्रत्यक्षवादी सामाजिक दुनिया की जानकारी रखनेवाले एकलौते समर्थक नहीं है बल्कि प्रत्यक्षवादी द ष्टिकोण अन्य द ष्टिकोणों की तरह ही जानकारी प्राप्त करने का एक तरीका है और इसे किसी भी रूप में एक अधिकृत तरीके के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

9. वर्तमान समय में गुणात्मक विधि में भी परिमाणात्मक पहलु को अपनाया जा रहा है। आजकल तो कंम्पयुटर युक्त जानकारी के कारण कुछ लिखित दस्तावेजों का विश्लेषण भी किया जाता है। कुछ ऐतिहासिक तथ्यों को भी इसी आधार पर समझने कि कोशिश की जाती है। इस प्रकार गुणात्मक विधि में भी विस्त त जानकारी प्राप्त करने के लिए या फिर इनके स्रोतों को और भी विश्वसनीय बनाने के लिए परिमाणात्मक तरीकों का इस्तेमाल कर गुणात्मक विधि को पुष्ट किया जाता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गुणात्मक विधि का सामाजिक शोध में अपना एक अलग महत्त्व है। शोध में अक्सर परिमाणात्मक विधि के वर्चस्व को आधार बनाया जाता है परंतु ऐतिहासिक दस्तावेजों, पौराणिक गाथाओं, धर्मग्रंथों तथा व्यक्तिगत पत्र और डायरी आदि को भी आधार बनाकर महत्त्वपूर्ण शोध करके समाजशास्त्रियों ने महत्त्वपूर्ण

जानकारी दी है। एम०एन० श्रीनिवास की बहुचर्चित पुस्तक रिमेंम्बरड विलेज के सारे महत्त्वपूर्ण दस्तावेज होटल में आग लग जाने के कारण नष्ट हो गये थे उसके बावजूद भी एम एन श्रीनिवास के कुछ परिमाणात्मक विधि के अतिआधुनिक तरीकों के द्वारा उन दस्तावेजों में लिखे गये सामग्री को पढ़वाने का इंतजाम किया और इसमें उन्हें आंशिक सफलता भी मिली। इस प्रकार वे इस विधि के साथ-साथ अपनी बौद्धिक क्षमता कल्पनाशील सोच के कारण दूसरे किये गये जानकारी को एक पुस्तक के रूप में लिख कर एक मिसाल कायम किया।

तुलनात्मक विधि का अर्थ, प्रकृति एवं विशेषताएं
(Comparative Method: Meaning, Nature and Characteristics)

समाजशास्त्र के प्रमुख चिंतको में अगस्त काम्ट का नाम विशेष रूप से उल्लेख किया जाता है जिन्होंने अध्ययन विधि को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के निम्न तरीकों का वर्णन किया है:

1. **निरीक्षण** (Observation)
2. **प्रयोग** (Experimentation)
3. **तुलनात्मक** (Comparison)
4. **ऐतिहासिक** (Historical)

अगस्त काम्ट का मानना था कि महत्त्वपूर्ण तुलना मानवीय समाज तथा अमानवीय समाज के बीच तथा दो या दो से अधिक सामांनातर सामाजिक समूहों के बीच या फिर एक ही समाज के विभिन्न वर्गो के बीच तुलनात्मक विवेचन के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

इंग्लैण्ड के एक प्रमुख समाजशास्त्री हर्बट स्पेंसर (Herbert Spencer) का भी यह मानना था कि सामाजिक शोध की एक महत्त्वपूर्ण अध्ययनविधि के रूप में तुलनात्मक विधि को देखा जा सकता है। शोधकर्त्ता इस विधि का प्रयोग कर सर्वप्रथम समाज की तुलना करते है और फिर व्यक्तिगत मुददों को आधार बनाकर विकास के क्रम में उसके महत्त्व की चर्चा करते हैं। स्पेंसर ने समाज के विकास में निम्न प्रकार के समाज की चर्चा की:

1. **सरल समाज** (Single Society)
2. **जटिल समाज** (compound Society)
3. **द्वितीय श्रेणी के जटिल समाज** (Double Compound Society)
4. **त तीय श्रेणी के जटिल समाज** (Triple Compound Society)

Herbert Spencer ने अपनी पुस्तक The Principle of Sociology में युद्धप्रीय समाज (Military Society) तथा औद्योगिक समाज (Industrial Society) का तुलनात्मक वर्णन प्रस्तुत किया है (देखें तालिका-I)

तालिका-I: युद्धप्रिय समाज - औद्योगिक समाज

युद्धप्रिय समाज	औद्योगिक समाज
संरक्षण के लिए सामूहिक कार्य	व्यक्तिगत सेवा और शांतिप्रिय कार्य स्वैच्छिक सहयोग
अनिवार्य सहयोग	राज्य के अपेक्षा व्यक्ति को प्रधानता
व्यक्ति के अपेक्षा राज्य की प्रधानता सार्वजनिक संगठन को प्रधानता	व्यक्तिगत संगठन को प्रधानता राज्य की विकेन्द्रित संरचना
राज्य की केन्द्रित संरचना स्तरीकरण कठोर, स्थायी आर्थिक	स्तरीकरण लचीला, अस्थायी आर्थिक आत्मनिर्भरता आजादी,
स्वावलंबन राष्ट्रप्रेम, साहस, आज्ञाकारी, अनुशासन	व्यक्तिगत रूझान उदारवादी द ष्टिकोण

फ्रांस के प्रमुख समाजशास्त्री इमाइल दुर्खिम को भी तुलनात्मक विधि का एक महत्त्वपूर्ण समर्थक के रूप में देखा जाता है। उनका मानना था कि विश्वसनीय सामाजिक शोध में समाज के स्वरूप तथा संरचना को ध्यान में रखकर (Social Evolution) एक समाज का दूसरे समाज से तुलना किया जाना आवश्यक है। उनका यह विचार था कि सामाजिक उदभव व विकास के क्रम में एक ही समय काल में विभिन्न समाज के बीच के अंतर को समझने के लिए तुलना किया जाना आवश्यक है। उस समाज

के धार्मिक विश्वास, सामाजिक एकता को आधार बनाकर उन्होंने भी अपनी महत्त्वपूर्ण पुस्तक डिविजन आफ लेबर इन सोसाइटी में सावयवी एकता पर आधारित समाज तथा यांत्रिकी एकता पर आधारित समाज के विभिन्न स्वरूपों का अध्ययन किया था। दुर्खिम ने तुलनात्मक विधि को अपनाकर समाज के विभिन्न प्रकारों का वर्णन किया है। जैविकीय गुणों के आधार पर समाज के विभिन्न लक्षणों को ध्यान में रखकर इसकी तुलना की जाती है और इसके विभिन्न प्रकारों का वर्णन भी किया गया हैं।

जर्मनी के प्रसिद्ध समाजशास्त्री मैक्स वेबर ने विश्व के विभिन्न धर्मो का अध्ययन तुलनात्मक विधि के द्वारा किया। उन्होंने अपने प्रसिद्ध पुस्तक द प्रोटेंसटेंट एथिक एंड स्पीरीट आफ कैपिटलिज्म में तुलनात्मक विधि का इस्तेमाल कर यह पाया कि प्रोटेस्टेंट धर्म के लोगों ने आर्थिक क्षेत्र में ज्यादा सफलता प्राप्त की है।

एम०एन० श्रीनिवास ने तुलनात्मक विधि का वर्णन करते हुए यह बताया कि सामाजिक मानवशास्त्र में जेम्स फ्रैजर के द्वारा लिखित गये 'गोल्डेन बाउ' एक उत्क ष्ट उदाहरण हैं जो इस बात को दर्शाता है कि इस विधि का मानवशास्त्र में कितना महत्त्व है। उनका यह मानना था कि सामाजिक मानवशास्त्री इस विधि का प्रयोग अक्सर दो मकसद से करतें हैं जो निम्न हैः

1. पहला तो ये कि वे जातिविज्ञान (ethnology) का संबंध सामाजिक मानवशास्त्र (Social Authropology) से करकर देखना चाहते है।
2. मानव इतिहास का पुनर्निमाण के लिए तुलनात्मक विधि का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार एम०एन० श्रीनिवास ने कहा है कि इस विधि का उद्देश्य समाजशास्त्र तथा सामाजिक मानवशास्त्र में भिन्न हैं। इसका मुख्य उद्देश्य मानव समाज में प्राप्त विविधता को दर्शाना है ताकि उसके आधार पर मानवीय सामाजिक तथ्यों के आधार पर किए गए अध्ययन से सिद्धान्त प्रतिपादित किया जा सके। एम०एन० श्रीनिवास का यह भी मानना था कि सामाजिक मानवशास्त्रियों तुलनात्मक विधि का प्रयोग अधिकांशतः करते थे जिन्हें आर्मचेचर चिंतक के रूप में जाना जाता है। आज से लगभग 100 वर्ष पूर्ण कैंबिज में जेम्स फ्रेजर ऐसे ही आर्मचेयर (Armchair) चिंतक के रूप में जाने जाते थे जबकि इसके विपरीत हैडन ने गहन अध्ययन के लिए क्षेत्रिय अध्ययन का सहारा लिया। श्रीनिवास का मानना था कि तुलनात्मक विधि के प्रयोग के बिना मानवशास्त्र एक इतिहास या न विज्ञान बन कर रह जायेगा। तुलनात्मक विधि के प्रयोग से ही मानवशास्त्रियों ने विभिन्न आदिवासी समाज में पाये जाने वाले मात प्रधान समाज तथा पित प्रधान समाज के विविध स्वरूपों का वर्णन किया है। किस प्रकार आस्ट्रेलिया के कुछ आदिमजातियों में टोंटम पाये जाते है जिसे उस जनजाति का झंडा माना जाता है। इन प्रतीकात्मक सामाजिक प्रतीकों के माध्यम से एक समाज के विविध सामाजिक स्वरूप की तुलना दूसरे समाज से की जाती हैं।

इस प्रकार तुलनात्मक विधि के निम्न विशेषताओं को उल्लेख किया जा सकता हैः

1. समाज के सभी सामाजिक संरचनाओं तथा उसके विविध प्रणालियों की तुलना की जा सकती है जो एक दूसरे से कुछ माने में समान है तो कुछ माने में असमान है। इस प्रकार के समान और असमान सामाजिक संरचनात्मक पहलुओं की पहचान तुलनात्मक विधि सामाजिक जीवन के अध्ययन से आसानी से की जा सकती है। कई समाजशास्त्रियों जिनमें काम्ट, मार्कस, वेबर, हर्बट स्पेंसर के नाम ऐसे समाजशास्त्रियों में विशेष रूप से लिए जाते हैं।
2. तुलनात्मक विधि में संस्थापक तथा व हत सामाजिक प्रक्रिया का वर्णन किया जाता है। इसीलिए मैक्स वेबर ने विभिन्न समाज के विभिन्न धार्मिक विश्वासों के प्रचलित सामाजिक तथा प्रमुख विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन कर धार्मिक अनुष्ठान के महत्त्व का विश्लेषण किया था। दुर्खिम ने भी आस्ट्रेलिया जनजाति के धार्मिक उद्देश्यों का अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा की थी कैसे धार्मिक विश्वास के द्वारा सामाजिक एकता कायम होती है।
3. तुलनात्मक विधि के प्रयोग से यह भी पता चलता है कि समाज में जिन महत्त्वपूर्ण तत्वों की तुलना की जा रही है वह महत्त्वपूर्ण सामाजिक इकाई है क्या? क्या वे संस्थाएं हैं, पूर्ण समाज है, धर्म है या समूह हैं। किसी एक इकाई को लेकर भी विभिन्न समाज के स्वरूप का अध्ययन किया जा सकता हैं। जैसा कि वेबर ने विभिन्न देशों का तुलनात्मक अध्ययन उन देशों के धर्म को आधार बनाकर किया था।
4. चुँकि इस विधि द्वारा दोनों समान और असमान प्रव तियों को उजागर किया जा सकता है इसलिए कुछ समाजशास्त्रियों ने समानता या सौहार्दपूर्ण संबंध या सहयोग को ही आधार बनाकर समाज की व्याख्या की है। समाजशास्त्रियों में कुछ ऐसे समाजशास्त्री हैं जो प्रकार्यवादी सिद्धान्त की व्याख्या करतें हैं और उनका मत है कि समाज में सहयोग पाया

जाता है। दुर्खिम, रैडक्लिफ ब्राऊन तथा मैलिनोवस्की कुछ ऐसे समाजशास्त्री हैं। जिन्होंने समाज में सहयोग और एकरूपता का ही विश्लेषण किया है।

5. कुछ ऐसे भी समाजशास्त्री हैं जिन्होंने सहयोग के बजाय तुलनात्मक विधि का इस्तेमाल कर संधर्ष को ही विश्लेषण का आधार माना है। संधर्ष सिद्धान्त के समर्थकों में कार्लमार्क्स का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने उत्पादन के साधन से जुड़े विभिन्न संघर्ष समूह को समाज की एक अवस्था को दूसरे अवस्था से तुलना कर इसका विवेचन प्रस्तुत किया है।

6. जहाँ ऐतिहासिक विधि के द्वारा हमें किसी खास उपकल्पना तक पहुँचने में मदद मिलती है वहीं दूसरी ओर तुलनात्मक विधि के द्वारा हमें सामान्य उपकल्पना के निर्माण में मदद मिलती है। तुलनात्मक विधि के द्वारा विश्वसनीय उपकल्पना का निर्माण किया जा सकता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि तुलनात्मक विधि का प्रयोग समाजशास्त्र तथा सामाजिक मानवशास्त्र में किसी भी सामाजिक व्यवस्था के विविध स्वरूपों तथा उस सामाजिक व्यवस्था के सामाजिक तत्वों के विभिन्न आयामों के विशिष्ट गुणों के वर्णन के लिए किया जाता है।

निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Sample)

जहाँ तक निदर्शन का अर्थ है सामाजिक शोध की प्रक्रिया में इसका प्रयोग वर्तमान समय में काफी प्रचलित हो गया है। निदर्शन का शाब्दिक अर्थ है छोटी इकाई का समग्र को प्रतिनिधित्व देना। जिस प्रकार बाजार में कुछ चुने हुए वस्तु को देखकर ही पूरे के बारे में अनुमान लगाया जाता है उसी प्रकार इस पद्धति का कुछ विशेष हिदायतों के साथ विधिवत प्रयोग शोध के लिए किया जाता है। सामान्य तौर पर एक व्यक्ति भी अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी में निदर्शन का प्रयोग करता है। अनाजमंडी में अनाज के ढेर से कुछ अनाज के दानों को हाथ में लेकर उसका निरीक्षण परीक्षण कर वह पूरे ढेर के बारे में अनुमान लगाता है कि उसकी गुणवता क्या होगी। चुनाव के दिनों में चुनावी नतीजे आने से पहले ही कुछ मतदाताओं से बातकर हम यह अनुमान लगाने की कोशिश करते हैं कि मतदान का फैसला किस पार्टी व व्यक्ति के पक्ष में होगा। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आये दिन आम-जीवन में हम अप्रत्यक्ष रूप से ही सही निदर्शन का प्रयोग करते है अर्थात निदर्शन की प्रक्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका प्रयोग बड़े-छोटे सभी एक समान अपने जीवन में करते हैं।

जनगणना विधि (Census Method): निदर्शन के अलावा एक दूसरी पद्धति को भी शोधकर्त्ता इस्तेमाल में लाते हैं जिसे जनगणना विधि (Census Method) कहा जाता है। जनगणना विधि का प्रयोग जब अनुसंधानकर्त्ता करता है तो वह समग्र को ध्यान में रखकर पूरे समग्र से संपर्क स्थापित कर जानकारी प्राप्त करने की कोशिश करता है। इस प्रकार की विधि चुँकि ज्यादा समय और ज्यादा लागत खोजती है इसलिए इसका प्रयोग शोधकर्त्ता भी कुछ परिस्थितियों में ही अध्ययन के लिए इस्तेमाल में लाते हैं। जनगणना विधि की कुछ सीमाएं हैं जिसके कारण इसके बदले निदर्शन विधि का इस्तेमाल शोध के लिए किया जाता है ये सीमाएं निम्न हैः

1. **विशाल क्षेत्रः** जब शोध का क्षेत्र व्यापक हो तो शोध क्षेत्र के प्रत्येक इकाई से संपर्क साधकर जानकारी प्राप्त करना संभव नहीं होता है और ऐसी परिस्थिति में निदर्शन का सहारा लेकर ही शोध कार्य संपन्न किया जा सकता है।

2. **खर्चीली विधिः** शोध कार्य जनगणना विधि द्वारा करना आसान नहीं हैं। इसके लिए अपार धन की आवश्यकता होती है और संभवतः इसलिए जनगणना विधि के द्वारा प्रत्येक दशक पर आंकड़ें इकटठे कर लेने के बाद भी सरकार अन्य आंकड़ों को इकटठा करने के लिए 5 प्रतिशत आबादी के आधार पर कुछ निदर्शन विधि द्वारा अन्य आंकड़े इकटठे करवाती है। इससे यह अंदाज लगाया जा सकता है कि जनगणना विधि का प्रयोग कर आंकडे इकटठा करना कितना मुश्किल काम होता है।

3. **अधिक समयः** इस विधि में अधिक समय भी लगता है। दो कारणों से समय अधिक लगता हैं सर्वप्रथम शोध क्षेत्र के सभी इकाई से संपर्क करना भी अपने आप में मुश्किल काम है इसलिए इस क्रिया में ही समय अधिक लग जाता है। और दूसरा जब सारे आंकड़े इकटठे हो जायें तो उन आंकड़ों को एकत्रित कर उससे निष्कर्ष निकालना उनका

वर्गीकरण करना और फिर युक्तिसंगत निष्कर्ष निकालने में भी अधिक समय लग जाता है। इसीलिए समय की बचत करने हेतु निदर्शन विधि का सहारा लिया जाता है।

4. **अनुसंधान की प्रकृति एवं उद्देश्यः** आजकल अनुसंधान की प्रकृति भी ऐसी हो गयी है कि शोध के लिए व हत स्तर का अनुसंधान आम प्रचलन का हिस्सा नहीं बन पाया है। व हत स्तर के अनुसंधान के लिए सरकारी खर्चे से ही इस प्रकार के अनुसंधान किये जाते है। जिस प्रकार के अनुसंधान छोटे स्तर पर किये जाते है उसके उद्देश्य सीमित होतें है जिसके लिए निदर्शन विधि का इस्तेमाल कर आंकड़े एकत्रित कर निष्कर्ष निकाल दिए जाते हैं जो काफी उपयोगी साबित होते हैं इसलिए वर्तमान समय में अनुसंधान की प्रकृति एवं उद्देश्य को ध्यान में रखा जाये तो निदर्शन विधि द्वारा एकत्रित किये गए आंकड़ों को ज्यादा प्रयोग में लाया जा सकता है।

निदर्शन विधि की परिभाषा

जैसा कि ऊपर लिखा जा जुका है निदर्शन समग्र से एक छोटे समूह को चूनने की एक प्रक्रिया है। इसीलिए एक संक्षिप्त परिभाषा देते हुए गुडे तथा हाट का कहना है कि निदर्शन विस्त त समूह का एक लधूतर प्रतिनिधि है। पी०बी० यंग का मानना था कि अधिकांश सांख्यिकी अध्ययन निदर्शन पर आधारित होते हैं जिसमें प्रासंगिक आंकड़ों का संपूर्ण विवरण होता है। इसलिए उन्होंने यह स्वीकार किया कि "एक सांख्यिकीय निदर्शन उस संपूर्ण समूह अथवा योग का एक लधुचित्र है जिसमें से कि निदर्शन किया गया है" बोगार्डस का कहना था "निदर्शन एक पूर्णनिर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के एक समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चुनाव है।" इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि संपूर्ण जनसंख्या से एक छोटे हिस्से को उसके प्रतिनिधि लक्षण के आधार पर चुनने की प्रक्रिया है। इसीलिए पी०वी० यंग ने उस समग्र व संपूर्ण को निम्न तकनीकि शब्द से संबंधित किया है।

1. **जनसंख्या** (Population)
2. **ब्रहमांड** (Universe)
3. **पूर्ति** (Supply)

जनसंख्या से तात्पर्य यहाँ आबादी से नहीं लगाना चाहिए। यहाँ पर जनसंख्या का ब्रह्मांड या पूर्ति से तात्पर्य है उस समाज में रहने वाले एक खास शहर व गाँव में रहने वाले लोग जो गुणों तथा व्यवहार में पूरे समाज का प्रतिनिधित्व करतें है और उन सभी के एक जैसे गुण होतें है जो सभी सदस्यों में पाये जातें है। उदाहरण के लिए जब यह कहा जाता है कि मौजूदा विधान सभा चुनाव में एक किसी खास मतदान क्षेत्र का अध्ययन करना है तो उस क्षेत्र में पाये जानेवाले सभी मतदाताओं को ही जनसंख्या या ब्रह्माड कहा जा सकता है जिसमें से एक शोधकर्त्ता उद्देश्य या शोध के लक्ष्य को ध्यान में रखकर कुछ मतदाता का चयन निदर्शन पद्धति को आधार बनाकर करता है।

निदर्शन विधि के प्रकार
(Types of Sampling)

निदर्शन विधि ने विभिन्न प्रकारों में से कुछ प्रकारों की चर्चा करते समय यह ध्यान रखा गया है कि ज्यादा प्रचलित प्रकारों का ही यहाँ वर्णन किया जाये ताकि विस्तार से उन प्रकारों पर चर्चा होने पर विद्यार्थियों को निदर्शन विधि की उपयोगिता का भी पता चल सके। निदर्शन विधि के प्रचलित प्रकार निम्न हैः

1. **दैव निदर्शन** (Random Sampling)
2. **स्तरित निदर्शन** (Stratified Sampling)
3. **उद्देश्यपूर्ण निदर्शन** (Purposive Sampling)
4. **अभ्यंश निदर्शन** (Quota Sampling)
5. **बहुस्तरीय निदर्शन** (Multi-stage Sampling)
6. **क्षेत्रीय निदर्शन** (Area sampling)
7. **स्वयं चयनित निदश्न** (Self-selected Sampling)

1. **दैव निदर्शन (Random Sampling):** सांख्यिकी निदर्शन में अक्सर दैव निदर्शन की चर्चा की जाती है परन्तु दैव शब्द का अर्थ बड़ा ही भ्रामक है जिसकी तरफ इशारा करते हुए पी०वी० यंग ने भी चेतावनी दी है कि दैव शब्द से अभिप्राय अनियमित, अनियोजित, लापरवाही अर्थात् अटपटे ढंग से समग्र में से कुछ का चयन करना नहीं होता है। निदर्शन में आने के लिए प्रत्येक इकाई को स्वतन्त्रता प्रदान कर दी जाती है। इस विधि में अनुसन्धानकर्त्ता का झुकाव किसी इकाई विशेष कि चुनाव की तरफ नहीं होता, वरन् चुनाव की सम्पूर्ण प्रक्रिया दैव एवं संयोग पर छोड़ दी जाती हैं इसीलिए ही इसे दैव निदर्शन कहते हैं। दैव निदर्शन को विभिन्न विद्वानों ने इस प्रकार परिभाषित किया है:

   पार्टेन के अनुसार, "दैव निदर्शन विधि का उपयोग उस समय माना जाता है जब चुनाव की विधि ऐसी हो कि समग्र की प्रत्येक इकाई तथा तथ्य के चुने जाने का समान अवसर हो।"

   गुडे एवं हाट के अनुसार, "दैव निदर्शन में समग्र की इकाइयों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया उस समग्र की प्रत्येक इकाई को चुनाव की समान सम्भावना प्रदान करती है।"

   उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि दैव निदर्शन असावधानीपूर्ण, अव्यवस्थित तथा लापरवाहीपूर्ण एवं आकस्मिक नहीं होता।

आवश्यक दशाएँ
(Essential Conditions)

दैव निदर्शन का उपयोग करते समय निम्नांकित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है:

1. समग्र की इकाइयां स्पष्ट होनी चाहिए एवं उनकी सूची तैयार की जानी चाहिए।
2. इकाइयों का आकार लगभग समान हो,
3. प्रत्येक इकाई एक-दूसरे से स्वतन्त्र हो,
4. निदर्शन चयन की विधि स्वतन्त्र होनी चाहिए
5. अध्ययनकर्ता की प्रत्येक इकाई तक पहुंच सुलभ होनी चाहिए
6. चुनी हुई इकाई को न तो छोड़ा जाना चाहिए और न ही उसका प्रतिस्थान करना चाहिए।

दैव निदर्शन चुनने की प्रविधियां
(Techniques of Selecting Random Sample)

दैव निदर्शन विधि के अनुसार निदर्शन निकालने की अनेक प्रविधियां हैं, उनमें से कुछ अधिक प्रचलित विधियां हैं-लॉटरी विधि कार्ड विधि, ग्रिड विधि, नियमित तथा अनियमित अंकन विधि, आदि।

1. **लॉटरी विधि (Lottery Method):** इस विधि में समग्र की सभी इकाइयों के नाम अथवा नम्बर कागज के छोटे-छोटे टुकड़ों पर लिखकर उन्हें मोड़ लिया जाता है। इन सभी कागज की चिटों को किसी बर्तन, बॉक्स या झोले में डाल कर अच्छी तरह से हिला दिया जाता है ताकि वे भली-भांति मिल जायें। इसके बाद निष्पक्ष व्यक्ति द्वारा अथवा स्वयं आँखें बन्द करके उतने ही कार्ड या चिट निकाल लिए जाते हैं जितनी इकाइयां निदर्शन में सम्मिलित करनी हैं। इस प्रकार जो इहाइयां दैवयोग से चुनाव में आ जाती हैं, उनका अध्ययन किया जाता हैं। राज्य सरकार द्वारा लॉटरी में पुरस्कार निकालने के लिए यही विधि काम में ली जाती है।
2. **कार्ड या टिकिट प्रणाली (Card or Ticket Method):** कार्ड प्रणाली लॉटरी विधि का ही परिवर्तित रूप है। इसमें समग्र की सभी इकाइयों के नाम, नम्बर अथवा कोई प्रतीक एक ही रंग, आकार और मोटाई के कार्डो अथवा टिकटों पर अंकित कर दिया जाता है। इन कार्डो को एक ड्रम में डालकर खूब हिलाया जाता है और एक कार्ड निकाल लिया जाता है। इसके बाद फिर ड्रम को हिलाया जाता है और दूसरा कार्ड निकाला जाता है। उस प्रकार वह क्रिया उतनी ही बार की जाती है जितने कार्ड हमें निकालने हैं। इस विधि से जो कार्ड निकाले जाते हैं, उनसे सम्बन्धित इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। लॉटरी विधि एवं कार्ड प्रणाली में मूल अन्तर यह है कि लॉटरी में आंखें बन्द करके, चिटें निकाली जाती हैं जबकि इस विधि में आंखें खुली रखकर कार्ड निकाले जाते हैं। इस विधि का उपयोग, करते समय

यह सावधानी रखनी चाहिए कि सभी कार्डो का आकार, रंग-रूप और मोटाई एक जैसी हो अन्यथा उनके चयन में पक्षपात आ सकता है।

3. **टिपेट विधि (Tippet method):** प्रो० टिपेट ने चार अंकों वाली 10,400, संख्याओं की एक सूची बनाई और इन संख्याओं को बिना किसी क्रम के कई प ष्ठों पर लिख दिया। इनमें से कुछ संख्याएँ इस प्रकार हैं:

2952	6641	3992	9792	7979	5911	3170	5624
4167	9524	1545	1396	7203	5356	1300	2693
2370	7483	3408	2762	3563	1089	6913	7691
0560	5246	1112	6107	6008	8126	4433	8776
2754	9143	1405	9025	7002	6111	8816	6446

टिपेट संख्याओं से निदर्शन चुनने का तरीका इस प्रकार है - अगर हमें 500 छात्रों में से 30 छात्रों का एक निदर्शन निकालना है तो पहले हम सभी 500 छात्रों के नाम को क्रमवार लिख लेंगे फिर टिपेट संख्या की पुस्तक का कोई एक प ष्ठ खोलकर उसमें से प्रथम 30 संख्याओं को नोट कर समग्र में से उन्हीं संख्याओं को अध्ययन के लिए चुन लेंगे। यदि समग्र की कुल इकाइयों की संख्या कम है तथा प्रथम तीस संख्याओं में कुछ संख्याएँ अधिकतम क्रम संख्या से अधिक है तो उन्हें छोड़ दिया जायेगा और उनके स्थान पर उनके आगे वाली संख्याएं ले ली जाएंगी। टिपेट की संख्याएं अधिक वैज्ञानिक मानी जाती हैं और उनका उपयोग भी बहुत होता है। यह विधि अधिक शुद्ध है।

4. **ग्रिड प्रणाली (Grid system):** इस विधि का उपयोग भौगोलिक क्षेत्र के चुनाव के लिए किया जाता है। यदि किसी नगर, प्रदेश या क्षेत्र में से कुछ इकाइयों का चयन करना हो तो पहले उस क्षेत्र का नक्शा तैयार किया जाता है। इस नक्शे पर ग्रिड प्लेट को रखा जाता है। यह ग्रिड प्लेट सेल्युलायड अथवा किसी पारदर्शक पदार्थ से बनी होती हैं इस प्लेट में वर्गाकार खाने बने रहते हैं जिन पर नम्बर लिखे होते हैं। यह पहले से ही तय कर लिया जाता है कि निदर्शन में कितनी इकाइयों का चयन करता है उतनी ही वर्गो को पहले से काट लिया जाता है। ग्रिड को मानचित्र पर रखकर जितने कटे हुए भागों पर मानचित्र का क्षेत्र आता है उन पर निशान लगा दिया जाता है और उन्हें ही निदर्शन का क्षेत्र मानकर अध्ययन किया जाता है।

5. **नियमित अंकन प्रणाली (Regular Marking Method):** इस विधि में पहले समग्र की सभी इकाइयों को किसी विशेष ढंग, काल अथवा स्थान, आदि के अनुसार व्यवस्थित कर लिया जाता है। इसके बाद यह निश्चय कर लिया जाता है कि समग्र में से हमें कितनी इकाइयों का चयन निदर्शन हेतु करना है। साथ ही एक इकाई से दूसरी इकाई के बीच की संख्यात्मक दूरी को भी तय कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें सौ, विद्याथियों में से दस विद्यार्थियों का चयन करना है तो पहला, दसंवा, बीसवां, तीसवां और इसी क्रम में दस विद्यार्थियों का चयन किया जायेगा।

   इसी प्रकार से काल, स्थान एवं परिस्थिति के अनुसार भी समग्र की इकाइयों को व्यवस्थित करके उनमें से निदर्शन का चुनाव कर लिया जाता है। इस प्रणाली में पक्षपात की कोई सम्भावना नहीं रहती।

6. **अनियमित अंकन प्रणाली (Irregular Marking Method):** इस विधि से निदर्शन का चुनाव करने के लिए पहले समग्र की समस्त इकाइयों की सूची बना ली जाती है तथा प्रथम और अन्तिम अंक को छोड.कर शेष इकाइयों की सूची में से निर्धारित मात्रा में अनियमित ढंग से इकाइयों पर निशान लगा दिया जाता है। उदाहरण के लिए, सौ छात्रों में से दस छात्रों का निदर्शन लेने के लिए पहले हम इन सभी के नामों की एक सूची तैयार करेंगे। तत्पश्चात एक से दस, दस से बीस, बीस से तीस और इसी प्रकार से अन्य वर्गो में भी प्रत्येक वर्ग में से किसी भी एक इकाई पर सही का निशान लगा देंगे और इस प्रकार कुल दस इकाइयों का चयन कर लिया जायेगा। इस विधि में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

दैव निदर्शन प्रणाली के गुण
(Merits of Random Sampling)

दैव निदर्शन प्रणाली के प्रमुख गुण या लाभ निम्नांकित हैं:

1. इस विधि में प्रत्येक इकाई के चुने जाने के समान अवसर होते हैं, अतः यह विधि प्रतिनिधित्वपूर्ण है तथा इसमें समग्र की अधिकाधिक विशेषताएं विद्यमान होती है।

2. यह विधि एक वैज्ञानिक विधि है जैसा कि एकॉफ का कहना था, "दैव निदर्शन एक प्रकार से समस्त वैज्ञानिक निदर्शन का आधार है।"
3. यह निदर्शन की सबसे सरल विधि है, इसमें जटिल अथवा गूढ़ सिद्धान्तों का पालन नहीं करना पड़ता है।
4. इस विधि में निष्पक्षता का गुण मौजूद है और निदर्शन के चुनाव में किसी को भी प्राथमिकता नहीं दी जाती है। अतः इसमें पक्षपात आने की सम्भावना नहीं रहती हैं।
5. इस विधि में समग्र, धन और श्रम की भी पर्याप्त बचत होती है, अतः यह विधि मितव्ययितापूर्ण है।
6. इस विधि में इकाइयों के चयन में यदि किसी प्रकार की कोई त्रुटि या अशुद्धता रह गई हो तो उसका पता लगाना सरल है।

दैव निदर्शन प्रणाली के दोष (सीमाएँ)
(Demerits or Limitations of Random Sampling)

दैव निदर्शन प्रणाली के निम्नांकिंत दोष हैः

1. इस विधि में समग्र की सूची होना आवश्यक है, किन्तु कई बार यह सूची उपलब्ध नहीं हो पाती तब इस विधि द्वारा निदर्शन ग्रहण करना सम्भव नहीं होता है।
2. यदि समग्र बहुत छोटा हो अथवा कुछ इकाइयां इतनी महत्त्वपूर्ण हों कि उनका निदर्शन में समावेश अनिवार्य हो तो ऐसी स्थिति में दैव निदर्शन उपयुक्त नहीं होता।
3. जब समग्र में बहुत अधिक विविधताएं हों और सजातीयता का अभाव हो तब भी यह विधि उपयुक्त नहीं होती।
4. जब समग्र का विस्तार बहुत अधिक हो और इकाइयां दूर-दूर तक फैली हों तब भी उनसे सम्पर्क करना कठिन होता है।
5. दैव निदर्शन में विकल्प की सम्भावना नहीं होती, विकल्प के लिए इकाइयों में परिवर्तन करना होता है। ऐसी स्थिति में दैव निदर्शन अवैज्ञानिक और पक्षपातपूर्ण हो जाता है।

इन कमियों अथवा दोषों के बावजूद भी दैव निदर्शन प्रणाली के कुछ गुण हैं जिनके कारण इस विधि का बहुत अधिक उपयोग होता हैं।

उद्देश्यपूर्ण या सविचार निदर्शन विधि
(Purposive Sampling Method)

जब अनुसन्धानकर्त्ता किसी विशिष्ट उद्देश्य से समग्र में से अध्ययन हेतु कुछ इकाइयों का चुनाव करता है तो उसे उद्देश्यपूर्ण अथवर सविचार निदर्शन कहते हैं। इस प्रकार के चुनाव में चुनने वाले की इच्छा, उसका निर्णय तथा उद्देश्य ही प्रधान होता है।इस विधि का मुख्य आधार यह है कि अनुसन्धानकर्त्ता पहले से ही समग्र की इकाइयों के बारे में परिचित होता है। एल्डोफ जैन्सन के अनुसार "सविचार निदर्शन से तात्पर्य इकाइयों के समूह को इस प्रकार चुनने से है कि चुने हुए वर्ग मिलकर जहाँ तक हो सके, वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करे जो समग्र में हैं।"

इस प्रकार उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के पीछे यह आधारभूत मान्यता होती है कि उचित निर्णय तथा उपयुक्त कुशलता के साथ व्यक्ति निदर्शन में सम्मिलित करने हेतु उन मामलों को चुन सकता है तथा इस प्रकार ऐसे निदर्शनों का विकास कर सकता है जो उसकी आवश्यकताओं के अनुसार सन्तोषजनक हैं। इस तरह सविचार अथवा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन में अनुसन्धानकर्त्ता अपने उदेश्य को ध्यान में रखते हुए उन्हीं इकाइयों का चयन करता है जो क्षेत्र का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करती हों।

सविचार निदर्शन के लक्षण
(Characteristics of Purposive Sampling)

1. इसमें अनुसन्धानकर्त्ता समग्र की प्रकृति, गुणों तथा इकाइयों की विशेषताओं से पूर्व परिचित होता है, अतः वह यह जानता है कि किन इकाइयों को चुनना अध्ययन की द ष्टि से लाभप्रद होगा।

2. सविचार निदर्शन में निदर्शनों का चुनाव इस तरह से किया जाता है कि वे अध्ययन के उद्देश्यों की पूर्ति करें।
3. इस प्रकार के निदर्शन में चूंकि अनुसन्धानकर्त्ता अपनी इच्छानुसार निदर्शनों का चुनाव करता है, अतः पक्षपात की सम्भावना भी अधिक रहती है।

सविचार निदर्शन के गुण
(Merits of Purposive Sampling)

1. यह अध्ययन पद्धति कम खर्चीली हैं क्योंकि इसमें निदर्शन का आकार बहुत छोटा होता है।
2. इस विधि में निदर्शन का आकार बहुत छोटा, किन्तु अपेक्षाकृत अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है।
3. यह विधि ऐसे अनुसन्धानों में विशेषरूप से उपयोगी होती है जिनमें समग्र की कुछ इकाइयों का चुना जाना विशेषरूप से उपयोगी होता है। उदाहरण के लिए, यदि हम भारत में लोहा और इस्पात उद्योग का सर्वेक्षण करना चाहते हैं तो हमें टाटा लौह और इस्पात कम्पनी का अवश्य अध्ययन करना होगा। यदि इसके स्थान पर हम दैव निदर्शन विधि अपनाते तो टाटा कम्पनी का चुनाव हो भी सकता है और नहीं भी।
4. यहि विधि पूर्वगामी अध्ययनों में विशेष लाभदायक है।

सविचार निदर्शन की सीमाएं

सविचार निदर्शन के जहां कई गुण हैं, वहीं यह दोषों से भी मुक्त नहीं है। पार्टेन का मत है कि समस्त संख्याशास्त्रियों को सविचार निदर्शन के पक्ष में एक शब्द भी नहीं कहना है।" स्नेडेकोर ने इस प्रणाली के निम्नांकित दोषों का उल्लेख किया हैः

1. इस विधि में अध्ययनकर्त्ता को समग्र का पहले से ज्ञान होना चाहिए जो सदैव सम्भव नहीं होता।
2. इसमें इकाइयों के चुनाव में पक्षपात आने की पूरी-पूरी सम्भावना बनी रहती है, अतः परिणाम अवैज्ञानिक और अशुद्ध हो जाते हैं।
3. निदर्शन की अशुद्धता का पता लगाने की जो मान्यताएं प्रचलित हैं, उनमें से एक भी इस विधि में नहीं पायी जाती।
4. इस प्रणाली द्वारा निष्कर्षो में परिशुद्धता की मात्रा बहुत कम होती है।
5. इसमें इकाइयों के चुनाव में न्यायपूर्ण निर्णय की अपेक्षा व्यक्तिगत सुझाव का अधिक महत्त्व होता है।
6. इसके आधार पर सम्पूर्ण समग्र की विशेषताओं को नहीं समझा जा सकता।

स्तरित या वर्गीकृत निदर्शन
(Stratified Sampling)

इस विधि का प्रयोग दैव निदर्शन और सविचार निदर्शन दोनों के लाभों को एक साथ प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसमें समग्र को विचारपूर्वक कई सजातीय वर्गो में विभाजित कर दिया जाता है और उसके बाद प्रत्येक वर्ग में से निश्चित संख्या में दैव निदर्शन विधि से इकाइयों का चुनाव किया जाता है।

इस विधि का प्रयोग उसी समय किया जाता है जब समग्र की सभी इकाइयां सजातीय न हों। जिन इकाइयों से समान लक्षण हों, उन्हें एक वर्ग के अन्तर्गत रख लिया जाता है। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग में से निश्चित मात्रा में निदर्शन चुन लिया जाता हैं स्तरित निदर्शन विधि का प्रयोग करते समय हमें निम्नांकित सावधानियां बरतनी होती है।

1. समग्र की सभी विशेषताओं को ज्ञात करके उसे उनके आधार पर विभिन्न स्तरों में वर्गीकृत कर लिया जाये।
2. प्रत्येक स्तर का आकार इतना बड़ा अवश्य हो जिसमें से निदर्शन हेतु इकाइयों का चयन किया जा सके
3. विभिन्न स्तरों (वर्गो) में पूर्णरूपेण सजातीयता हो अर्थात् प्रत्येक वर्ग में आने वाली इकाइयों में एकरूपता हो तथा एक वर्ग समग्र के एक ही गुण का प्रतिनिधित्व करे।
4. विभिन्न स्तरों या वर्गो में इकाइयों का चुनाव उसी अनुपात में किया जाये जिस अनुपात में उनकी संख्या समग्र में हैं।

5. वर्ग स्पष्ट तथा सुनिश्चित होने चाहिए ताकि प्रत्येक इकाई किसी न किसी वर्ग में आ जाये और कोई भी इकाई एक से अधिक वर्गो में न आए।

6. वर्गो का निर्माण अध्ययन विषय की प्रकृति के अनुरूप हो।

स्तरित निदर्शन के प्रकार
(Types of Stratified Sampling)

स्तरित निदर्शन के प्रमुख तीन प्रकार हैं:

1. **आनुपातिक स्तरित निदर्शन (Proportionate Stratified Sampling):** इस विधि के अनुसार प्रत्येक वर्ग में से निदर्शन हेतु उतनी ही इकाइयों का चयन किया जाता है जिस अनुपात में वर्ग की कुल इकाइयां समग्र में हैं।

2. **असमानुपातिक स्तरित निदर्शन (Disproportionate Stratified Sampling):** इस विधि में प्रत्येक वर्ग में से समान संख्या में इकाइयां चुनी जाती है। इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता है कि उनका समग्र में क्या अनुपात है।

3. **भारयुक्त स्तरित निदर्शन (Stratified Weighted Sampling):** इस विधि में उपर्युक्त दोनों विधियों का मिश्रण पाया जाता है। इस विधि में पहले प्रत्येक वर्ग में से समान संख्याओं का चुनाव किया जाता है, उसके बाद अधिक संख्या वाले वर्गों की इकाइयों को अधिक भार प्रदान करके उनका प्रभाव बढ़ा दिया जाता है। यह भार उसी अनुपात में प्रदान किया जाता है, जिस अनुपात में वर्ग की इकाइयां समग्र में होती हैं।

स्तरित निदर्शन के गुण
(Merits of Stratified Sampling)

स्तरित निदर्शन विधि के निम्नांकित गुण हैं:

1. इस विधि के द्वारा निदर्शन निकालने वाले को निदर्शन के चुनाव में अधिक नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है। इसमें समग्र के प्रत्येक वर्ग की इकाइयों को निदर्शन में स्थान प्राप्त हो जाता है और किसी वर्ग के छूटने की सम्भावना नहीं रहती। दैव निदर्शन में यद्यपि प्रत्येक इकाई के चुने जाने की सम्भावना रहती है, किन्तु फिर भी कई बार महत्त्वपूर्ण वर्ग छूट भी जाते हैं, जबकि स्तरित निदर्शन में ऐसा नहीं होता है।

2. यदि वर्गीकरण उचित प्रकार से किया गया है तो थोड़ी इकाइयों से ही प्रतिनिधि इकाइयों का चुनाव हो सकता है, जबकि दैव निदर्शन में प्रतिनिधित्वता के लिए इकाइयों का पर्याप्त मात्रा में चुना जाना आवश्यक है।

3. इस विधि में इकाइयों का प्रतिस्थापन बहुत की सरल है। यदि प्रारम्भिक निदर्शन में चुनी हुई किसी इकाई से सम्पर्क स्थापित नहीं किया जा सकता हो तो उसके स्थान पर उसी वर्ग में से दूसरी इकाई चुन ली जाती है। इस परिवर्तन से निदर्शन के प्रतिनिधित्वपूर्ण होने या न होने पर कोई असर नहीं पड़ता।

4. वर्गीकरण द्वारा निदर्शन का चुनाव इस प्रकार से किया जा सकता है कि निदर्शन की अधिकांश इकाइयां भौगोलिक द ष्टि से केंन्द्रित हों। ऐसे अध्ययन में धन व समय की बचत हो सकती है। दैव निदर्शन में इकाइयां बिखरी होने के कारण इकाइयों के चुनाव में इस प्रकार का नियन्त्रण नहीं रहता।

स्तरित निदर्शन की सीमाएं
(Limitations of Stratified Sampling)

इस विधि की सीमाएं निम्नांकित हैं:

1. यदि वर्गों का निर्माण उचित प्रकार से नह किया गया है तो निदर्शन के चुनने में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है। ऐसा भी हो सकता है कि कुछ वर्गों में से अधिक इकाइयों का चुनाव कर लिया जाय और कुछ में से कम का। ऐसी स्थिति में निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण नह रह पाता है।

2. प्रतिनिधित्वपूर्ण होने के लिए निदर्शन का सानुपातिक होना आवश्यक है, किन्तु भिन्न-भिन्न वर्गों के आकार में यदि बहुत अधिक भिन्नता है तो उनमें समानुपात का गुण लाना कठिन होता है। साथ ही चुनाव करने वाले व्यक्ति की व्यक्तिगत रुचि का भी निदर्शन के चुनाव पर प्रभाव पड़ता है।

3. यदि वर्गों से इकाइयों का चुनाव असमानुपातिक आधार पर किया गया है तो बाद में भार का प्रयोग करना पड़ता है। भार प्रदान करते समय व्यक्ति का पक्षपात भी आ सकता है तथा अनुचित भार प्रदान करने पर इकाइयां प्रतिनिधित्वपूर्ण नह रह जाती हैं।
4. स्तरित निदर्शन में एक गुण रखने वाली इकाइयों का एक वर्ग बनाया जाता है, किन्तु किसी इकाई में एकाधिक गुण होने पर कठिनाई आती है कि उसे किस वर्ग में रखा जाय।

अन्य प्रकार के निदर्शन
(Other Types of Sampling)

उपर्युक्त तीन प्रमुख प्रकार के निदर्शनों के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार इस प्रकार हैं:

निर्दिष्टांश अथवा अभ्यंश निदर्शन
(Quota Sampling)

यह वर्गीय निदर्शन का ही एक रूप है। इसमें सर्वप्रथम समग्र को कई वर्गों में विभाजित किया जाता है। फिर प्रत्येक वर्ग में से चुनी जाने वाली इकाइयों की संख्या तय कर ली जाती है। इस निश्चित संख्या को ही निर्दिष्टांश (quota) कहते हैं। इसके बाद अनुसंधानकर्त्ता प्रत्येक वर्ग में से निर्धारित मात्रा में अपनी इच्छानुसार इकाइयों का चुनाव कर लेता है। **जहोदा तथा कुक** के अनुसार, "निर्दिष्टांश निदर्शन का प्राथमिक लक्ष्य ऐसे निदर्शन का चयन करना है जो ऐसे समग्र का लघु रूप है जिसका सामान्यीकरण किया जाना है, अतः इसे समग्र का प्रतिनिधित्व करने वाला कहा गया है।" इस विधि से अध्ययन करने के लिए पहले सभी छात्रों को कला, विज्ञान और वाणिज्य संकायों में विभाजित कर दिया जाता है, उसके बाद प्रत्येक संकाय में से 50-50 छात्रों का चयन अध्ययनकर्त्ता अपनी इच्छानुसार कर लेता है। चूंकि इस विधि में अध्ययनकर्त्ता को इकाइयों के चुनाव की स्वतन्त्रता होती है, अतः चुनाव के समय पक्षपात की सम्भावना रहती है।

बहुस्तरीय निदर्शन
(Multi-Stage Sampling)

इस विधि का प्रयोग बहुत बड़े क्षेत्र से निदर्शन निकालने के लिए किया जाता है। चूंकि इस विधि में निदर्शन का चुनाव कई स्तरों से गुजरने के बाद किया जाता है, इसलिए इसे बहुस्तरीय निदर्शन कहा जाता है। इस विधि से यदि हम किसी बड़े नगर का अध्ययन करना चाहते हैं तो उसके लिए हमें निम्नांकित स्तरों से गुजरना होगाः

1. सम्पूर्ण नगर को कई क्षेत्रों या वार्डों में बांटा जायेगा। ये क्षेत्र क्षेत्रफल की द ष्टि से एवं निवासियों की द ष्टि से समान होने चाहिए।
2. प्रत्येक क्षेत्र में से कुछ ग ह-समूहों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
3. प्रत्येक ग ह-समूह में से कुछ परिवारों का चुनाव दैव निदर्शन के आधार पर किया जाय।
4. प्रत्येक परिवार में से एक व्यक्ति को अध्ययन के लिए चुना जाय।

इस प्रकार इस विधि में अन्तिम चुनाव कई चरणों में जाकर होता है। इस विधि में स्तरित निदर्शन विधि एवं दैव निदर्शन विधि दोनों का प्रयोग किया जाता है। यदि सावधानीपूर्वक इसका प्रयोग किया जाए तो इसमें दोनों के लाभ प्राप्त हो सकते हैं तथा कम से कम इकाइयों से ही अधिकाधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया जा सकता है।

सुविधाजनक निदर्शन
(Convenience Sampling)

इस विधि में निदर्शन का चुनाव अध्ययनकर्त्ता की सुविधानुसार किया जाता है। अनुसंधानकर्त्ता निदर्शन का चुनाव करने से पूर्व, समय, धन, श्रम, इकाइयों से सम्पर्क करने की सुविधा, स्रोत सूची की उपलब्धता, आदि बातों को ध्यान में रखता है। इसे अनियमित, आकस्मिक, अवसरवादी तथा लापरवाहीपूर्ण निदर्शन भी कहते हैं। इस विधि के अवैज्ञानिक एवं पक्षपातपूर्ण होते हुए भी कई बार अध्ययन हेतु इसी का प्रयोग किया जाता है। इस विधि का उपयोग तब किया जाता है जब-

1. समग्र पूर्णतया स्पष्ट न हो;
2. जब निदर्शन की इकाइयां स्पष्ट न हो; तथा
3. जब स्रोत सूची अप्राप्य हो। यह विधि सरल, मितव्ययी, गहन अध्ययन एवं यथार्थ निदर्शन की सम्भावना के गुण रखती है।

स्वयं चयनित (निर्वाचित) निदर्शन
(Self-Selected Sampling)

कई बार निदर्शन का चुनाव नह किया जाता, वरन् सम्बन्धित व्यक्ति स्वयं ही निदर्शन में सम्मिलित होने का प्रस्ताव करता है। इसलिए ही इसे स्वयं चयनित निदर्शन कहते हैं। कई बार समाचार-पत्रों में प्रश्नावली प्रकाशित करवा दी जाती है जिसे इच्छुक व्यक्ति भरकर सम्बन्धित संस्था या व्यक्ति को भेज देते हैं।

क्षेत्रीय निदर्शन
(Area Sampling)

इस विधि में समग्र को पहले छोटे-छोटे क्षेत्रों में विभाजित करते हैं, तत्पश्चात् सम्पूर्ण क्षेत्र का ही अध्ययन किया जाता है। चूंकि इसमें इकाइयों के एक समूह का अध्ययन किया जाता है, इसलिए इसे संभाग निदर्शन (Cluster Sampling) भी कहते हैं। क्षेत्रीय निदर्शन का उपयोग कृषि क्षेत्रों के अध्ययन के लिए विशेष रूप से किया जाता है। अपराधी क्षेत्र एवं जनसंख्या अध्ययनों के लिए भी इस विधि का प्रयोग किया जाता है।

निदर्शन विधि के विभिन्न प्रकारों के उल्लेख से यह निष्कर्ष निकालना की सभी प्रकार प्रचलित हैं, ऐसा मानना सर्वथा गलत होगा। हाँ! इतना ध्यान रखना आवश्यक है कि शोधकर्त्ता समय तथा उद्देश्य के आधार पर निदर्शन विधि को अपनाकर उसका प्रयोग करता है। निदर्शन प्रणाली का मुख्य रूप से प्रयोग आजकल जनमत की जानकारी तथा बाजार में नये उत्पादन के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

अच्छे निदर्शन की विशेषताएं
(Quality of a good sampling)

अच्छे निदर्शन की विशेषताओं को समझने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि अच्छे निदर्शन के मार्ग में क्या कठिनाइयाँ आती हैं। सांख्यिकी द ष्टिकोण से अच्छे निदर्शन के मार्ग में दो महत्त्वपूर्ण कठिनाइयाँ आती हैं:

1. **वास्तविक रूप से निदर्शन का चयन** - वास्तविक रूप से निदर्शन का चयन किया जा सकता है या नह । यह अपने आप में एक चुनौती होती है, अच्छे निदर्शन के चुनाव में जिसका सांख्यिकी द ष्टिकोण से काफी महत्त्व होता है। यहाँ पर अच्छे निदर्शन चुने जाने से मतलब उसके समग्र के प्रतिनिधित्व से है। चुना गया निदर्शन समग्र का सच्चे रूप में प्रतिनिधित्व करता है या नह ।
2. **निदर्शन की विश्वसनीयता:** इसकी चुनौती उस निदर्शन की विश्वसनीयता से जुड़ी है। अर्थात् जिस निदर्शन का चुनाव किया गया है उसमें विश्वसनीयता की माप की जा सकती है या नह । इन्ह बातों से संबंधित होती है निदर्शन की कठिनाइयाँ।

इसलिए गुडे तथा हाट और पी0 वी0 यंग ने अच्छे निदर्शन की निम्न विशेषताओं का विशेषरूप से उल्लेख किया है-

1. अच्छे निदर्शन की प्रमुख विशेषता यह है कि उसका समग्र का पतिनिधि होना चाहिए। पी0 वी0 यंग ने अच्छे निदर्शन के लिए इसे एक आवश्यक शर्त माना है। प्रतिनिधित्व से तात्पर्य निम्न दो बातों से जुड़ी है-
   - **एकरूपता (Uniformity):** इस शर्त के अनुसार अध्ययन विषय के लिए चुने गए निदर्शन में एकरूपता है या नह , यह एक आवश्यक आधार बन जाती है अर्थात् निदर्शन में चुनी गई इकाईयों में एकरूपता होना आवश्यक है।
   - **चुनाव की प्रणाली (Method of Selection):** चुनाव की प्रणाली के द्वारा भी निदर्शन के प्रतिनिधित्व किये जाने की बात का आकलन किया जाता है। अगर चुनाव की प्रणाली उपयुक्त हो तो यह मान लिया जाता है कि निदर्शन का सही प्रतिनिधित्व हुआ है।

2. **पर्याप्त आकार (Adequate Sample Size):** एक अच्छे निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि निदर्शन का आकार पर्याप्त हो। अक्सर यह लोगों कि धारणा बन गई है कि निदर्शन का आकार जितना बड़ा होगा उसका प्रतिनिधित्व उतना ही अधिक होगा। परंतु यह धारणा सही नह है। अगर सही प्रणाली द्वारा निदर्शन की मात्रा पर्याप्त न हो तो उसे अच्छा निदर्शन नह कह सकते।

3. **पक्षपात रहित निदर्शन (Biased free Sample):** एक पक्षपात रहित निदर्शन के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि शोधकर्त्ता अपने पुर्वाग्रहों के आधार पर निदर्शन का चयन न करे, अर्थात् निदर्शन के चुनाव में व्यक्तिगत रूझान तथा मिथ्या धारणाओं को जहाँ तक संभव हो सके उसे अपने निदर्शन के चुनाव में न आने दे। पक्षपात रहित नीति तकनीकि के चुनाव में भी अपनाया जाना चाहिए। अक्सर यह पाया गया है कि जब कभी शोधकर्त्ता अपने पसंद के अनुसार तकनीकि तथा निदर्शन का चुनाव करते हैं तब सांख्यिकी द ष्टिकोण से उसमें कुछ कमी रह जाती है। इसलिए यह आवश्यक है कि अच्छे निदर्शन के लिए शोधकर्त्ता पक्षपात रहित द ष्टिकोण अपनाकर निदर्शन का चुनाव करे।

4. **विश्वसनीय निदर्शन (Reliable Sample):** एक अच्छे निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि चुना गया निदर्शन विश्वसनीय हो। निदर्शन की विश्वसनीयता न केवल निदर्शन के आकार, प्रणाली तथा पक्षपात रहित द ष्टिकोण द्वारा संभव है बल्कि इसके लिए यह भी आवश्यक है कि शोधकर्त्ता को शोध के उद्देश्यों की सही समझ हो। अगर शोधकर्त्ता को शोध के उद्देश्यों के बारे में सही जानकारी नह हो तो ऐसी स्थिति में अच्छे निदर्शन का चयन संभव नह ।

5. **सामान्य ज्ञान (General Knowledge):** यहाँ सामान्य ज्ञान से अभिप्राय शोधकर्त्ता द्वारा चुने गए निदर्शन के प्रति सही तार्किक द ष्टिकोण से है। इसके साथ ही शोधकर्त्ता को कुछ व्यवहारिक ज्ञान भी रखना आवश्यक है। इसके अभाव में एक शोधकर्त्ता अच्छे निदर्शन का चुनाव नह कर पाता। व्यवहारिक ज्ञान के आधार पर ही उपयुक्त निदर्शन का चुनाव संभव है।

उपर्युक्त बातों से निष्कर्ष यह निकलता है कि अच्छे निदर्शन के चुनाव के लिए उसका समग्र का प्रतिनिधित्व करना तथा विश्वसनीय होना एक महत्त्वपूर्ण लक्षण हैं और इस प्रकार से अच्छे निदर्शन का चुनाव सांख्यिकी द ष्टिकोण से निदर्शन पर आध ारित अध्ययन सांख्यिकी विशेषताओं के लिए भी काफी महत्त्वपूर्ण है।

आंकड़े संकलन की तकनीकी
(Techniques of Data Collection)

इस खंड के आरंभ में ही हमने दो महत्त्वपूर्ण शोध विधि के द्वारा आंकड़े एकत्रित किये जाने का उल्लेख किया है। आंकड़े इकट्ठे करने के दो निम्न शोध-विधि का वर्णन अक्सर किया जाता हैः

1. परिमाणात्मक विधि (Quantitative Method)
2. गुणात्मक विधि (Qualitative Method)

इन दोनों विधियों का इस्तेमाल आंकड़ों के संकलन में प्रमुख स्थान रखता है। यहाँ पर हम सबसे पहले परिमाणात्मक विधि द्वारा आंकड़ों के संकलन के विभिन्न प्रक्रियाओं का वर्णन करेंगे। इस विधि के द्वारा निम्न तीन प्रक्रियाओं का वर्णन किया गया हैं, जो आंकड़ों के संकलन में काफी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैंः

प्रश्नावलीः अर्थ, विशेषताएं एवं प्रकार
(Questionnaire: Meaning, Characteristics & Types)

प्रश्नावली विधि सामाजिक अनुसंधान की एक महत्त्वपूर्ण विधि है जिसका प्रयोग प्राथमिक तथ्यों के संकलन हेतु किया जाता है। जब सूचनादाता शिक्षित हो और अध्ययन क्षेत्र विस्त त हो तो इस विधि का प्रयोग ज्यादा उपयोगी साबित होता है। प्रश्नावली की परिभाषा देते हुए विभिन्न विद्वानों ने अपनी राय प्रकट की है। पी0 वी0 यंग का कहना है कि "प्रश्नावली का प्रारूप तैयार कर तथ्यों का संकलन एक व हत, विविध तथा फैले हुए लोगों के समूह से किया जाता है।" उनके अनुसार शिक्षित लोगों के लिए जो एक ही क्षेत्र में नह रहते हों और उनका निवास स्थल काफी फैला हो उनमें प्रश्नावली विधि के द्वारा आंकड़ों का संकलन काफी सहज हो जाता है।

गुडे तथा हाट का कहना है कि "प्रश्नावली शब्द का अर्थ एक उपकरण से जुड़ा है जिसके द्वारा प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किये जाते हैं जिसे उत्तरदाता स्वयं भरता है।" अर्थात् सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रश्नावली प्रश्नों की एक सूची है जिसे उत्तरदाता स्वयं भरकर या तो डाक से उसे प्रश्न भेजने वाले के पास प्रेषित करता है या फिर प्रश्न भेजने वाला स्वयं ही उनसे प्रश्नावली भरे जाने के बाद इकट्ठा कर लेते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रश्नावली किसी भी विषय पर पूछे जाने वाले प्रश्नों की एक सूची है जिसे डाक द्वारा उत्तरदाताओं के पास भेजा जाता है जिसे वे भरकर शोधकर्त्ता को लौटा देते हैं।

प्रश्नावली की विशेषताएं
(Characteristics of Questionnaire)

प्रश्नावली की निम्न विशेषताएं हैं:

1. अध्ययन किये जाने वाले विषय पर प्रश्नों की एक सूची है।
2. डाक द्वारा इसे प्रेषित किया जा सकता है या फिर स्थानीय स्तर पर भी इसे वितरित किया जा सकता है।
3. इसे उत्तरदाता स्वयं ही भरता है।
4. उत्तरदाता का शिक्षित होना आवश्यक है क्योंकि उसे प्रश्नावली को पढ़कर स्वयं भरना होता है।
5. प्राथमिक सूचना संकलन करने की यह एक अप्रत्यक्ष विधि है जिसमें शोधकर्त्ता प्रश्नावली भरते समय उसके पास नह होता है।
6. प्रश्नावली का प्रयोग विस्त त क्षेत्र में होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर प्रश्नावली के निम्न उद्देश्य को ध्यान में रखकर इसके महत्त्व को समझा जा सकता है।

1. विस्त त, विशाल, विविध बिखरे हुए लोगों से सूचना प्राप्त करना।
2. प्रमाणिक तथा विश्वसनीय जानकारी प्राप्त करना।
3. सूचनाओं को व्यवस्थित तरीके से संकलित करना।
4. विषय से संबंधित अध्ययन करना।
5. अनावश्यक जानकारी को छोड़ना।
6. कम लागत पर ही सूचना प्राप्त करना।
7. सांख्यिकी द ष्टिकोण से आंकड़ों को संकलित करना।
8. एक साथ ही सूचनाओं का शीघ्र संकलन।
9. विभिन्न विषयों पर विभिन्न क्षेत्रों से भी सूचना प्राप्त करना संभव हो जाता है।

प्रश्नावली के प्रकार
(Types of Questionnaire)

उद्देश्यों के आधार पर प्रश्नावली के विभिन्न प्रकार का वर्णन किया जाता है।

1. **डाक द्वारा भेजी गयी प्रश्नावली (Mailed Questionnaire):** जब शोधकर्त्ता एक ही स्थान पर शोध करते हुए विभिन्न जगहों से जानकारी प्राप्त करना चाहता है, तब ऐसी स्थिति में वह प्रश्नावली बनाकर डाक द्वारा प्रश्नावली को उन जगहों पर भेज देता है और कुछ दिनों के बाद ही उसे प्रश्नावली वापस मिल जाती है। इस प्रश्नावली में सफलता की बात करते हुए गुडे एवं हाट का मानना था कि किस हद तक डाक द्वारा भेजी गयी प्रश्नावली प्रासंगिक तथा अर्थपूर्ण है, इसका अंदाज इस बात से ही लगाया जा सकता है कि प्रश्न किस प्रकार के पूछे गये हैं और किस प्रकार के उत्तरदाताओं से प्रश्न पूछे गये हैं। निम्न बातों के उपर इस बात की सफलता निर्भर करती हैं:

(i) किस प्रकार की जानकारी प्राप्त करना है।

(ii) किस प्रकार के लोगों से जानकारी प्राप्त करना है।

(iii) उत्तरदाताओं तक पहुँचना किस हद तक संभव है।

(iv) उपकल्पना कितनी स्पष्ट और वैज्ञानिक रूप से चुस्त है।

(v) कई बार जानकारी प्राप्त करने के लिए हम प्रश्नावली विधि का प्रयोग कर बैठतें हैं परंतु उत्तरदाताओं से सही जानकारी नह मिल पाती। उन विषयों पर जानकारी देने में लोग कतराते हैं, संकोच करते हैं तथा उन्हें सदैव यह डर लगा होता है कि उस जानकारी का दुरूपयोग कर उनके खिलाफ कोई कारवाही न की जाये। उदाहरणार्थ कोई व्यक्ति भ्रष्टाचार का अध्ययन इस विधि से करना चाहे तो निश्चय ही जो जानकारी उसे प्राप्त होगी उसके विश्वसनीयता पर सदैव एक सवालिया निशान लगा होगा।

(vi) किस प्रकार के लोगों से जानकारी इकट्ठा करना है, प्रश्नावली की सफलता उस बात पर भी निर्भर करती है। डाक द्वारा भेजे गयी प्रश्नावली को शिक्षित व्यक्ति के पास नह भेजा गया है तो डाक से उस प्रश्नावली को वापस प्राप्त करना हमेशा मुश्किल होता है।

(vii) किस प्रकार के सूचनादाता से सवाल पूछकर जानकारी ली जानी है यह भी प्रश्नावली की सफलता के लिए आवश्यक हो जाता है। सभी सूचनादाता समान रूप से प्रश्नावली को भरकर प्रेषित करने में दिलचस्पी नह दिखाते हैं। अधिकांश लोग रूचि के अनुसार प्रश्नावली को भरकर भेजते हैं। कुछ लोग जिन्हें प्रश्नावली रूचीकर नह लगती है जाहिर है उसे भरकर प्रश्नावली भेजने में कोई भी दिलचस्पी नह दिखलायेंगे। ऐसे में यह जानना आवश्यक हो जाता है कि प्रश्नावली किसे भेजी जा रही है ताकि उसी के अनुसार प्रश्नावली को ज्यादा मात्रा में ज्यादा लोगों को भेजा जाये और बार-बार पत्र द्वारा सूचनादाता से प्रश्नावली को भरकर भेजने का अनुरोध किया जा सके।

(viii) उपकल्पना के उपर भी प्रश्नावली की सफलता निर्भर करती है। इसलिए उपकल्पना जितनी निश्चित तथा स्पष्ट होगा सूचनादाता को प्रश्नावली उतनी ही स्पष्ट लगेगी और उत्तरदाता शीघ्रता से प्रश्नावली भेज सकेगा।

2. **संरचित प्रश्नावली (Structured Questionnaire):** कुछ प्रश्नावली ऐसी होती हैं जिसमें संरचित प्रश्नावली होती है जिसमें भाषा, शब्द, वाक्य विन्यास आदि पहले से ही तय कर लिए जाते हैं और उसी के आधार पर प्रश्न पूछे जाते हैं। प्रश्नों की संख्या और उनके पूछे जाने का क्रम भी पूर्वनिर्धारित होता है जिससे प्रश्नावली स्पष्ट होती है और प्रश्न भी निश्चित होते हैं। इस प्रकार की प्रश्नावली से किसी सामाजिक समस्या, जनकल्याण की योजना या सरकार की चल रही योजनाओं की मुल्यांकन हेतु पहचान हो जाती है। कई बार लोगों की सामाजिक स्थिति तथा उनके रहन-सहन का पता लगाने के लिए भी इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग होता है।

3. **असंरचित प्रश्नावली (Unstructured Questionnaire):** असंरचित प्रश्नावली में प्रश्न पूर्वनिर्धारित तरीके से तैयार नह किये जाते हैं बल्कि इसमें काफी लचीलापन होता है और शोधकर्त्ता को उन प्रसंगों का उल्लेख मात्र करना होता है जिसपर वे उत्तरदाता से उत्तर चाहते हैं। इस प्रकार की प्रश्नावली में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के द्वारा प्रश्नों की प्रकृति को बताकर उससे उठने वाले अन्य प्रश्नों को शोधकर्त्ता समझकर उसे रूंपातरित कर पुनः प्रश्नों को पूछने की बात रहती है। अतः इस प्रकार के प्रश्नावली में लचीलापन होता है जिसके कारण उत्तरदाता खुलकर अपने आप को अभिव्यक्त कर सकता है।

4. **खुली प्रश्नावली (Open Questionnaire):** इस प्रकार की प्रश्नावली में उत्तरदाता को प्रश्नों के उत्तर देते समय खुली छूट दी जाती है कि वह उस समस्या या घटना के बारे में खुलकर अपनी राय प्रकट कर सके। यहाँ पर उत्तरदाता को पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। अपने विचारों को अभिव्यक्त करने का। यहाँ सुचनादाता के उत्तर को सीमित या निर्धारित उत्तरों में बांधा नह जाता है बल्कि काफी लचीलापन रूख अपनाया जाता है। जब कभी मानवीय स्वभाव, भावनाओं तथा सुझावों को लेकर प्रश्न पूछे जाते हैं उस समय इस प्रकार से प्रश्न को पूछकर उत्तरदाता से ज्यादा जानकारी ली जा सकती है। विवरणात्मक तथा गुणात्मक किस्म के आंकड़ों व जानकारी प्राप्त करने में इस प्रकार से प्रश्नावली की उपयोगिता काफी होती है। ऐसी प्रश्नावली में प्रश्न पूछने के स्थान पर ही पर्याप्त मात्रा में जगह

छोड़ दिया जाता है जहाँ सूचनादाता अपने विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त कर सके। उदाहरणस्वरूप निम्न प्रश्नों के द्वारा इसका अंदाज लगाया जा सकता है:

1. भारत में गरीबी के कारण क्या है?
2. समाज में दहेज प्रथा को कैसे समाप्त किया जा सकता है?
3. छात्रों में अनुशासनहीनता के क्या कारण हैं?
4. राष्ट्र निर्माण में राष्ट्र नेताओं की क्या भूमिका होनी चाहिए?

5. **बंद प्रश्नावली (Closed Questionaire):** यह खुली प्रश्नावली के विपरित है जिसमें उत्तरदाता के उत्तर को सीमित कर दिया जाता है। अर्थात् प्रश्न इस प्रकार पूछे जाते हैं कि शोधकर्त्ता द्वारा सुझाये गये विकल्पों में से ही उत्तर चयन करने होते हैं। अधिकांश प्रश्नों के उत्तर को कुछ विकल्प के उपर ही उत्तरदाता को √ (सही का निशान) लगाकर अपने उत्तर देने होते हैं और संभवतः इसलिए वह स्वतंत्र रूप से उत्तर देने के लिए बाध्य नह किया जाता। उसे उत्तरों को दिये गये विकल्प में ही निशान लगाकर अपनी राय प्रकट करनी होती है। उत्तरों के विकल्प को शोधकर्त्ता ही पूर्वनिर्धारित प्रश्नावली में डाल देता है। इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर हाँ तथा नह में दिये जाते हैं। निम्न प्रश्नों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि किस प्रकार के प्रश्न इस प्रकार की प्रश्नावली में पाये जाते हैं:

क्या आप विवाहित हैं? हाँ/नह

क्या आप छोटे परिवार के पक्ष में हैं? हाँ/नह

परिवार नियोजन कार्यक्रम को आपकी राय में क्यों सफलता नह मिल पा रही है?

(i) अशिक्षा
(ii) यह जिम्मेंवारी महिलाओं के उपर छोड़ दी गयी है।
(iii) परंपरागत सोच
(iv) पुरूष प्रधान समाज में पुरूष बच्चों का होना अनिवार्य माना जाता है।

6. **चित्रमय प्रश्नावली (Pictorial Questionnaire):** ऐसा मानकर चला जाता है कि प्रश्नावली केवल शिक्षित लोगों के लिए ही उत्तम विधि हो सकती है जबकि चित्रमय प्रश्नावली से यह धारणा झुठी साबित हो जाती है क्योंकि जब हमें उन लोगों से प्रश्नावली भरवानी हो जो ज्यादा शिक्षित नह हों तो उन्हें चित्रों को दिखाकर प्रश्न के प्रति आकर्षित किया जा सकता है और चित्रों पर ही निशान लगाकर अपनी राय प्रकट कर सकते हैं। उदाहरणार्थ चुनाव के समय कुछ पार्टी के चुनाव चिन्ह को ही प्रश्नावली में शामिल कर उत्तरदाता के आकर्षण को बनाये रखा जा सकता है। पार्टी के विभिन्न चुनाव चिन्हों को ही चुनकर सूचनादाता अपनी रूझान व सोच प्रकट करता है। ऐसी प्रश्नावली को महिलाओं, बच्चों द्वारा ज्यादा उपयोगी माना गया है।

7. **तथ्य संबंधी प्रश्नावली (Factual Questionnaire):** सामाजिक तथ्यों से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए इस प्रकार की प्रश्नावली का प्रयोग किया जाता है। जब हम किसी समूह या व्यक्ति के आय, धर्म, जाति, शिक्षा, विवाह, व्यवसाय आदि से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रश्नावली तैयार करते हैं तो इस प्रकार की प्रश्नावली को तथ्य संबंधी प्रश्नावली कहा जाता है। इस प्रकार की प्रश्नावली का मुख्य उद्देश्य तथ्यों से संबंधित जानकारी प्राप्त करना होता है।

8. **मत व मनोव त्ति संबंधी (Questionnaire of Opinion & Attitude):** जब कभी प्रश्नावली का प्रयोग व्यक्ति के रूझान या किसी राजनीतिक दल के प्रति उसका मत जानने के लिए प्रश्नावली को तैयार किया जाता है तो उसे मत एवं मनोव त्ति संबंधी प्रश्नावली कहते हैं।

उपर्युक्त प्रकारों से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रश्नावली उद्देश्यों के आधार पर विविध प्रकार के हो सकते हैं। परंतु महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रश्नावली शोध के लिए एक आवश्यक तरीका है जिसकी सफलता के लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना अत्यंत ही आवश्यक है:

1. तुलनात्मक द ष्टि से प्रश्नों की संख्या का सीमित होना।
2. संरचित प्रश्नों के समावेश से प्रश्नों की विश्वसनीयता बढ़ती है।
3. बंद प्रश्नावली से भी आंकड़ों का विश्लेषण आसान हो जाता है।
4. प्रश्नों का सरल, निश्चित तथा ग्राह्य होना आवश्यक है ताकि उत्तरदाता उन प्रश्नों का सही-सही उत्तर दे सके।
5. प्रश्न अस्पष्ट तथा विवरणात्मक न हों।
6. प्रश्न परिमाणात्मक न हों।
7. प्रश्न एक-दूसरे से जुड़े हों।
8. प्रश्न इस प्रकार के हों कि उनसे जो जानकारी प्राप्त करनी है वह आसानी से मिल सके।
9. प्रश्नों की भाषा सरल एवं वाक्य विन्यास ज्यादा बोझिल न हों।
10. प्रश्नों को अगर सारणी द्वारा आगे प्रस्तुत करना हो तो उसके प्रारूप को उसके अनुरूप ही तैयार कर पूछा जाना चाहिए।
11. प्रश्नों के बीच एक तार्किक संबंध हों ताकि उसी के अनुरूप सूचनादाता को उत्तर प्राप्त हो सके।

अनुसूचीः अर्थ, विशेषताएं एवं प्रकार
(Schedule: Meaning, Characteristics & Types)

परिमाणात्मक विधि के द्वारा आंकड़े इकट्ठे करने की एक और उत्तम विधि है अनुसूची। सांख्यिकी विधि के द्वारा सामाजिक शोधकर्त्ता अनुसूची के मदद से कुछ ठोस जानकारी प्राप्त करने में सफल होते हैं। प्रश्नावली की तरह ही अनुसूची को भी व हत, विविध तथा विस्त त समूह से जानकारी प्राप्त करने के लिए उत्तम विधि समझा जाता है। अनुसूची की परिभाषा देते हुए पी0 वी0 यंग का कहना था कि यह भी प्रश्नों की एक सूची हैं जिसे सामाजिक अनुसंधानकर्त्ता साधारणतया स्वयं भरता है जिसके द्वारा प्रश्नों के उत्तर की व्याख्या की जाती है। वेब्सटर शब्दकोष में भी अनुसूची को एक औपचारिक सूची के रूप में वर्णित किया है जिसके द्वारा औपचारिक स्तर पर जानकारी प्राप्त कर परिमाणात्मक किस्म के आंकड़े एकत्रित किये जाते हैं।

गुडे तथा हाट ने अनुसूची की परिभाषा देते हुए लिखा है, अनुसूची उन प्रश्नों के समूह के नाम से जुड़ा है जिसे शोधकर्त्ता एक-दूसरे के आमने-सामने होकर पूछता और स्वयं भरता है। उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुसूची अध्ययन विषय से संबंधित प्रश्नों की एक व्यवस्थित एवं वर्गीकृत सूची है जिसे शोधकर्त्ता उत्तरदाता के पास जाकर उनसे पूछता है तथा प्रश्नों की सूची को भी स्वयं अपने हाथों से लिखकर भरता हैं।

अनुसूची की विशेषताएं
(Characteristics of Schedule)

अनुसूची की निम्न विशेषताएं हैं:

1. अनुसूची में अध्ययन समस्या से संबंधित प्रश्नों की क्रमबद्ध सूची होती है।
2. इसे एक फार्म के रूप में भी छपवाया जाता है।
3. अध्ययनकर्त्ता स्वयं उस फार्म को व्यक्तिगत रूप से सूचनादाता के पास ले जाता है और उससे साक्षात्कार कर प्रश्नों को पूछता है।
4. प्रश्नों की उस सूची को शोधकर्त्ता स्वयं भरता है।
5. अनुसूची में निरीक्षण, साक्षात्कार एवं प्रश्नावली विधि तीनों का समन्वित रूप एक साथ ही देखा जा सकता है।
6. अनुसूची का प्रयोग शिक्षित तथा अशिक्षित दोनों ही प्रकार के उत्तरदाताओं के लिए समान रूप से उपयोगी होता है।
7. अनुसूची को शोधकर्त्ता स्वयं भरता है इसलिए उत्तरदाताओं के उत्तर को विश्वसनीय माना जा सकता है।

8. इसके द्वारा संकलित जानकारी ज्यादा विश्वसनीय होती है क्योंकि शोधकर्त्ता प्रश्नों को पूछकर स्वयं भरता है।
9. गुणात्मक तथ्यों को सांख्यिकी रूप देने में आसानी होती है
10. शोधकर्त्ता अस्पष्ट प्रश्नों को स्पष्ट कर किसी भी अस्पष्ट एवं संदेह का समाधान ढूंढने की क्षमता रखता है।

अनुसूची के प्रकार
(Types of Schedule)

पी० वी० यंग ने अनुसूची को एक प्रकार की रिपॉर्टिंग का तरीका बताया है जिसके निम्न स्वरूप हैं:

1. **अवलोकन सूची (Observation Schedule):** इस प्रकार की अनुसूची में शोधकर्त्ता अवलोकन का सहारा लेकर घटनाओं के बारे में जो शक कायम करता है उसे स्वयं ही लिख लेता है। घटनाओं के निरीक्षण से ही महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर वह उसे अपने अध्ययन के योग्य जहाँ उचित समझता है उस जानकारी का इस्तेमाल करता है। इस प्रकार से प्राप्त जानकारी निरीक्षण पर आधारित होती है इसलिए अनुसूची में जो जानकारी शोधकर्त्ता द्वारा लिखी जाती है उसकी विश्वसनीयता सदैव बनी होती है। अवलोकन करने का प्रावधान शोधकर्त्ता को होता है इसलिए शोधकर्त्ता के शोध का मार्गदर्शन भी हो जाता है। यहाँ निरीक्षण के द्वारा जानकारी प्राप्त करने का प्रावधान होता है इसलिए एक से अधिक निरीक्षक की मदद से सही जानकारी प्राप्त की जाने की संभावना भी बनी रहती है। इसकी विशेषताओं का वर्णन करते हुए पी० वी० यंग ने डोरोथी थामस तथा शार्मेट बुह्लर द्वारा निम्न लक्षणों को उद्धरित किया हैं:
    1. यह शोधकर्त्ता को विशेष रूप से स्मरण दिलाता है अर्थात् Memory Tickler का काम करता है।
    2. यहाँ वस्तुनिष्ठ तरीके से व्यापक रूप से संकलित आंकड़ों को एकत्रित करने का प्रावधान होता है।
    3. यह एक प्रमाणिक तरीका है जिसके द्वारा जानकारी प्राप्त होती है।
    4. यह अध्ययन के क्षेत्र को सीमित करता है।
2. **प्रलेख अनुसूची (Document Schedule):** पी0 वी0 यंग ने प्रलेख अनुसूची का महत्त्व बताते हुए लिखा है कि इस अनुसूची का प्रयोग व्यक्तिगत जीवन इतिहासों तथा अन्य संबंधित सामग्री को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार की अनुसूचीयों का उपयोग लिखित प्रलेखों जैसे आत्मकथा, डायरी, सरकारी तथा गैर सरकारी दस्तावेजों आदि के प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार प्रलेख अनुसूची के द्वारा जो जानकारी प्राप्त की जाती है उसका स्रोत आत्मकथा, डायरी, दफ्तरी रिकार्ड, आदि होते हैं जिनसे महत्त्वपूर्ण सूचनाएं प्राप्त की जाती है।
3. **संस्था सर्वेक्षण अनुसूची (Institution Survey Schedule):** जब किसी संस्था के समक्ष विद्यमान समस्याओं का निरीक्षण कर जानकारी प्राप्त करनी होती है तो ऐसे अनुसूची का प्रयोग किया जाता है। इस अनुसूची के द्वारा उस संस्था के बारे में व उसकी क्रिया-कलापों से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए इसका प्रयोग उत्तम माना जाता है। जनगणना के लिए भी इस प्रकार के अनुसूची का प्रयोग जनगणना अधिकारियों द्वारा इसके विषय से संबंधित आंकड़ों के लिए भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। कई बार निर्वाचन अधिकारी भी मतदान से पहले इस प्रकार के आंकड़ें इकट्ठे करने के लिए अनुसूची तैयार करवाकर जानकारी एकत्रित करते हैं।
4. **मूल्यांकन अनुसूची (Rating Schedule):** इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किसी विषय के बारे में लोगों का रूझान, राय, विश्वास तथा पसंद जानने के लिए किया जाता है। समाजिक समस्याओं एवं घटनाओं के मुल्यांकन के लिए भी इस प्रकार की अनुसूची का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के अनुसूची से पक्ष-विपक्ष के बारे में जानकारी मिलती है।
5. **साक्षात्कार अनुसूची (Interview Schedule):** जब प्रत्यक्ष साक्षात्कार के द्वारा अनुसूची का प्रयोग कर महत्त्वपूर्ण जानकारी किसी विषय, समस्या व घटना के बारे में इकट्ठा किया जाता है तो इसे साक्षात्कार अनुसूची कहते हैं। इस प्रकार के अनुसूची के द्वारा प्राप्त जानकारी को साख्यिकी तरीके से प्रस्तुत भी किया जा सकता है और इसके लिए इस अनुसूची के विश्वसनीयता को सभी स्वीकार करते हैं।

यहाँ पर यह बात स्मरण रखना आवश्यक है कि जिस प्रकार की सावधानी प्रश्नावली के निर्माण में शोधकर्त्ता को रखनी पड़ती है उससे कह ज्यादा सतर्कत्ता की जरूरत यहां पड़ती है क्योंकि यहाँ शोधकर्त्ता एक साथ ही तीन अध्ययन विधि का इस्तेमाल करता है। इस विधि के साथ ही उसे निरीक्षण, साक्षात्कार तथा प्रश्नों को पूछकर उत्तरदाताओं से मिले उत्तर को लिखना भी पड़ता है और संभवतः इसलिए शोधकर्त्ता को विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है।

साक्षात्कारः अर्थ, विशेषताएं एवं प्रकार
(Interview: Meaning, Characteristics & Types)

सामाजिक शोध में साक्षात्कार द्वारा महत्त्वपूर्ण आंकड़ें इकट्ठे किए जाते हैं। साक्षात्कार का अर्थ, आम बोल-चाल की भाषा में एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से मिलकर बात करने से है। समाजशास्त्रीय द ष्टिकोण से साक्षात्कार का एक विशेष अर्थ लिया जाता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसका प्रयोग कर शोधकर्त्ता एक खास उद्देश्य से वार्त्तालाप के द्वारा महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करता है। इस विधि को एक लचीली विधि कहा गया है, जिसमें शोधकर्त्ता अध्ययन विषय से सम्बन्धित प्रश्नों को क्रमबद्ध कर विधिवत जानकारी प्राप्त करता है। परिस्थिति के अनुसार वह प्रश्नों को बदलकर उत्तरदाता से जैसी जानकारी उसे चाहिए, वह जानकारी प्राप्त कर लेता है। इसलिए पी० वी० यंग ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि साक्षात्कार एक ऐसी क्रम-बद्ध पद्धति है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के आंतरिक जीवन में कल्पनात्मक रूप से प्रवेश करता है, जिससे वह अपरिचित होता है। गुडे तथा हाट ने भी साक्षात्कार को एक सामाजिक अंतः क्रिय की एक प्रक्रिया माना है। अन्य सामाजिक क्रियाओं की तरह साक्षात्कार के भी विभिन्न पहलू होते हैं और एक शोधकर्त्ता बड़ी कुशलता से प्रश्न पुछकर अध्ययन विषय के मामले में जानकारी प्राप्त करता है। वी० एम० पामर ने भी इसलिए साक्षात्कार विधि को एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया में परिभाषित किया है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि साक्षात्कार एक ऐसी व्यवस्थित विधि है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी खास उद्देश्य को ध्यान में रखकर वार्त्तालाप के द्वारा उत्तर, प्रतिउत्तर करते हैं। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि साक्षात्कार में शोधकर्त्ता उत्तरदाताओं की भावनाओं, विचारों तथा मनोव त्तियों को ध्यान में रखकर उसका सूक्षम अध्ययन करता है। इस प्रकार यह वार्त्तालाप एक सामाजिक प्रक्रिया बन जाता है, जिसके द्वारा शोधकर्त्ता महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेता है।

साक्षात्कार की विशेषताएँ
(Characteristics of Interiew)

साक्षात्कार विधि की निम्न विशेषताओं की चर्चा अक्सर की जाती हैः

1. **दो या दो से अधिक व्यक्ति का आमने-सामने होकर बात करना (Face to Face contact):** साक्षात्कार विधि की मुख्य विशेषता यह है कि इस विधि में जिन व्यक्तियों के बीच सम्पर्क स्थापित होता है, वह एक दूसरे के आमने-सामने होते हैं, जिसके कारण शोधकर्त्ता उत्तरदाता के मानसिक दशा को समझने में सफल हो जाता है।
2. **प्राथमिक सम्बन्ध (Primary Relations):** साक्षात्कार विधि की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि जो व्यक्ति एक-दूसरे के आमने-सामने होते हैं, उनके बीच एक प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित होता है, जिसके फलस्वरूप उत्तरदाता विश्वसनीय स्तर पर जानकारी देता है।
3. **सामाजिक प्रक्रिया (Social Process):** साक्षात्कार विधि का स्वरूप ऐसा होता है जिससे यह एक सामाजिक प्रक्रिया का एक हिस्सा बन जाती है।
4. **विशिष्ट उद्देश्य (Special Objectives):** साक्षात्कार विधि के द्वारा शोधकर्त्ता किसी खास विषय पर जानकारी प्राप्त करने के लिए इस विधि का प्रयोग करता है। जिस प्रकार एक डॉक्टर अपने मरीज़ से उसके रोग के बारे में सही उपचार करने के लिए वार्तालाप के द्वारा जानकारी प्राप्त करता है, उसी प्रकार शोधकर्त्ता भी विशेष उद्देश्य को जानकर विषय से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करता है।
5. **सुचना संकलन (Collection of Data):** साक्षात्कार विधि के द्वारा शोधकर्त्ता का प्राथमिक उद्देश्य सुचना एकत्रित करना होता है। सुचना एकत्रित करने की इस मौखिक विधि का प्रयोग अगर कुशलता से किया जाए तो यह विधि अन्य विधियों के अपेक्षाकृत सुचना संकलन की एक उत्तम विधि कही जा सकती है।

साक्षात्कार के प्रकार
(Types of Interview)

साक्षात्कार के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर साक्षात्कार के कई प्रकारों का वर्णन किया जाता हैं।

पी0 वी0 यंग ने कार्यों के आधार पर निम्न चार प्रकार के साक्षात्कार का वर्णन किया हैः

चार्ट-3.1
साक्षात्कार के प्रकार (पी0 वी0 यंग के अनुसार)

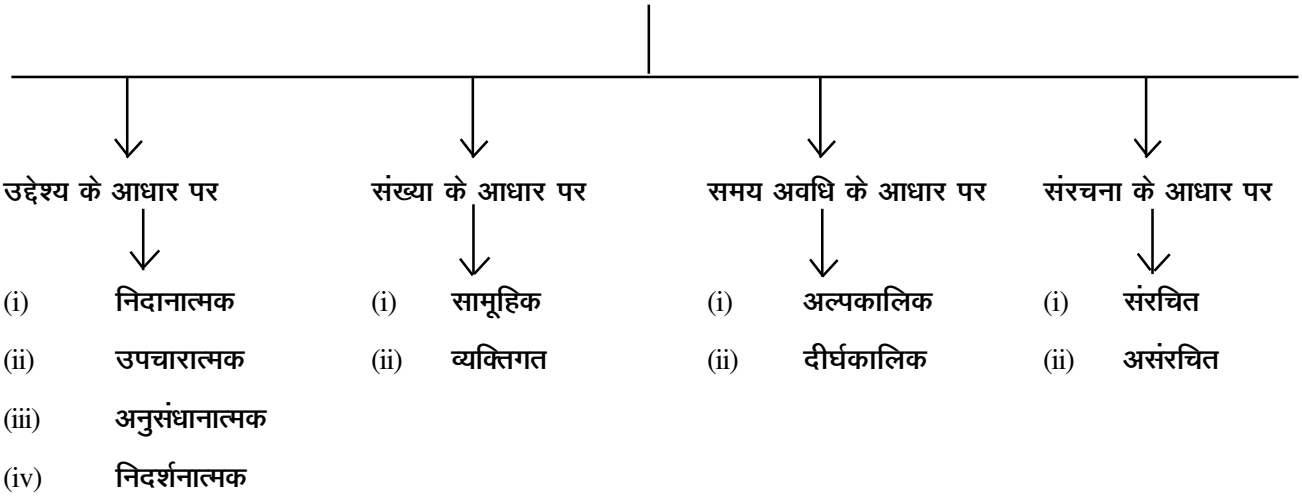

1. **निदानात्मक साक्षात्कार (Diagnostic Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार का उद्देश्य किसी सामाजिक समस्याओं व जानकारी प्राप्त करने के लिए किया जाता है, जैसे- बाल अपराध की बढ़ती घटनाएँ।
2. **उपचारात्मक साक्षात्कार (Treatment Interview):** समस्या की जानकारी प्राप्त कर लेने के पश्चात् उस समस्या को दूर करने के उपाय भी पुछे जाते हैं।
3. **अनुसंधानात्मक साक्षात्कार (Research Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार में नई जानकारी तथा नए तथ्यों की खोज को ही मुख्य उद्देश्य माना जाता है।
4. **निदर्शनात्मक साक्षात्कार (Sample Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार विधि में कुछ खास चुने गए व्यक्तियों से साक्षात्कार किया जाता है, और इस प्रकार चुने हुए व्यक्तियों से बात कर महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की जाती है।

संख्या के आधार पर साक्षात्कार के दो निम्न प्रकारों का वर्णन किया जाता हैः

1. **सामूहिक साक्षात्कार (Group Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार में व्यक्ति विशेष के बजाय एक समुह के द्वारा प्रश्न पूछे जाते हैं। उदाहरण के लिए जब कभी कोई प्राकृतिक घटना जैसे भुकम्प, बाढ़ आदि अचानक आ जाती है, तो उसके बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए सामूहिक साक्षात्कार ज्यादा प्रभावशाली माना जाता है।
2. **व्यक्तिगत साक्षात्कार (Individual Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार में सूचनादाता एक व्यक्ति होता है, जिससे साक्षातकर्त्ता प्रश्न पूछकर जानकारी प्राप्त करता है।

समय अवधि के आधार पर निम्न प्रकार के साक्षात्कार का वर्णन किया जाता हैः

1. **अल्पकालिक साक्षात्कार (Short Interview):** अल्पकालिक साक्षात्कार में कुछ चुने हुए प्रश्नों के बारे में ही उत्तर प्राप्त किए जाते हैं। आजकल दुरदर्शन पर कई ऐसे प्रोग्राम आते हैं, जिसमें दर्शकों को एस0 एम0 एस0 के द्वारा सैल्युलर फोन का इस्तेमाल कर उनसे राय ली जाती है।
2. **दीर्घकालिक साक्षात्कार (Long term Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार का उद्देश्य दीर्घकालिक होता है,

जिसमें एक घटना के बारे में लम्बे अर्से तक जानकारी प्राप्त करने की मंशा होती है, जैसे- आतंकवादी वारदातों में क्रमशः जानकारी, शोधकर्त्ता साक्षात्कार विधि का इस्तेमाल करता है।

संरचना के आधार पर निम्न प्रकार के साक्षात्कार की चर्चा की जाती हैं:

1. **संरचित साक्षात्कार (Structured Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार में शोधकर्त्ता जिस विषय पर जानकारी प्राप्त करना चाहता है, उसका पूर्व निर्धारण कर लिया जाता है। इस प्रकार साक्षात्कारकर्त्ता प्रश्नों का निर्माण पहले से ही कर कुछ निश्चित जानकारी प्राप्त करने पर सफल हो पाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार प्रशासनिक तथा बाजार से सम्बन्धित शोध के लिए काफी उपयोगी सिद्ध होते हैं।
2. **असंरचित साक्षात्कार (Unstructured Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कार की विधि असंरचित होती है। अर्थात् प्रश्नों की कोई पूर्व निर्धारित सूची नह होती है। यहाँ पर प्रश्नों को उत्तरदाता के दिए गए सूचना के आधार पर ही निर्माण कर पुछा जाता है। इसके अन्तर्गत एक लचीलापन द ष्टिकोण दिखता है।

इसके अतिरिक्त कुछ और प्रकार के साक्षात्कार की चर्चा भी की जाती है, जो निम्न हैं:

1. **केन्द्रित साक्षात्कार (Focussed Interview):** इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिका के समाजशास्त्री रॉबर्ट के0 मर्टन ने किया। सार्वजनिक संदेशवाहनों के साधनों जैसे- रेडियो, दुरदर्शन, फिल्म तथा समाजपत्र आदि का प्रभाव जानने के लिए इस साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया। किसी खास कार्यक्रम को दिखाने के बाद श्रोताओं तथा दर्शकों का साक्षात्कार लिया जाता है, और यह जानने की कोशिश की जाती है, कि उस कार्यक्रम का कितना प्रभाव दर्शकों पर पड़ा है। इस प्रकार के केन्द्रित साक्षात्कार विधि का प्रयोग मनोवैज्ञानिक अध्ययन में काफी सफल हुआ है। जिस प्रकार से इस साक्षात्कार विधि की उपयोगिता की चर्चा रॉबर्ट के० मर्टन ने की है, उसे ध्यान में रखकर यह कहा जा सकता है कि केन्द्रित साक्षात्कार की लोकप्रियता उस हिसाब से समाजशास्त्र में नह हुई है।
2. **गहन साक्षात्कार (Depth Interview):** फेबिकार्य जो एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक है, उन्होंने गहन साक्षात्कार को अचेतन मानसिक स्थिति को समझने का एक महत्त्वपूर्ण विधि माना है। उनका यह मानना था कि अगर साक्षात्कारकर्त्ता कुशलता से इस विधि का प्रयोग करें तो इस साक्षात्कार विधि से महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हो सकती है। इस प्रकार की साक्षात्कार विधि में शोधकर्त्ता उत्तरदाताओं के मानसिक स्थिति का अध्ययन करने के लिए काफी उपयोगी मानते हैं।

साक्षात्कार विधि के गुण व दोष
(Merits and Demerits of Interview)

सामाजिक शोध में साक्षात्कार विधि के महत्त्व को इसलिए भी स्वीकार किया जाता है, क्योंकि इसमें अन्य विधियों का भी समावेश होता है। इसलिए इसे अन्य विधि के साथ जोड़कर देखा जाता है। जहाँ तक इसके गुणों का प्रश्न हैं ये निम्न हैं:

1. **मनोवैज्ञानिक महत्त्व (Psychological Importance):** जैसा की पहले भी कहा जा चुका है कि साक्षात्कार विधि एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में विकसित हुई है। इसलिए इस विधि के द्वारा मनुष्य की भावनाओं, धारणाओं, तथा विचारों का गहन अध्ययन मनोवैज्ञानिक द ष्टिकोण से काफी महत्त्व रखता है।
2. **सभी स्तर के लोगों से सूचना प्राप्ति का साधन (Collection of Data from all sections of people):** इस विधि के द्वारा शिक्षित, अशिक्षित, विभिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिवेश से जुड़े लोगों से संपर्क स्थापित करते हैं। बातचीत के द्वारा महत्त्वपूर्ण जानकारी ली जा सकती है।
3. **भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन (Study of Past-events):** यह एक ऐसी विधि है, जिसके द्वारा अतीत में घटी घटनाओं की महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इतिहासकारों ने इस विधि के द्वारा प्रथम विश्व युद्ध तथा द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जो युद्ध से सम्बन्धित खास जानकारी प्राप्त करनी थी, उसके लिए इसका प्रयोग किया।
4. **अमूर्त्त घटनाओं का अध्ययन (Study of Abstract Phenomena):** इस विधि से अद श्य घटनाओं का अध्ययन संभव हो जाता है।

5. **सूचनाओं का सत्यापन (Verification of Information):** उत्तरदाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं की जाँच पड़ताल भी इस विधि के द्वारा संभव हो जाती है।

6. **लचीलापन (Flexible Method):** इस विधि का सबसे बड़ा गुण इसका लचीलापन होना है। लचीलेपन के कारण इस विधि का प्रयोग अध्ययन के दौरान भी अगर कुछ अतिरिक्त जानकारी के लिए प्रश्न पूछकर करना हो तो वह संभव हो जाता है।

अवगुण
(Demerits)

सब गुणों के बावजूद भी इस विधि की अपनी कुछ खामियाँ हैं जिसका उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है:

1. **आत्मनिष्ठ द ष्टिकोण (Subjective approach):** इस विधि के द्वारा जो जानकारी ली जाती है वह शोधकर्त्ता के पूर्वाग्रह तथा उसकी इच्छाओं के अनुरूप तो होती ही है, बल्कि इसके साथ-साथ उत्तरदाता के पूर्वाग्रह से भी प्रभावित होती है।

2. **दोषपूर्ण स्मरण शक्ति (Faulty Memory):** यहाँ कई प्रश्नों का उत्तर सूचनादाताओं के स्मरण पर निर्भर करता है। कुछ ऐतिहासिक घटनाओं की जानकारी वह अपने स्मरण से देता है जो गलत भी हो सकते हैं।

3. **पूर्वाग्रह की संभावना (Possibility of Bias):** उत्तरदाताओं द्वारा दी गयी सूचना में कुछ पूर्वाग्रह कुछ पूर्वानुमान भी व्यापत होते हैं, जिसके कारण उसके द्वारा दिये गये सूचना पर पूर्णरूप से विश्वास करना अध्ययन की विश्वसनीयता को प्रभावित करता है।

4. **प ष्ठभूमि का भिन्नता (Difference of Background):** उत्तरदाता से प्रश्न करते समय जब शोधकर्त्ता उससे संबंध स्थापित करता है तो उसे उसके प ष्ठभूमि का पता होता है। कई बार इस प ष्ठभूमि के कारण शोधकर्त्ता को सही संपर्क स्थापित करने में परेशानी आती है। संबंध स्थापित कर लेने के बावजूद भी दोनों एक-दूसरे की प ष्ठभूमि को लेकर आश्वस्त नह हो पाते, जिससे शोधकर्त्ता द्वारा प्राप्त जानकारी पर हमेशा विश्वास नह किया जा सकता है।

5. **अपूर्ण सूचना (Incomplete Information):** अपूर्ण सूचना मिलने की भी संभावना बनी रहती है। साक्षात्कार के द्वारा जो जानकारी शोधकर्त्ता को प्राप्त होती है, उसमें हमेशा कुछ न कुछ कमी रह जाती है, जिसके कारण स्मरण पर विश्वास करना, उत्तरदाता का अपना द ष्टिकोण तथा शोधकर्त्ता की मनोवैज्ञानिक दशा - इन सभी के कारण प्राप्त जानकारी में कुछ न कुछ कमी रह जाती है जिसे दूर करना शोधकर्त्ता के लिए मुश्किल होता है।

गुणात्मक विधि
(Qualitative Method)

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि साक्षात्कार सूचना एकत्रित करने की उत्तम विधि है और अगर शोधकर्त्ता पर्याप्त सावधानी और कुशल तरीके से इस विधि का प्रयोग करें तो महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकता है। गुणात्मक विधि के द्वारा भी आंकड़े एकत्रित किए जाते हैं। यहाँ पर हम निरीक्षण, वैयक्तिक अध्ययन तथा अंतर्वस्तु विश्लेषण के अर्थ एवं प्रकृति की व्याख्या करते हुए इनका वर्णन प्रस्तुत करेंगे।

निरीक्षण: अर्थ, विशेषताएं और प्रकार
(Observation: Meaning, Characteristics & Types)

समाजशास्त्र में निरीक्षण विधि का प्रयोग आंकड़ों के संकलन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका के रूप में अदा करता है। वैज्ञानिक यह मानते हैं कि अनुसंधान निरीक्षण से शुरू होता है और संकलित आंकड़ों के मुल्यांकन के लिए निरीक्षण का ही सहारा लिया जाता है। सरल शब्दों में निरीक्षण की परिभाषा देते हुए पी० वी० यंग की यह मान्यता थी कि निरीक्षण को एक क्रमबद्ध अवलोकन के रूप में देखा जाना चाहिए। निरीक्षण के द्वारा यद्यपि सभी क्रियाओं का अध्ययन संभव नह है, परन्तु फिर भी यह कहा जा

सकता है कि घटनाओं का अध्ययन अगर निरीक्षण पर आधारित हो तो संकलित आंकड़ों के संग्रहण पर विश्वास अधिक किया जाता है। इसलिए गुडे तथा हाट ने निरीक्षण की परिभाषा देते हुए यह विचार व्यक्त किया था कि निरीक्षण विधि के द्वारा सरल से सरल क्रियाओं तथा जटिल से जटिल क्रियाओं का अवलोकन सम्बन्ध है। उनका मत था कि निरीक्षण विधि को पुष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि शोधकर्त्ता सुक्ष्म द ष्टिकोण रखता हो तथा अध्ययन विषय के बारे में पुरी जानकारी रखता हो। इसलिए उनकी यह मान्यता थी कि निरीक्षण के दौरान शोधकर्त्ता को महत्त्वपूर्ण जानकारी के बारे में नोट तैयार करते रहना चाहिए।

निरीक्षण विधि द्वारा संकलित आँकड़ों का स्वरूप गुणात्मक होता है, जिसे समझने के लिए एक शोधकर्त्ता मानविय व्यवहार के विभिन्न पहलुओं का अवलोकन कर उसके बारे में जानकारी प्राप्त करता है, क्योंकि निरीक्षण के द्वारा बहुत सारी जानकारी प्राप्त की जा सकती है, इसलिए यह आवश्यक है कि शोधकर्त्ता को अपने निरीक्षण को सदैव उपकल्पना को घ्यान में रखकर ही घटनाओं का निरीक्षण करते रहे। निरीक्षण विधि की उपर्युक्त विवेचना से इसके निम्न विशेषताओं का वर्णन किया जा सकता है।

1. **आँख का प्रयोग (Use of Eyes):** निरीक्षणकर्त्ता अपनी आँखों से जो देखता है उसे ही आँकड़ों के रूप में संकलित करता है। इस प्रकार आँखों द्वारा देखी गई चीजों की विश्वससनीयता की जाँच हो सकती है।
2. **प्राथमिक सामग्री का संकलन (Collection of Primary Data):** इस विधि के द्वारा जिस घटना के बारे में जानकारी प्राप्त की जाती है, वह निरीक्षण पर आधारित होती है।
3. **सुक्षम अध्ययन (Minute study):** निरीक्षण करने वाले शोधकर्त्ता तथ्यों का संकलन गहन एवं सुक्ष्म अध्ययन करता है, इस प्रकार वह निरीक्षण करने के लिए अपने आप को इसके लिए तैयार करता है। इस प्रकार के निरीक्षण सामान्य देखने की प्रक्रिया से बिल्कुल भिन्न होते है।
4. **कार्यकारण सम्बन्ध स्थापित करना (To Establish Cause – Effect Relationship):** निरीक्षण के आधार पर जिन तथ्यों का संकलन किया जाता है उन तथ्यों के बीच कार्यकारण सम्बन्ध स्थापित करना महत्त्वपूर्ण होता है।
5. **निष्पक्ष अध्ययन (Impartial study):** निरीक्षण के द्वारा जो तथ्य संकलित किए जाते हैं, वह निष्पक्ष तथा वैज्ञानिक होते हैं।

निरीक्षण के प्रकार (Types of Observation)

पी0वी0 यंग की यह मान्यता है की निरीक्षण कई प्रकार के होते हैं। परन्तु जो निरीक्षण के मुख्य प्रकार नियंत्रण के आधार पर बताए गए है। उनमें से निम्न को प्रमुख माना गया है:

1. **अनियंत्रित निरीक्षण (Uncontrolled Observation):** निरीक्षण विधि एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा घटनाओं का निरीक्षण नियंत्रित तथा अनियंत्रित दोनों तरीकों से किया जा सकता है। इस प्रकार के नियंत्रित तथा अनियंत्रित निरीक्षण में शोधकर्त्ता की सहभागिता (Participation) भी हो सकती हैं या अगर वह चाहे जो अपनी सहभागिता को गुप्त भी रख सकता है। सहभागिता तथा असहभागिता के आधार पर भी नियंत्रित तथा अनियंत्रित के निरीक्षण की व्याख्या की जाती है।

   जहाँ तक अनियंत्रित निरीक्षण का सम्बन्ध है, इसमें शोधकर्त्ता अपने ऊपर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखता। गुडे एण्ड हाट का भी यह मानना था कि सामाजिक सम्बन्धों के विषय में एक शोधक र्त्ता अधिकांश ज्ञान अनियंत्रित निरीक्षण के द्वारा ही प्राप्त करता है। अनियंत्रित निरीक्षण में शोधकर्त्ता वास्तजिक जीवन से सम्बन्धित परिस्थितियों की सतर्कतापूर्वक जाँच करता है। इस प्रकार के निरीक्षण में शोधकर्त्ता अपने ऊपर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं रखता अर्थात् वह घटनाओं का निरीक्षण स्वाभाविक रूप से करता है।

अनियंत्रित निरीक्षण के भी निम्न दो प्रकार हैं, जो निम्न हैं

1. **अनियंत्रित सहभागी निरीक्षण (Non-Controlled Participant Obervation)**
2. **अनियंत्रित असहभागी निरीक्षण (Non-Controlled Non-Participant Observation)**

1. **अनियंत्रित सहभागी निरीक्षण (Non-Controlled Participant Obervation):** इस प्रकार के निरीक्षण में शोधकर्त्ता निरीक्षण किए जाने वाले समुह के बारे में पुरी जानकारी प्राप्त करने के लिए उस समुह को अपना बना

लेता है और उस समुह के सदस्यों की तरह ही उनके क्रियाकलापों में भाग लेने लग जाता है। इस प्रकार शोधकर्त्ता अस्थाई रूप से उस समुह का एक सदस्य बन जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है की सहभागी अवलोकन में निरीक्षणकर्त्ता अध्ययन किए जाने वाले समुहों के साथ रहकर तथ्यों का संकलन करता है। सामाजिक मानवशास्त्र में इस प्रकार की निरीक्षण की प्रक्रिया काफी पुरानी रही है। मैलिनोवस्की ने ट्रोब्रियाण्ड द्वीप की 'अग्रोनाट जनजाति' का, रेमण्ड फर्थ ने 'टिकोपिया' जनजाति का , नेल्स एण्डरसन ने दोनों लोगों का एवं वाईट ने सड़कों पर जीवन व्यतीत करने वाले लोगों का सहभागी अवलोकर विधि से ही अध्ययन किया। इस प्रकार के निरीक्षण विधि के द्वारा सामान्यतः एक शोधकर्त्ता लोगों के सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा आर्थिक क्रियाओं एवं व्यवहारों के बाते में पुरी जानकारी प्राप्त कर लेता हैं। इस प्रकार के निरीक्षण के द्वारा जो आँकड़े संकलित किए जाते हैं, उसकी प्रकृति यद्यपि गुणात्मक होती है, परन्तु उसके निम्न गुणों का वर्णन आवश्यक प्रतीत होता हैः

(i) ***प्रत्यक्ष अध्ययन*** *(Direct Study)*: इस प्रकार के सहभागी निरीक्षण की सबसे बड़ी निशेषता यह होती है कि यहाँ निरीक्षण प्रत्यक्ष रूप से घटनाओं का अध्ययन कर आँकड़ें एकत्रित करता हैं। चुँकि वह समुह का एक सदस्य बन जाता है, इसलिए अधिक से अधिक क्रियाओं का अध्ययन स्वयं करने की स्थिति में होता है।

(ii) ***सुक्ष्म एवं गहन अध्ययन*** *(Intensive study)*: इस अध्ययन विधि के द्वारा शोधकर्त्ता समुह से सम्बन्धित छोटी से छोटी बातों का भी अध्ययन कर गहन विषय पर भी महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकता है।

(iii) ***सरल अध्ययन*** *(Easy Study)*: इस अध्ययन विधि में शोधकर्त्ता समुह का सदस्य बनकर काम करता है इसलिए उस समुह के वास्तविक व्यवहार की जानकारी प्राप्त करने की स्थिति में होता है।

(iv) ***अधिक विश्वसनीयता*** *(Greater reliability)*: इस अध्ययन विधि के द्वारा आँकड़ें प्रत्यक्ष रूप से इकट्ठे किए जाते हैं, इसलिए तथ्यों की विश्वसनीयता अधिक होती है।

(v) ***संग्रहित सूचनाओं का सत्यापन*** *(verifiability of the collected information)*: इस प्रकार की विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि इस विधि के द्वारा एक शोधकर्त्ता के तथ्यों का मूल्यांकन व परिक्षण दूसरे शोधकर्त्ताओं के द्वारा आसानी से संभव है, अर्थात् एकत्रित आँकड़ों की विश्वसनीयता की पुष्टी की जा सकती हैं।

निरीक्षण एवं अर्न्तद ष्टि (Observation and insight): इस प्रकार के विधि के द्वारा जिन आँकड़ों को शोधकर्त्ता संकलित करता है उसके आधार पर वह विषय के बारे में एक अर्न्तद ष्टि भी विकसित कर लेता है, जिसके फलस्वरूप सिद्धान्त के प्रतिपादन में उसे विशेष जानकारी प्राप्त होती है।

उपर्युक्त गुणों के बावजुद भी अनियंत्रित सहभागी निरीक्षण के कुछ सीमाएं भी है, जो निम्न हैं

1. **पूर्ण सहभागिता की कमी (Lack of full Participation):** इस विधि की सबसे बड़ी कठिनाई यह है की शोधकर्त्ता चाह कर भी पूर्ण रूप से समुह के सभी क्रियाओं का सहभागी अध्ययन नहीं कर पाता है। अतः शोधकर्त्ता को अपनी पहचान गुप्त रखना मुश्किल होता है।

2. **वस्तुनिष्ठता का अभाव (Lack of Objectivity):** जब शोधकर्त्ता समुह के साथ मिलकर सामुहिक क्रियाओं का एक सदस्य के रूप में अध्ययन करता है तब वस्तुनिष्ठता खो बैठता है। वह स्वयं भी समुह के क्रियाकलापों से इनता जुड़ जाता है कि समुह के साथ उसकी वफादारी बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में शोधकर्त्ता के लिए वस्तुनिष्ठ द ष्टिकोण अपनाना मुशिकल हो जाता है।

3. **समुह के व्यवहार में परिवर्तन (Change in Group Behaviour):** सहभागी निरीक्षण विधि के माध्यम से जब शोधकर्त्ता औंकड़े इकट्ठा करता है तो उसके समुह में भाग लेने से कई बार समुह के व्यवहार में ही परिवर्तन आ जाता है। इसके कारण समुह के वास्तविक व्यवहार का निरीक्षण करना मुशिकल हो जाता है।

4. **खर्चीली विधि (Expensive Method):** सहभागी निरीक्षण में धन तथा समय का अत्यधिक खर्च होता है। कई बार शोधकर्त्ता को किसी खास व्यवहार के निरीक्षण के लिए काफी इन्तजार करना पड़ता हैं इस प्रकार शोधकर्त्ता के समय तथा धन का अत्याधिक खर्च बढ़ जाता है।

5. **भुमिका निर्वाह में कठिनाई (Difficulty in role adjustment):** इस विधि की सबसे बड़ी खामी यह भी है कि इसमें शोधकर्त्ता को दो भुमिकाओं का निर्वाह करना पड़ता है, उसे शोधकर्त्ता के रूप में काम करते हुए समुह के साथ उनके क्रियाओं, उन्हें भी सम्मिलित होना पड़ता है। इन दोनों भुमिकाओं का निर्वाह करना आसान नहीं होता। इस प्रकार दोनो भुमिकाओं के बीच सामंजस्य रखना शोधकर्त्ता के लिए मुशिकल होता है।

2. **अनियंत्रित सहभागी निरीक्षण (Non controlled Non-Participant Observation):** अनियंत्रित असहभागी निरीक्षण में सामाजिक घटनाओं का निरीक्षण अप्रत्यक्ष रूप से उस घटना से बिना जुड़े हुए शोधकर्त्ता करता है। इस प्रकार के निरीक्षण विधि में शोधकर्त्ता अपनी पहचान गुप्त रखता है। वह समूह की गतिविधियों में भाग नहीं लेता हैं। वह एक मूक दर्शक के रूप में निष्पक्ष रहकर अध्ययन करता है। इस प्रकार के अनियंत्रित निरीक्षण में एक विधवत् अध्ययन करने के लिए शोधकर्त्ता समुह के व्यवहार तथा उसके बाहरी लक्षणों पर पैनी द ष्टि रखता है। इस प्रकार के निरीक्षण की निम्न विशेषताएँ हैं:

   (i) वस्तुनिष्ठता (Objectivity): असहभागी निरीक्षण में शोधकर्त्ता तटस्थ रहकर घटनाओं का अध्ययन करता है इसलिए वह उन घटनाओं से प्रभावित नहीं होता और न ही अपने पूर्वाग्रह को उस घटना के अध्ययन का हिस्सा बनाता है।

   (ii) विश्वसनीयता (Reliability): इस प्रकार के अध्ययन के द्वारा जो आँकड़ें एकत्रित किए जाते है,उनकी विश्वसनीयता अधिक हो जाती है क्योंकि इसमें शोधकर्त्ता उस घटना तथा समुह की क्रियाओं से खुद जुड़ा नहीं होता।

   (iii) सहयोग (Cooperation): शोधकर्त्ता को इस विधि के द्वारा शोध करने में समुह के लोगों को पूरा समर्थन मिलता है। उनके सहयोग से शोधकर्त्ता का काम आसान हो जाता है।

   (iv) कम खर्चीला (Less expensive): असहभागी निरीक्षण में शोधकर्त्ता को घटना से जुड़ा होना आवश्यक नहीं होता इसलिए यहाँ पर समय तथा धन दोनों का अपव्यय नहीं होता।

परन्तु इसके साथ-साथ जहाँ असहभागी निरीक्षण विधि की कुछ विशेषताएँ तथा फायदें हैं, वहीं इसकी कुछ सीमाए भी हैं:

1. असहभागी निरीक्षण विशुद्ध रूप में संभव नहीं है। कुछ हद तक शोधकर्त्ता को उस घटना से जुड़ना ही पड़ता है।

2. असहभागी अवलोकन में भी शोधकर्त्ता घटनाओं को अपने द ष्टिकोण से देखता है जिसके कारण उसकी मौलिकता नष्ट हो जाती है।

3. असहभागी निरीक्षण में आकस्मिक रूप से घटने वाले क्रियाओं का अध्ययन संभव नहीं हो पाता। असहभागी निरीखण में घटनाओं का सतही स्तर पर ही अध्ययन हो पाता है।

1. **नियंत्रित निरीक्षण (Controlled Observation):** पिछले कुछ दशकों में नियंत्रित निरीक्षण विधि में काफी सुधार आया है जिसके कारण सामाजिक घटनाओं से जुड़े आँकड़ों को संक्षप्ति रूप से एकत्रित किए जाने की संभावना बढ़ी हैं। पी0वी0यंग ने इस संदर्भ में कई ऐसे तकनीकि का वर्णन किया है जिसके द्वारा घटनाओं का निरीक्षण आसान हो जाता है। आवाज तथा गतिविधियों को रिकॉर्ड करने के विभिन्न तकनीकों में जो वैज्ञानिक खोज हुए हैं उससे शोधकर्त्ता स्वयं तथा घटना पर योजना बद्ध रूप से नियंत्रण रखता है। तथ्य संकलन के वैज्ञानिक साधनों का इस्तेमाल कर निरीक्षण विधि के द्वारा एकत्रित तथ्यों की विश्वसनीयता भी बढ़ जाती है। आधुनिक युग में बड़े-बड़े कारखानों तथा उद्योगों में काम करने वाले श्रमिकों तथा बालग ह में बच्चों के व्यवहार का अध्ययन करने में इस विधि का इस्तेमाल सफलतापूर्वक किया गया हैं। नियंत्रित निरीक्षण में निम्नलिखित बाते स्पष्टतौर पर की जाती हैं:

   (i) निरीक्षण किए जाने वाले इकाईयों की स्पष्ट परिभाषा दी जाती है।

   (ii) निरीक्षण से सम्बन्धित तथ्यों का चुनाव भी किया जाता है। निरीक्षण के लिए समय तथा स्थान का निर्धारण भी किया जाता है। निरीक्षण के दौरान किए जाने वाले यंत्रों का प्रयोग भी सुनिश्चित कर लिया जाता है।

इस प्रकार नियंत्रित निरीक्षण में दो प्रकार के नियंत्रण देखे जाते हैं। सबसे पहले घटनाओं को नियंत्रित किया जाता है। चुँकि घटनाओं को नियंत्रित कर उसका निरीक्षण किया जाता है इसलिए शोधकर्त्ता सामाजिक घटनाओं तथा परिस्थितियों को आधर बनाकर उसको प्रयोग करता है। इसके अतिरिक्त निरीक्षण करने वाला शोधकर्त्ता स्वयं को भी नियंत्रित करता हैं। सामाजिक परिस्थितियाँ व घटनाएँ ऐसी होती हैं जिस पर नियंत्रण करना सम्भव नहीं हो पाता इसलिए शोधकर्त्ता स्वयं पर ही नियंत्रण रखने की कोशिश करता है जिसके लिए वह साक्षात्कार अनुसूची, टेपरिकॉर्डर, डायरी, कैमरा आदी अपने पास रखता है। नियंत्रित निरीक्षण में निरीक्षण तथा उसकी व्याख्या साथ-साथ करनी पड़ती हैं। कई बार निरीक्षण के आधार पर जिन तथ्यों का संकलन किया जाता है उसके परिक्षण के लिए दो या दो से अधिक निरीक्षक एक साथ ही एक घटना क्रम से जुड़े तथ्यों को संकलित करते है। इस प्रकार से दो या दो से अधिक निरीक्षकों के तथ्यों के संकलन में एक रूपता पाई जाती है। तब यह कहा जा सकता है कि नियंत्रित निरीक्षण विश्वसनीयता है। बेल्स ने भी जिन क्रियाओं का निरीक्षण करना है उसे वर्गीकृत किया है ताकी निरीक्षक नियंत्रित निरीक्षण के द्वारा कुछ विशेष क्रियाओं पर ध्यान दे सकें। जिन क्रियाओं का निरीक्षण किया जाना है उसकी पहचान शुरू से अंत तक कर ली जाती हैं। निरीक्षण के दौरान जो रूकावटें आती है तथा चेहरे के हाव-भाव का भी सही अंदाजा पहले से ही लगा लिया जाता है ताकी निरीक्षण के बाद उन क्रियाओं के परिक्षण व व्याख्यान में कोई अंतर न आ गए।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नियंत्रित निरीक्षण के कई फायदें हैं और सीमाएँ भी हैं, वह ज्ञानेन्द्रियों की सीमाएँ, मानवीय व्यवहार की सीमाएँ तथा भावनात्मक स्तर पर व्यवहार के निरीक्षण से जुड़ी हुई हैं। इन सीमाओं को एक कुशल निरीक्षक क्षेत्रिय निरीक्षण में इस्तेमाल आने वाले तकनीकि के सहारे कम कर सकता है।

वैयक्तिक अध्ययन विधिः अर्थ, विशेषता एवं तकनीकी

(Case Study Method: Meaning, Characteristics & Technique)

जैसा की पहले स्पष्ट किया जा चुका है आँकड़ों का संकलन दो विधि से किया जाता है-

परिमाणात्मक एवं गुणात्मक, इस द ष्टिकोण से वैयक्तिक अध्ययन विधि का प्रयोग कर जिन तथ्यों का संकलन किया जाता है उसकी प्रकृति गुणात्मक होती है। इस विधि का प्रयोग प्राचीन समय से ही इतिहासकारों द्वारा किया जाता जा रहा है। वैयक्तिक विधि के द्वारा किसी भी सामाजिक इकाई तथा उसके सम्पूर्ण जीवन के चक्र का अध्ययन किया गया है। इस प्रकार के अध्ययन के पीछे प्रमुख उद्देश्य/प्राकृतिक इतिहास को समझना है जिसके द्वारा मुनष्य के विकास उस सामाजिक इकाई के विशिष्ट अध्ययन से जुड़ा हैं। इसलिए बर्गस ने इस प्रकार के विधि को एक सामाजिक 'माइक्रोस्कोप' की संज्ञा दी है।

जहाँ तक इस विधि के उत्पत्ति का प्रश्न है इस विधि के प्रतिपादन में फ्रांस के सामाजिक चिंतन ली० प्ले० ने इसे सामाजिक अध्ययन के लिए सर्वप्रथम उचित माना था। ली०प्ले० ने पारिवारिक बजट में उसके इस्तेमाल किए जाने पर भी इसका प्रयोग किया था। प्रमुख सामाजशास्त्री हर्बट स्पेंसर ने व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक रूप से इसका प्रयोग किया था। आधुनिक समय में वैयक्तिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग अधिकांश प्रयोग मनोचिकित्सक ने उपचार हेतु किया है। इस प्रकार इस विधि के द्वारा मानव व्यवहार के सुक्ष्म गहन और विस्त त तथ्यों का विवरण किया जाता है। पी0वी0 यंग ने इसकी परिभाषा देते हुए यह लिखा है कि "वैयक्ति अध्ययन किसी सामाजिक इकाई-चाहे वह एक व्यक्ति, परिवार, संस्था, सांस्कृतिक वर्ग अथवा समस्त जाति के हों जीवन के अनुसन्धान व उसकी विवेचना करने की पद्धति को कहते हैं" वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की परिभाषा देते हुए गुडे एवं हाट ने लिखा है कि यह सामाजिक तथ्यों को संगठित करने का वह तरीका है जिससे अध्ययन किए जाने वाले सामाजिक विषय के एकात्मक स्वभाव का संरक्षण हो सके। हॉवर्ड ओडम ने अपनी पुस्तक सामाजिक शोध एक परिचय में वैयक्तिक विधि को एक तकनीकि की संज्ञा दी है जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति कारक, चाहे वह संस्था हो या एक समूह का विशलेषण, उस समूह की अन्य इकाई के सम्बन्ध में किया जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि वैयक्तिक अध्ययन गुणात्मक तथ्यों को संकलन करने की एक ऐसी अध्ययन पद्धति है जिसके अंतर्गत किसी एक सामाजिक इकाई से सम्बन्धित पक्षों का व्यापक, सूक्ष्म तथा गहन अध्ययन किया जाता है।

वैयक्तिक अध्ययन कि विशेषताएँ
(Characteristics of case study)

1. **समस्या का गहन अध्ययन (Intensive Study of Problem):** इस विधि के द्वारा अध्ययन विषय का गहन अध्ययन किया जाता है। ऐसे अध्ययन में अध्ययन विषय को एक इकाई मानकर उससे सम्बन्धित सभी पक्षों, एवं घटनाओं का विस्तार से अध्ययन किया जाता हैं।

2. **सम्पूर्ण अध्ययन (Whole Study):** इस विधि के द्वारा समस्या को एक सामाजिक इकाई के रूप में सम्पूर्णता से देखा जाता है। सम्पूर्णता से अभिप्राय उस सामाजिक इकाई के समस्त जीवन से जुड़े सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक तथा राजनीजिक पहलूओं से है। इस प्रकार जैस की पी०वी० यंग ने लिखा, इस विधि के द्वारा तथ्यों को उनके सम्पूर्ण जीवन चक्र के रूप में संकलित किया जाता है।

3. **व्यक्तिगत अध्ययन (Individual Study):** इस अध्ययन में अनुसंधानकर्त्ता घटना को एक विशिष्ट इकाई के रूप में देखता है जिसके कारण वह इकाई एक परिवार, व्यक्ति या संस्था हो सकती है।

4. **गुणात्मक अध्ययन (Qualitative Study):** इस विधि में गुणात्मक तथ्यों का संकलन किया जाता है ना कि संख्यात्मक तथ्यों का, अर्थात् तथ्यों की विवेचना उसके गुणात्मक पहलू से जुड़ी होती हैं न की सख्याओं पर आधारित होती है, इसलिए इस पद्धति के द्वारा जीवन इतिहास का विवरणात्मक स्वरूप तैयार हो कर निकलता है।

वैयक्तिक अध्ययन की आधारभूत मान्यताएँ (Basic Assumption of Case Study Method): वैयक्तिक अध्ययन की कुछ मूलभूत मान्यताएँ निम्नांकित हैं

1. **मानव व्यवहार की एकरूपता (Uniformity of Human Behaviour):** इस विधि की यह मान्यता है कि मानव व्यवहार में मौलिक एकरूपता पाई जाती है। विविधताओं के बावजूद मनुष्य के व्यवहारों में मौलिक एकता पाई जाती है जिसके कारण मानवीय व्यवहार, प्रव तियाँ एक जैसा बर्ताव करती हैं।

2. **जटिलता (complexity):** इस विधि की एक और मौलिक धारणा यह है कि सामाजिक घटनाएँ जटिल होती हैं जिसके कारण मानव व्यवहार की जटिलता का अध्ययन वैयक्तिक अध्ययन विधि द्वारा करना आवश्यक हो जाता है। मानव व्यवहार के जटिल होने का एक और प्रमुख कारण उसमें होने वाले निरंतर प्रयत्नशील प्रव ति का होना है। इस द ष्टि से मानव व्यवहार के जटिल प्रक्रियाओं को समझने का वैयक्तिक विधि एक महत्त्वपूर्ण आधार बन जाता है।

3. **समय का प्रभाव (Time Factor):** मानवीय व्यवहार तथा घटना का अध्ययन समय के सीमा से भी बँधा होता है। इसलिए एक घटना का प्रभाव एक समय के साथ जोड़कर नहीं देखा जाता। उस घटना का सम्बन्ध, अतीत से जुड़ा होता है और इसलिए अतीत से जुड़ी इन घटनाओं का विस्तार से अध्ययन करने पर घटनाओं से प्रव ति का अध्ययन कार्यकारण सम्बन्ध स्थापित भी किया जा सकता हैं।

4. **परिस्थितियों की पूनराव त्ति (Repetition):** मानव व्यवहार परिस्थितियों से भी प्रभावित होता है। इसलिए वैयक्तिक विधि के द्वारा एक ही परिस्थिति के कारण निरंतर घटने वाली क्रियाओं तथा मनुष्य के बदलते व्यवहार के संदर्भ में भी किया जा सकता है।

वैयक्तिक विधि के तकनीक (Techniques of Case Study Method): वैयक्तिक विधि के तकनीक के बारे में चर्चा कर लेने से पहले यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इस विधि को समामजिक अध्ययन के विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ता है और इसके बाद ही यह तय हो पाता है कि किस तकनीकि व यंत्र का प्रयोग ज्यादा उपयोगी हो सकता है। वैयक्तिक अध्ययन के लिए जिन सामग्री या यंत्र का प्रयोग किया जाता है वह निम्न है-

1. **डायरी (Diary):** व्यक्तिगत विधि द्वारा अध्ययन के लिए डायरी को एक महत्त्वपूर्ण स्रोत के रूप में देखा जा सकता है क्योंकि इसके द्वारा दैनिक घटनाओं की पूरी जानकारी मिल जाती है। डायरी के द्वारा मनुष्य के मनाव तियों का भी पता चलता है।

2. **पत्र (Letters):** वैयक्तिक अध्ययन के लिए पत्र का अध्ययन भी एक महत्त्वपूर्ण स्रोत हो जाता है जिसके द्वारा वास्तविक घटनाओं के बारे में जानकारी मिलती है। नैनी जेंल से पंडित जवाहर लाल नेहरू द्वारा लिखे गए पत्रों के

संकलन को विश्व इतिहास की एक झलक के रूप में प्रकाशित किया गया है जिसमें पंडित नेहरू ने अपने जेल के मधुर स्म तियों के साथ-साथ राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर घटने वाले घटनाओं का भी उल्लेख किया हैं।

3. **जीवन इतिहास (Life History):** जीवन इतिहास भी वैयक्तिक अध्ययन का एक प्रमुख स्रोत होता हैं जिसमें घटनाओं का वर्णन मिलता हैं। नेहरू द्वारा लिखे गए आत्मकथा के महत्त्व को सभी इतिहासकार स्वीकार करते हैं। उसी प्रकार हरिवंश राय बच्चन द्वारा लिखी गई आत्मकथाओं को भी सभी लोग एक महत्त्वपूर्ण साहित्यकृति के रूप में देखते हैं। इन जीवन कथाओं में मनुष्य की प ष्ठभूमि, जीवनपरिचय का मार्मिक वर्णन भी मिलता है।

4. **दस्तावेज(Documents):** वैयक्तिक अध्ययन में सरकारी रिकॉर्डस तथा दस्तावेजों को भी आधार बनाकर अध्ययन किए जाते है। इन दस्तावेंजों को समाजशास्त्र में द्वैतीयक स्रोत के रूप में प्रयोग में लाया जाता हैं।

वैयक्तिक अध्ययन के गुण व दोषः

वैयक्तिक अध्ययन के निम्न महत्त्व व गुणों की चर्चा करना आवश्यक हैः-

1. उपकल्पनाओं का स्रोतः वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा उपकल्पनाओं का निर्माण आसान हो जाता है।
2. गहन अध्ययनः वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा समस्याओं का गहन अध्ययन संभव हो पाता है।
3. अनुसंधान के प्रारंभिक स्तर की खोजः इस विधि के द्वारा अनुसंधान के प्रारंभिक स्तर की खोज भी सहज रूप से हो जाती है।
4. महत्त्वपूर्ण अध्ययन यन्त्रों के निर्माण में सहायक
5. वैयक्तिक मनोव त्तियों की जानकारी
6. सामग्री की पूर्णता
7. घटनाओं की निरन्तर तस्वीर
8. तुलना एवं वर्गीकरण का आधार
9. सामान्यीकरण का आधार
10. नये अनुभवों का ज्ञान
11. जीवन के प्रभाविक कारकों का अध्ययन
12. दीर्ध प्रक्रियाओं का अध्ययन
13. विभिन्न विधियों का प्रयोग
14. मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में सहायक

वैयक्तिक अध्ययन की सीमाएँ

वैयक्तिक अध्ययन की निम्न सीमाएँ हैंः

1. केवल कुछ ही इकाइयों के आधार पर निष्कर्ष
2. अवैज्ञानिक विधि
3. पक्षपात की समस्या
4. अधिक अशुद्धता
5. अप्रमाणिक तथ्य
6. निदर्शन प्रणाली का प्रभाव

7. अत्याधिक समय तथा धन की आवश्यकता

8. दोषपूर्ण जीवन का प्रभाव

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि वैयक्तिक अध्ययन विधि यदि सामाजिक व्यवहार को समझने का एक महत्त्वपूर्ण जरिया है जिसके द्वारा मनुष्य के सूक्ष्म व्यवहारों तथा मानसिक दशाओं का परिचय मिलता है परन्तु इसके द्वारा प्राप्त तथ्यों का स्वरूप गुणात्मक होता है जिसमें काफी सुधार की आवश्यकता होती है अगर उसे सांकची स्तर पर प्रयोग में लाना हो।

अन्तर्वस्तु विशलेषणः अर्थ, चरण एवं महत्त्व
(Content Analysis: Meaning, Steps & Importance)

सामाजिक अनुसंधान में अर्न्तवस्तु विशलेषण को भी गुणात्मक तथ्यों के संकलन का एक महत्त्वपूर्ण विधि माना जाता है। इस विधि के द्वारा तथ्यों का संकलन भी एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन स्रोत बन जाता है।आज से लगभग 80 वर्ष पूर्व 1926 में मैलकोम विली में अर्न्तवस्तु विशलेषण का प्रयोग समाचार पत्रों के माध्यम से किया था। इसके बाद 1930 में बुडलैंड द्वारा इस अध्ययन का प्रयोग किया गया। 1930 तथा 1940 के दशक में हेरॉलड लेसवेल तथा अन्य राजनीति शास्त्रों के विद्वानों के जनमत के अध्ययन में अन्तर्वस्तु विशलेषण विधि का प्रयोग किया था।

अन्तर्वस्तु विशलेषण की परिभाषा देते हुए वैपिल्स तथा बैटन्सन ने इसे उपलब्ध सामग्री को व्यवस्थित कर उसकी व्यख्यात्मक गुणों के आधार पर वस्तुनिष्ठ तरीके से विशलेषण करने का एक उत्तम विधि माना है। इस विधि के द्वारा उन सभी सामग्री का विशलेषण संभव हो जाता है जो पाठकों व श्रोताओं के लिए उपलब्ध कराए जाते हैं। अर्न्तवस्तु विशलेषण में वैयक्तिक विधि की तरह सामग्री का विवरणात्मक व्याख्या नहीं होता बल्कि उपलब्ध सामग्री का वैज्ञानिक स्तर पर प्रस्तुत किया जाता है। बैरेन्सन के अनुसार अन्तर्वस्तु विशलेषण विधि संचार के अर्न्तवस्तु को वैज्ञानिक वर्णन करता है जो कि अन्तर्वित न होकर प्रकट होता है, जिसका निरीक्षण बाहे स्तर पर सम्भव है।

पी०वी० यंग ने अन्तर्वस्तु विशलेषण की परिभाषा देते हुए कहा है कि "अन्तर्वस्तु विश्लेषण साक्षात्कारों, प्रश्नावलियों, अनुसूचीओं तथा अन्य लिखित या मौखिक भाषागत अभिव्यक्तियों द्वारा प्राप्त शोध तथ्यों का अन्तर्वस्तु का क्रमबद्ध, वस्तुनिष्ठ तथा परिमाणात्मक वर्णन के लिए अपनाई जाने वाली एक शोध प्रविधि है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अन्तर्वस्तु विश्लेषण एक वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा अर्न्तवस्तु का अध्ययन कर उसका विश्लेषण किया जाता है। इस विधि के द्वारा विश्लेषण किए जाने वाले तथ्यों का निरीक्षण संभव हैं। इस विधि में गुणात्मक वर्णन का स्वरूप कम होता है अर्थात् गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक अभिव्यक्ति देकर इसकी उपयोग्यता को बढ़ाया जा सकता हैः

अर्न्तवस्तु विश्लेषण के चरण
(Steps of Content Analysis)

अर्न्तवस्तु विश्लेषण के निम्न चरण प्रमुख हैं।

1. **विषय से सम्बन्धित तथ्यों का चुनाव (Collection of Data on the subject concerned)**: इस प्रकार के विधि के द्वारा आजकल अखबारों में विवाह सम्बन्धित जो विज्ञापन दिए जाते है, उसका अध्ययन कर यह पता लगाया जा सकता है कि जातिगत मान्यताएँ आज भी कितनी महत्त्व रखती है।

2. **अध्ययन की इकाईयों को चुनना (Selecting the units of study)**: सामग्री को एकत्रित कर लेने के बाद उस सामग्री से जुड़े अन्य सम्बन्धित तथ्यों को इकाई के रूप में भी चुना जा सकता है।

3. **अन्तर्वस्तु के श्रेणियों का विभाजन (Classification of content into categories)**: इकाईयों का चुनाव कर लेने के बाद उन इकाईयों का कुछ खास श्रेणी में वर्गीकृत भी किया जा सकता है।

4. **श्रेणियों का परिक्षण (Verification of Categories)**: अन्तर्वस्तु विश्लेषण को सार्थक बनाने के लिए विभिन्न श्रेणियों का परिक्षण भी आवश्यक हो जाता है।

5. **पद्धति का सही उपयोग (Proper Utility of the Method)**: इस विधि का प्रयोग अध्ययन की रूपरेखा के अनुसार भी किया जाना आवश्यक होता है।

6. **अन्तर्वस्तु की इकाईयों का मापना (Measuring the units of contents)**: अन्तर्वस्तु की इकाईयों को सांख्यिकीय प्रणाली द्वारा मापने का काम भी किया जाता है।

7. **विश्लेषणात्मक व्याख्या (Analytical interpretation)**: अन्तर्वस्तु की इकाइयों का उचित व परिमाणात्मक माप कर लेने के पश्चात् उनका विश्लेषणात्मक व्याख्या करना होता हैं।

8. **रिपोर्ट तैयार करना (Preparing the reports)**: अन्तर्वस्तु की विश्लेषणात्मक व्याख्या कर लेने के बाद सम्पूर्ण अध्ययन के विश्लेषण में एक क्रमबद्ध रिपोर्ट तैयार की जाती है।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण का महत्त्व
(Importance of Content Analysis)

सामाजिक अनुसंधान में अन्तर्वस्तु विश्लेषण का निम्न महत्त्व हैः

1. गुणात्मक विषयों का परिमाणात्मक अध्ययन करना इस प्रविधि की सहायता से सम्भव होता है। उदाहरण के लिए उपन्यास के पात्र अथवा एक भाषण अथवा एक समाचार-पत्र का सम्पादकीय ये सब गुणात्मक विषय है।
2. संचार के विभिन्न साधनों की प्रकृति को स्पष्ट करने में अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। संचार के साधन जैसे पुस्तक, भाषण, समाचार-पत्र, रेडियो कार्यक्रम, आदि हमारे सामाजिक जीवन को प्रभावित व निर्देशन करने में महत्त्वपूर्ण हैं।
3. संचार के अन्तर्राष्ट्रीय आधारों का तुलनात्मक अध्ययन भी इस पद्धति की सहायता से सम्भव होता हैं प्रत्येक देश के संचार साधनों का अन्तर्वस्तु एक समान नहीं होते, पर उनका विस्तार अन्तर्राष्ट्रीय हो सकता है।
4. प्रचार की विधियों का जनता पर पड़ने वाले प्रभावों की प्रकृति के सम्बन्ध में अध्ययन की इस प्रविधि की सहायता से वैज्ञानिक रूप में किया जा सकता हैं।
5. जनमत को जानना भी इस प्रविधि की मदद से आज सरल हो गया है।
6. व्यक्तित्व के अध्ययन में भी यह प्रविधि सहायक सिद्ध हुई है।
7. समूह या समुदाय के मनावैज्ञानिक झुकाव का अध्ययन भी इस प्रविधि के द्वारा सम्भव होता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट है कि अन्तर्वस्तु विश्लेषण विधि के द्वारा जो आँकड़े संकलित किए जाते हैं उनका स्वरूप गुणात्मक होता है परन्तु तथ्यों के संकलन में अन्तर्वस्तु विश्लेषण के द्वारा एक शोधकर्त्ता उसे विश्लेषणात्मक व्याख्या प्रदान करने के लिए श्रेणीबद्ध कर प्रस्तुत करता है ताकी इकाइयों को सांख्यिकीय स्तर पर वर्णित किया जा सके। इस प्रकार परिमाणात्मक माप के आधार पर अन्तर्वस्तु का विश्वसनीय मूल्यांकन सम्भव हो पाता है। यद्यपि इस प्रकार के प्रस्तुतीकरण की कई सीमाएँ होती हैं परन्तु शोधकर्त्ता अपनी कुशलता से इस चुनौती का मुकाबला कर महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकता है।

साराँश

इस खण्ड में परिमाणात्मक, गुणात्मक तथा तुल्नात्मक विधि के अर्थ, प्रकृति एवं विशेषताओं का विस्तार से वर्णन किया गया हैं। सामाजिक अनुसंधान में इन तीनों विधि का अपना अलग महत्त्व है। समाजशास्त्र में जो अध्ययन किए गए हैं, उनमें इन तीनों विधि को आधार बनाकर, सिद्धान्त प्रतिपादित करने का प्रयास किया है। इस खण्ड में शोध विधि के पहले निदर्शन के महत्त्व की चर्चा उसके प्रकृति एवं प्रकार के वर्णन के द्वारा भी की गई हैं आँकड़े संकलन करने के दो विधि परिमाणात्मक तथा गुणात्मक विधि के अन्तर्गत विभिन्न विधि की चर्चा भी की गई है। परिमाणात्मक विधि के अन्तर्गत आँकड़ों के संकलन में प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार विधि के प्रकृति एवं विशेषताओं का विस्तार से उल्लेख किया है। इसके साथ ही गुणात्मक विधि के द्वारा तथ्यों के संकलन में निरीक्षण, वैयक्तिक अध्ययन तथा अन्तर्वस्तु विश्लेषण का अध्ययन भी विस्तार से किया गया है। इस खण्ड मं शोधविधि के द्वारा कैसे तथ्यों का संकलन किया जाता है उसकी पूरी जानकारी दी गई है।

अध्याय-4
स्रोत, वर्गीकरण तथा आँकड़ों का प्रस्तुतीकरण
(Sources, Classification and Presentation of Data)

सामाजिक शोध में तथ्यों के स्रोत का अपना एक अलग महत्त्व होता है। तथ्यों के बिना सामाजिक शोध की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। परंतु जब हम तथ्यों की प्रकृति के बारे में विचार करते है तो स्रोत के बारे मे विचार करना आवश्यक हो जाता है। तथ्यों का सकंलन सामाजिक शोध की एक मौलिक प्रक्रिया है इसलिए भी स्रोतों के बारे में समुचित जानकारी रखना आवश्यक है। तथ्यों को उनके स्रोतों से जोड़कर देखा जाये तो उन्हें दो वर्गो के बाँटा जा सकता हैः

1. **प्राथमिक तथ्य (Primary data)**: प्राथमिक स्रोत वे स्रोत होते हैं जिसे एक शोधकर्त्ता स्वयं वास्तविक अध्ययन क्षेत्र से व्यक्तियों के साक्षात्कार कर या फिर उनका प्रत्यक्ष निरीक्षण कर स्वयं प्राप्त करता है। इन तथ्यों को प्राथमिक स्रोत इसलिए भी कहा जाता है क्योंकि एक शोधकर्त्ता अपने अध्ययन उपकरणों की मदद से प्रथम बार स्वयं एकत्रित करता है। प्राथमिक तथ्यों को भी एकत्रित करने के दो प्रमुख स्रोत होते हैं एक तो जीवित व्यक्तियों से साक्षात्कार के द्वारा महत्त्वपूर्ण जानकरी लेकर इकट्ठी की जाती हैं और दूसरा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा।
2. **द्वितीयक तथ्य (Secondary data)**: द्वितीयक तथ्य वे आँकड़ें व तथ्य होतें हैं जिसे शोधकर्त्ता प्रकाशित प्रलेखों, रिपोर्ट, सांख्यिकी, पाण्डुलिपि, पत्र-डायरी आदि से प्राप्त करता है। द्वितीयक तथ्यों की विशेषता यह होती है कि ये तथ्य व सूचनाएं शोधकर्त्ता द्वारा स्वयं नहीं एकत्र किये जातें हैं बल्कि इसे दूसरे अनुसंधानकर्त्ता द्वारा एकत्र किया जाता है। इस प्रकार के तथ्यों को भी दो भागों में बाँटा जा सकता है
   (i) ***व्यक्तिगत प्रलेख*** *(Personal Documents)*
   (ii) ***सार्वजनिक प्रलेख*** *(Public Documents)*

व्यक्तिगत प्रलेख के उत्कृष्ट उदाहरणों में आत्मकथा, डायरी तथा पत्र आते हैं जबकि सार्वजनिक प्रलेख रिकार्ड, पुस्तकों, जनगणना रिपोर्ट, विशिष्ट कमेटियों की रिपोर्ट, समाचारपत्र व पत्रिकाओं में प्रकाशित सूचनाएं आदि का उल्लेख किया जाता है।

प्राथमिक स्रोतः अर्थ एवं विशेषता
(Primary Source: Meaning & Importance)

प्राथमिक स्रोत वे स्रोत होतें हैं जो प्राथमिक स्तर पर तथ्यों के संकलन में सहायक होते हैं। प्राथमिक स्रोत के बारे मे यह जानकारी रखना पर्याप्त है कि इसमें शोधकर्त्ता स्वयं तथ्यों का संकलन करता है। इस प्रकार के तथ्य संकलन के प्राथमिक स्रोत को भी दो भागों में विभाजित किया जाता है जिसे प्रत्यक्ष स्रोत **(Direct source)** तथा अप्रत्यक्ष स्रोत **(Indirect source)** कहा जाता हैं। प्रत्यक्ष स्रोत में शोधकर्त्ता स्वयं सीधा संपर्क स्थापित करता है जबकि अप्रत्यक्ष स्रोत में शोधकर्त्ता अध्ययन इकाईयों से सीधा संपर्क स्थापित किये बिना ही सामग्री एकत्रित करता है।

प्रत्यक्ष स्रोत के अंतर्गत तथ्यों के संकलन में निम्न विधि का प्रयोग किया जाता हैः

1. **निरीक्षण (Obervation)**: निरीक्षण तथ्य संकलन प्राथमिक स्रोत का हिस्सा होता है जिसे इस्तेमाल कर शोधकर्त्ता महत्त्वपूर्ण तथ्यों को एकत्रित करता है। इस विधि का विस्तार से वर्णन बाद में किया जाएगा। संक्षेप में इस विधि के बारे में यह स्मरण रखना आवश्यक है कि निरीक्षण के दो प्रकार नियंत्रित तथा अनियंत्रित के अंतर्गत सहभागिता निरीक्षण तथा असहभागिता निरीक्षण दोनों पहलू आते हैं।

2. **साक्षात्कार (Interview):** प्राथमिक स्रोत के द्वारा तथ्यों का संकलन साक्षात्कार विधि के द्वारा होता है। इस विधि को साक्षात्कार विधि इसलिए कहा जाता है कि इसमे शोधकर्त्ता को प्रत्यक्ष रूप से सूचनादाता के द्वारा संपर्क स्थापित कर तथ्यों को संकलित करने का मौका मिलता है। पिछले खंड में साक्षात्कार विधि के विभिन्न प्रकारों एवं उनकी उपयोगिता एवं महत्त्व का वर्णन विस्तार से किया जा चुका है।

3. **अनुसूचि (Schedule):** अनुसूची प्रश्नों की एक सूची होती है जिसे शोधकर्त्ता प्रश्न पूछकर स्वयं भरता है। यहाँ भी प्राथमिक तथ्यों के संकलन के लिए शोधकर्त्ता सूचनादाता से प्रत्यक्ष संबंध स्थापित करता है और महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करता है। यह विधि सूचना व तथ्य संकलन करने की एक प्रमुख विधि है जिसका वर्णन पिछले खंड मे विस्तार से किया जा चुका है।

4. **प्रश्नावली (Questionnaire):** प्रश्नावली द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से प्राथमिक स्तर के आँकड़ें एकत्रित किये जाते हैं। इस विधि के द्वारा रेडियो, टेलीविजन, अपील, टेलिफोन आदि भी प्रमुख हैं। प्रश्नावली का महत्त्व इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि जब क्षेत्र व्यापक, विस्त त और काफी फैला हो तथा शोधकर्त्ता के पास इतना समय न हो कि सभी जगह वह स्वयं जाने में असमर्थ हो, तब इसका प्रयोग किया जाता है।

प्राथमिक स्रोत का महत्त्व

(Inportance of Primary Source)

तथ्यों के संकलन में प्राथमिक स्रोतों का निम्न महत्त्व हैः

1. अध्ययन में लचीलापन।
2. व्यापक क्षेत्र के अध्ययन के लिए उपयुक्त।
3. अध्ययन यथार्थ एवं विश्वसनीय होते हैं।
4. आंतरिक व गुप्त सूचनाओं का संकलन भी संभव हो पाता है।
5. निष्कर्ष तक पहुँचने का यह एक प्रमाणिक स्रोत है।
6. इस प्रकार के तथ्य संकलन में धन व समय का ज्यादा अपव्यय नहीं करना पड़ता है।

प्राथमिक स्रोतों की सीमाएं

(Limitation of Primary Source)

प्राथमिक स्रोतों के द्वारा तथ्य संकलन की निम्न सीमाएं हैं जिसका ध्यान रखना आवश्यक हैः

1. पक्षपात तथा मिथ्या झुकाव की संभावना बढ़ जाती है।
2. तथ्यों का गुणात्मक स्वरूप होता है और इसलिए वस्तुनिष्ठता में भी कमी आ जाती है।
3. तथ्यों की अपनी स्वाभाविकता होती है जिसके नष्ट होने की संभावना बढ़ जाती है।
4. शोधकर्त्ता को प्रशिक्षण का अभाव होता है।
5. अतीत की धटनाओं का अध्ययन विश्वसनीय नहीं होता है।
6. अधिक मानव संसाधन एवं समय की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्राथमिक स्रोत द्वारा एकत्रित आंकड़ों का स्वरूप गुणात्मक होता है इसलिए इस विधि के द्वारा संकलित तथ्यों का कोई सांख्यिकीय रूप नहीं होता है।

द्वितीयक स्रोतः अर्थ एवं महत्व

(Secondary Source: Meaning and Importance)

सामाजिक शोध द्वितीयक स्रोत द्वारा संकलित तथ्यों का अपना एक अलग महत्त्व होता हैं। यहाँ पर जिस सामग्री का प्रयोग होता है वह दूसरों द्वारा संकलित किये गये होते हैं जिसे आधार बनाकर शोधकर्त्ता अपनी उपकल्पना तथा विषय के उद्देश्य

को ध्यान मे रखकर तथ्यों का प्रयोग करता है। द्वैतीयक स्रोत से संकलित तथ्यों को एकत्रित करने वाले शोधकर्त्ता भिन्न होते है और इसे प्रयोग करने वाले शोधकर्त्ता अलग होते हैं तथ्यों के द्वैतीयक स्रोतों को भी मुख्यतः दो भागों मे विभाजित कर देखा जाता है।

1. **व्यक्तिगत प्रलेख** (Personal Document)
2. **सार्वजनिक प्रलेख** (Public Document)

व्यक्तिगत प्रलेख के तहत वे सामग्री आते हैं जो एक व्यक्ति अपने स्वयं के बारे में या सामाजिक घटनाओं को एक विशेष द ष्टिकोण से देखकर उसे समझकर प्रस्तुत करता है। व्यक्तिगत प्रलेख के अंतर्गत कई गुणात्मक तथ्य आते हैं जो निम्न है

1. **पत्र** (Letters)
2. **डायरी** (Diary)
3. **जीवन इतिहास** (Life-History)
4. **संस्मरण** (Memories)
5. **आत्मकथा** (Autobiographies)

व्यक्तिगत प्रलेख

(Personal Documents)

व्यक्तिगत प्रलेख के इन सामग्रियों व तथ्यों की विवेचना विस्तार से पिछले खंड में की जा चुकी है जहाँ व्यैक्तिक विधि का वर्णन विस्तार से किया गया है। इन तथ्यों का स्वरूप गुणात्मक होता है जिसकी निम्न सीमाएं होती हैः

1. इन्हें प्राप्त करना कठिन होता है क्योंकि ये व्यक्तिगत प्रलेख अत्यन्त ही दुर्लभ होते हैं।
2. इनकी प्रमाणिकता पर एक प्रश्नचिन्ह लगा होता है।
3. इनको आधार बनाकर वैज्ञानिक सामान्वीकरण करना कठिन होता है।
4. इनका सांख्यिकीय विश्लेषण भी मुश्किल होता है।
5. व्यक्तिगत पक्षपात की मात्रा काफी होती है।

सार्वजनिक प्रलेख

(Public Documents)

सामग्री संकलन के द्वैतीयक स्रोत के रूप में सार्वजनिक प्रलेख का अलग महत्त्व होता है। सार्वजनिक प्रलेखों के भी दो भाग होते हैंः

प्रकाशित प्रलेख

(Published Documents)

प्रकाशित प्रलेखों में निम्न सामग्री महत्त्वपूर्ण होती हैंः

1. शोध संस्थानों के प्रतिवेदन, शोध प्रपत्र, मानवाधिकार की वार्षिक रिपोर्ट
2. व्यक्तिगत शोधकर्त्ताओं के प्रकाशन-शोध प्रपत्र, आदि
3. समीतियों व आयोगों के प्रतिवेदन
4. व्यावसायिक संस्थाओं एवं परिषदों के प्रकाशित सामग्री
5. अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के प्रकाशन-विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) यु० एन० ओ रिपोर्ट, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) अंतर्राष्ट्रीय बाल सहायता कोष (International Children Welfare Fund) आदि।
6. पत्र-पत्रिकाएं

अप्रकाशित प्रलेख

(Unpublished Documents)

कुछ सरकारी व गैर सरकारी संगठनों द्वारा एकत्रित सामग्री की गोपनीयता को बनाये रखने हेतु प्रकाशित नहीं किए जाते है जिनमे से निम्न प्रमुख हैं:

1. अभिलेखक सरकारी रिपोर्ट, आंकड़ें जो गोपनीय होती हैं
2. अनुसंधानकर्त्ताओं के प्रतिवेदन
3. पांडुलिपियां
4. अप्रकाशित लोकगीत, लोक संस्क ति, शिक्षा लेख तथा लोकगाथाएं, आदि

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्राथमिक तथा द्वैतीयक स्रोतो द्वारा एकत्रित आंकड़ों व तथ्यों का अपना अलग महत्त्व है। शोध में इनके महत्त्व को समझकर शोधकर्त्ता उसी के अनुरूप अपने अध्ययन विषय को सुनियोजित कर वैज्ञानिक विधि द्वारा अध्ययन करता है।

वर्गीकरण: अर्थ, विशेषता एवं प्रकार

(Classification: Meaning, Characteristics & Types)

सामाजिक शोध मे वर्गीकरण का अपना अलग महत्त्व होता हैं। यों तो आम दैनिक जीवन में वर्गीकरण हम रूटिन के आधार पर करते है। कहीं जाना हो? किसी को संपर्क करना हो? तो क्या हमारा जाने का साधन होगा? और किससे संपर्क स्थापित करना होगा? कैसे उससे हम संपर्क स्थापित करेंगे? संपर्क स्थापित करने के लिए किस माध्यम का प्रयोग करेंगें यहाँ तक की जानवरों का जब स्कूल के छात्रों को वर्गीकरण करने के लिए कहा जाता है तो उन्हें बताया जाता है कि जमीन पर रहने वाले जानवर कौन से हैं, पानी में पाये जाने वाले कौन से जानवर हैं तथा हवा में उड़ने वाले जानवर कौन से हैं। इस प्रकार तार्किक तथा वैज्ञानिक द ष्टिकोण तथा उसकी उपयोगिता के आधार पर हम वर्गीकरण का इस्तेमाल करते है। यह एक मानसिक क्रिया है। संरचनावादी द ष्टिकोण के समर्थक फ्रांस के चिंतक लेवी स्ट्रास का मानना था कि हम सभी नैसर्गिक रूप से परस्पर विरोधी स्वरूप की पहचान के लिए अपने जीवन में दो प्रकार के वर्गीकरण समान्य तौर पर करते है। पुरूष महिला, सही-गलत, ऊपर-नीचे, दाहिना-बाँया, काला-सफेद आदि इस प्रकार के वर्गीकरण की क्रिया स्वाभाविक है।

परंतु शोध में वर्गीकरण का अर्थ विशिष्ट हो जाता है। इसका एक खास संदर्भ में अलग महत्त्व हो जाता है। वर्गीकरण को एक क्रमबद्ध अध्ययन का आधार बनाकर घटनाओं तथा परिस्थितियों का वर्गीकरण किया जाता है। सीधे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि तथ्यों को एकत्रित कर लेने के बाद उन तथ्यों को उनकी समानता तथा विषमता के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है पी० वी० यंग का यह मानना था कि तथ्यों के क्रमबद्ध वर्गीकरण की जरूरत तथ्यों के संकलन के बाद ही शोधकर्त्ता करता है। वर्गीकरण की प्रकृति अध्ययन विषय तथा तथ्यों के संकलन एवं उसकी सही व्यवस्था से जुड़ी होती है। इस वर्गीकरण से ही अंतद ष्टि तथा शोधकर्त्ता की कुशलता का भी अंदाज लगाया जा सकता है।

वर्गीकरण की विशेषता

(Characteristiecs of Classification)

1. वर्गीकरण निश्चित तथा तथ्यों को स्पष्ट करने के लिए प्रयोग में लायी जाती है। असीमित तथ्यों को सीमित करने में इसका महत्त्वपूर्ण योगदान होता हैं।
2. वर्गीकरण की विशेषता स्थायित्व से भी जुड़ी है। जनगणना तथा आर्थिक सर्वेक्षण आदि में कई ऐसे तथ्यों को वर्गीकृत करके प्रस्तुत किया जाता है कि शोधकर्त्ता उसके आधार पर उसका विश्लेषण कर सकें।
3. परिवर्तनशीलता भी वर्गीकरण में होनी आवश्यक है। नए तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने पर नये प्रकार के वर्गीकरण की भी आवश्यकता महसूस होती है। कुछ नये तथ्य ऐसे भी होते है जिनका वर्गीकरण आसानी से नहीं हो सकता है और शोधकर्त्ता उन तथ्यों को अन्य तथ्यों के साथ मिलाकर उसे वर्गीकृत करता है तो उसका अर्थ काफी प्रासंगिक हो जाता है।

4. वर्गीकरण से समानता तथा भिन्नता का भी आभास मिलता है। कुछ खास आय के लोगों को उनके व्यवसाय के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है।

5. वर्गीकरण की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें एक सामान्वीकरण अन्तर्निहित होता है। सामान्वीकरण के आधार पर ही वर्गीकरण की बात सोची जाती है।

6. वर्गीकरण के कारण ही सांख्यिकीय स्तर पर तथ्यों का अर्थपूर्ण तरीके से विश्लेषण संभव हो पाता है।

वर्गीकरण के प्रकार

(Types of Classification)

वर्गीकरण के प्रकार की चर्चा करने से पहले वर्गीकरण के विभिन्न आधारों के बारें मे जान लेना उचित होगा। वर्गीकरण के निम्न चार मूलभूत आधार हैं:

1. भौगौलिक (Geographical)
2. समयानुसार (Chronological)
3. गुणात्मक (Qualitative)
4. संख्यात्मक (Quantitative)

1. **भौगोलिक वर्गीकरण (Geographical Classification):** जब संकलित तथ्यों को स्थान या स्थिति के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है तो उसे भौगोलिक वर्गीकरण कहते हैं जैसे:

तालिका-4.1

विश्व के विभिन्न देशों का लिंग अनुपात

देशों के नाम	लिंग अनुपात
विश्व	986
चीन	944
भारत	933
अमेरिका	1029
इंडोनेशिया	1004
ब्राजील	1025
पाकिस्तान	938
रूस	1140
बांग्लादेश	953
जापान	1041
नाइजेरिया	1061

स्रोतः वर्ल्ड पोपुलेशन प्रोसपेक्टस, 1998 संशोधित, वोल्युम-2

उपर्युक्त तालिका से स्त्री-पुरूष औसत से जुड़े तथ्यों के आधार पर विभिन्न देशों के लिंग अनुपात से महिलाओं की स्थिति का भी अनुमान कुछ हद तक लगाया जा सकता है।

2. **समयानुसार वर्गीकरण (Periodical Classification):** यह समय पर आधारित वर्गीकरण होता है। जब एकत्रित तथ्यों को समयानुसार अर्थात् महीनों, वर्ष, दस वर्ष के अंतराल में प्रस्तुत कर वर्गीकृत करते हैं तो इससे भी हमें महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है। निम्न तालिका द्वारा इसका अंदाजा लगाया जा सकता है:

तालिका-4.2

हरियाणा के नगरीकरण का रूझान, 1901-2001

जनगणना वर्ष	कुल शहरी आबादी	प्रतिशत
1901	574,074	12.42
1911	449,704	10.77
1921	481,195	11.31
1931	564,743	12.38
1941	705,9145	13.39
1951	968,494	17.07
1961	1,307,680	17.23
1971	1,772,959	17.67
1981	2,827,387	21.88
1991	4,054,744	24.63
2001	6,114,139	29.00

स्रोत: भारत की जनगणना, 2001, सीरिज-7, हरियाणा

3. **गुणात्मक वर्गीकरण (Qualitative Classification):** गुणात्मक वर्गीकरण के भी दो उपप्रकार हैं:

(i) ***सरल वर्गीकरण*** *(Simple Classification):* इस प्रकार के वर्गीकरण में गुणों को आधार बनाया जाता है, जैसे विवाहित-अविवाहित, शिक्षित-अशिक्षित, स्त्री-पुरुष आदि।

(ii) ***बहुगुणी वर्गीकरण*** *(Manifold Classification):* इस प्रकार के वर्गीकरण में शिक्षित-अशिक्षित श्रेणी को फिर और भी उसके उपप्रकारों में विभाजित या श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसे भी निम्न चार्ट के द्वारा दर्शाया जा सकता है:

चार्ट-4.1

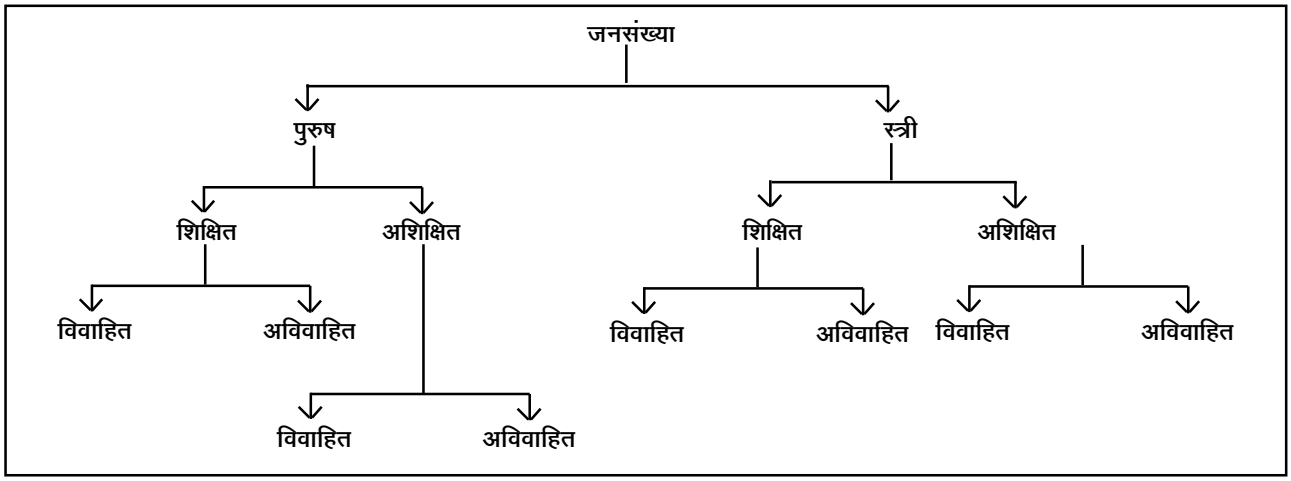

4. **संख्यात्मक व परिमाणात्मक वर्गीकरण (Quantitative Classification):** संख्यात्मक वर्गीकरण में सामान्यतः वर्ग अन्तरालों (class intervals) के अनुसार किया जाता है। उदाहरणार्थ एक क्लास में विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों को निम्न तरीके से प्रस्तुत किया जा सकता है:

तालिका-4.3

अंक	विद्यार्थियों की संख्या
0-20	8
20-40	12
40-60	25
60-80	15
80-100	10
	कुल 70

संख्यात्मक वर्गीकरण के निम्न दो प्रकार हैं:

(i) ***खंडित श्रेणी के अनुसार वर्गीकरण*** *(Classification According to discrete series):* कुछ तथ्य ऐसे होते हैं जो पूरे-पूरे अंक या संख्या में प्रकट किये जाते हैं जैसे बच्चों या परिवारों की संख्या। बच्चों की संख्या 1, 2, 3, 4 आदि पूर्ण अंक हैं और उसी प्रकार परिवार के सदस्यों की संख्या 2, 3, 4, 5 में अंकित होती है। इस प्रकार के अंकों को खंडित श्रेणी (discrete series) कहा जाता है। उदाहरणार्थ निम्न तालिका-4.4 से यह स्पष्ट हो जाता है:

तालिका-4.4

खण्डित आव त्ति विवरण

बच्चों की संख्या	परिवारों की संख्या
0	10
1	40
2	80
3	100
4	250
5	150
6	50
	कुल 680

(ii) ***अखंडित श्रेणियों के अनुसार वर्गीकरण*** *(Classification according to continuous series of class intervals):* जब एकत्रित किये गये तथ्यों की संख्या बहुत अधिक हो और सबसे बड़े व सबसे छोटे पद में अंतर भी बहुत अधिक हो तो ऐसी स्थिति में तथ्यों को एक-एक समूह के रूप में प्रकट किया जाता है। उदाहरणार्थ अगर आय 100 रुपये से 1000 के बीच हो तो इनके बीच कुछ आय समूह बनाये जा सकते हैं और इसके अनुसार व्यक्तियों को उस आय समूह के साथ रखा जा सकता है।

तालिका-4.5

आय समूह	परिवारों की संख्या
100-199	10
200-299	15
300-399	40
400-499	45
500-599	20
600-699	4
700-799	2
800-899	2
900-999	2
	कुल 140

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि वर्गीकरण तथ्यों के प्रस्तुतीकरण की एक ऐसी विधि है, जिसमें तथ्यों को उनकी समानताओं तथा भिन्नताओं के आधार पर व्यवस्थित किया जाता है।

संकेतनः अर्थ एवं विधि
(Codification: Meaning & Procedure)

जहाँ तक संकेतन का प्रश्न है, सामाजिक शोध में तथ्यों को एक समूह में व्यवस्थित करने के लिए इसका इस्तेमाल किया जाता है। तथ्यों को या प्रश्नावली में विभिन्न तथ्यों को एक संकेत दिया जाता है। इन संकेत को जिस श्रेणी या क्रम में ये तथ्य आते हैं उसके अनुसार इसका प्रयोग किया जाता है। इन संकेतों को हम गिन कर यह पता लगा सकते हैं कि एक श्रेणी समूह में इस प्रकार के कितने संकेत दिये जाते हैं और उसके आधार पर भी तथ्यों का वर्गीकरण किया जाता है। पी० वी० यंग ने संकेतन को विभिन्न श्रेणी से जोड़कर देखा है। उनका कहना था कि किसी भी तथ्य के प्रस्तुतीकरण में इसका महत्त्व होता है, इसमें तथ्यों को एक संकेतन दिया जाता है, जो प्रायः सांख्यिकी संकेतन (Numerical Index) होता है, जिसे पूर्वनिर्धारित तथ्यों के संकलित समूह में श्रेणीबद्ध किया जाता है। जब श्रेणी के बारे में पता चल जाता है तो उस प्रकार के तथ्यों को संकेतन के रूप में प्रश्नावली में ही प्रिंट किया जा सकता है। इस प्रकार शोधकर्त्ता या साक्षात्कारकर्त्ता सूचनादाता के उत्तर को उस संकेतन से रेखांकित कर चुन सकता है।

संकेतन से पहले की प्रक्रिया तथ्यों के प्रस्तुतीकरण के पहले उसके संपादन की होती है। संपादन के लिए यह आवश्यक है कि तथ्यों को प्रश्नावली के माध्यम से संकलित किया गया है उसे निम्न तीन आधारों पर पूर्णतः तसल्ली कर लिया जायेः

1. **पूर्णता (Completeness):** सबसे पहले यह आश्वस्त हो लेना जरूरी होता है कि सभी प्रश्नों के उत्तर दिये गये हैं या नह । तीन कारणों से प्रश्नों के उत्तर नह लिखे हो सकते हैंः
   (i) उत्तरदाता उत्तर देने से मना कर दे।
   (ii) शोधकर्त्ता प्रश्न का उत्तर पूछने से रह जाये।
   (iii) वह प्रश्न उत्तरदाता के लिए अर्थपूर्ण नह था।
2. **निश्चितता (Accuracy):** पूर्णता के बाद इसकी संपादन की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण चरण तथ्यों के निश्चितता से है। दिये गये प्रश्नों के उत्तर में कोई भी अनियमितता हो तो उसे भी दूर करना आवश्यक हो जाता है। यह आश्वस्त होना आवश्यक है कि उत्तरदाता के सही उत्तर सही खाने में प्रविष्ट किये गये हों।
3. **एकरूपता (Uniformity):** प्रश्नों को सभी उत्तरदाता से पूछा जाना चाहिए ताकि बाद में ऐसी कोई आशंका दिमाग में न रहे कि सभी से वे प्रश्न पूछे गये हैं या नह ।

मोजर तथा काल्टन का कहना था कि संपादन के उपर्युक्त मौलिक बातों पर आश्वस्त हो जाने के बाद संकेतन की अवस्था आती है जिसमें निम्न दो अवस्थाएं महत्त्वपूर्ण हैः

1. सर्वप्रथम यह तय कर लेना जरूरी है कि किस प्रकार के श्रेणी (Categories) का इस्तेमाल करना है और फिर
2. उसके बाद उन्हें वैयक्तिक संकेतन के द्वारा संबोधित करना।

गुडे तथा हाट ने संकेतन की दो महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन किया है जो निम्न हैंः

सरल संकेतन विधि

(Simple Coding Procedure)

अक्सर यह महसूस किया जाता है कि संकेतन की जरूरत व हत स्तर पर सर्वेक्षण के लिए होती है, परन्तु यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि लघु स्तर पर भी शोध के लिए संकेतन का प्रयोग काफी लाभदायक होता है। संकेतन के बारे में निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक हैंः

1. **कब संकेतन करना चाहिए (When to code):** संकेतन से तथ्यों को श्रेणीबद्ध किया जाता है और सभी तथ्यों के पहलु को एक संकेत चिन्ह दिया जाता है, जिस श्रेणी में वे आते हैं। कैसे संकेतन के द्वारा वर्गीकरण किया जाना है, यह सब निर्भर करता है पूछे गये प्रश्नों के उत्तर तथा अध्ययन के उद्देश्य पर। कब संकेतन करना उपयोगी होता है, वह निम्न तीन बातों पर निर्भर करता हैः
   (i) अध्ययन में प्रयुक्त स्त्रोतों के उपर;
   (ii) पूछे गये प्रश्नों की संख्या के उपर;
   (iii) अध्ययन में सांख्यिकी नियोजन के उपर।
2. **किस अवस्था पर संकेतन करना चाहिए (At What stage to code):** इस प्रश्न के उत्तर में यही कहा जा सकता है कि अध्ययन की किसी भी अवस्था में यह उपयोगी हो सकता है, परंतु सारणीयन से पहले इसका प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। प्रश्न पूछते समय भी प्रश्नों के उत्तर को संकेतन की जरूरत पड़ती है। उदाहरणार्थः क्या आप स्वतंत्रता सेनानी हैः हाँ/नह

   उत्तर लिखते वक्त भी इसका इस्तेमाल हो सकता है। संकेतन के लिए पंचकार्ड का प्रयोग भी उपयोगी सिद्ध होता है। आइ० वी० एम० मशीन के द्वारा हालेरिथ कार्ड का प्रयोग किया जाता है। मौकबी किसोर्ट पंच कार्ड का इस्तेमाल कम खर्चीला बताया जाता है। मैकबी कार्ड में इसके किनारों पर संख्या पंक्तिबद्ध होती हैं जिन पर संकेतन, तथ्यों की श्रेणी के अनुरूप दिये गये होते हैं। इस प्रकार इस कार्ड को उन तथ्यों के अनुरूप ही संकेत के मेल में डालकर छेद करना होता है। अगर तीन विकल्प दिये गये हों जिसमें (i) मंजूर, (ii) मालुम नहीं, (iii) नामंजूर - ये तीन विकल्प हों तो नंबर 1 के साथ ही संकेत (1) को मिलाकर कार्ड में छेद कर दिये जाते हैं और फिर उन्हें सांख्यिकी विधि द्वारा जैसे भी इस्तेमाल करना हो, उनका इस्तेमाल कर लिया जाता है। इस प्रकार के कार्ड के प्रयोग के कई फायदे हैं, क्योंकि इनके द्वारा ही काफी जानकारी प्राप्त की जाती हैं।

गुणात्मक संकेतन

(Qualitative Coding)

इस प्रकार के संकेतन में ध्यान देने योग्य बात यह है कि संकेतन भी एक प्रकार से तथ्यों का वर्गीकरण है। जब तथ्यों को अध्ययन विषय के अनुरूप चुन लिया जाता है, तब समस्या सिर्फ यांत्रिकी रह जाती है, परंतु जब तथ्यों को सरंचित नह किया गया हो, तब समस्या निश्चय ही जटिल हो जाती है। निम्न विधि को क्रमबद्ध तरीके से गुणात्मक संकेतन में प्रयोग में लाया जाता हैः

1. तथ्यों से क्या निष्कर्ष निकालना है- इस उद्देश्य का स्पष्टीकरण आवश्यक है।
2. जिन अनुसूची को पूर्ण रूप से भरा गया है, उसका विधिवत या ध्यानपूर्वक अध्ययन किया जाना आवश्यक है।
3. उन श्रेणी का तथा उन श्रेणी से जुड़े संकेतन का अध्ययन भी ध्यानपूर्वक किया गया हो।

4. उन श्रेणियों का प्रयोग जिनके अनुसार तथ्यों को लगाना है, उसे इसके अनुरूप रखना आवश्यक है। अर्थात् कुछ तथ्य ऐसे होते हैं जिसे कह भी उपयुक्त तरीके से श्रेणी के अनुरूप नह लगाया जा सकता तब इस प्रकार के तथ्यों को उनकी उपयोगिता के अनुसार छोड़ने का निर्णय भी लिया जा सकता है।

5. सभी उत्तरों को संकेतन द्वारा पर्याप्त मात्रा में चिन्हित कर लिया जाता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्गीकरण के तरह ही सामाजिक शोध में संकेतन का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है जिसके द्वारा संकलित तथ्यों को व्यवस्थित तथा एक तार्किक द ष्टिकोण से श्रेणीबद्ध कर उसका प्रयोग किया जाता है।

सारणीयनः अर्थ, उद्देश्य एवं प्रकार
(Tabulation: Meaning, Aims & Types)

सामाजिक शोध में अध्ययन विषय से संबंधित तथ्यों के संकलन के बाद उन संकलित तथ्यों को सारणियों तथा तालिका के रूप में प्रकट भी किया जाता है। सारणीयन के द्वारा संकलित तथ्यों को व्यवस्थित, बोधगम्य तथा स्पष्ट किया जाता है। इसलिए जहोदा तथा अन्य ने सारणीयन की व्याख्या करते हुए लिखा है कि जिस प्रकार संकेतन (coding) को तथ्यों को श्रेणीबद्ध करने की प्रविधि माना जाता है, उसी प्रकार सारणीयन को सांख्यिकीय तथ्यों के विश्लेषण की प्राविधिक प्रक्रिया का एक अंग माना जा सकता है। मोजर तथा काल्टन ने सारणीयन विधि की संक्षिप्त व्याख्या प्रस्तुत करते हुए लिखा था कि अधिकांश सर्वेक्षण में तथ्यों को संपादित करने तथा संकेतन के पश्चात् उन्हें एक सारिणी का रूप दिया जाता है और उस सारिणी को सांख्यिकी विश्लेषण के कई और भी रूप दिये जा सकते हैं। मुख्य रूप से सारिणीयन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें तथ्यों को श्रेणीबद्ध कर उसकी गिनती की जाती है। इसमें मुख्य रूप से यह देखा जाता है कि एक प्रश्न 'A' के लिए कितने लोगों ने 'X' उत्तर पर निशान लगाया है और कितनों ने 'Y' पर निशान लगाया है। यह एक सरल प्रक्रिया है, जिसे शोधकर्त्ता अगर तथ्यों की संख्या सीमित हो तो अपने हाथों से ही कर सकता है। इसलिए मोजर तथा काल्टन का मानना था कि यह एक सरल प्रक्रिया है, जिसके लिए किसी विशेष तकनीकी ज्ञान तथा कम्प्युटर युक्त ज्ञान की आवश्यकता नह है। अगर किसी व्यक्ति को सारिणी बनाकर यह देखना हो कि पेशे के आधार पर लोगों की क्या आय है, तो एक कारक तत्त्व को समानान्तर (Horizontal) रखना होगा तथा दूसरे तत्त्व को लंबवत (Vertical) रूप में लिखकर एक साधारण सी सारिणी बनायी जा सकती है, उदाहरणार्थः

तालिका-4.6

उत्तरदाताओं के पेशे

आय	शिक्षक	डाक्टर	वकील	इंजीनियर	उद्योगपति
1501-2000	𝍸 6				
2001-2500				𝍸 5	
2501-3000		𝍸 5	III 3		
3001-3500					𝍸 6
3501-4000					
योग	6	5	3	5	𝍸6

इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि तथ्यों को पंक्तियों (Rows) तथा स्तंभों (Columns) में व्यवस्थित रूप से क्रमबद्ध करने की प्रक्रिया को ही सारणीयन कहा जाता है। पंक्तियों को सम-स्तर (Horizontal) तथा स्तम्भों को लंबवत (Vertical) रखा जाता है। इसलिए एलहांस ने सारणीय की परिभाषा देते हुए लिखा है, विस्त त अर्थ में, सारणीयन तथ्यों की स्तम्भों तथा पंक्तियों मे व्यवस्थित व्यवस्था है। उनके अनुसार यह एक ओर तथ्यों के संकलन और दूसरी ओर तथ्यों के अन्तिम विश्लेषण के बीच की एक प्रक्रिया है। सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब कुछ स्तम्भो तथा पंक्तियों को व्यवस्थित ढंग से सजा दिया जाता है, तो तुलनात्मक महत्त्व इसका बढ़ जाता है और निष्कर्ष निकालना आसान हो जाता है।

सारणीयन के उद्देश्य

(Aims of Tabulation)

सारणीयन के निम्न उद्देश्य हैं:

1. जटिल तथ्यों को सरल बनाकर प्रस्तुत करना।
2. तथ्यों का तुलनात्मक विश्लेषण आसान हो जाता है।
3. तथ्यों के आधार पर सारणीयन के द्वारा सांख्यिकीय विश्लेषण आसान हो जाता है।
4. तथ्यों का प्रस्तुतीकरण आकर्षक हो जाता है।
5. तथ्यों की पहचान आसान हो जाती है।
6. स्थान की बचत होती है।
7. तथ्यों की वैज्ञानिकता बढ़ती है।

उपर्युक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखकर एक अच्छे सारणीयन को बनाने के लिए कुछ निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है:

1. सारणी का एक आकर्षक शीर्षक दिया जाना चाहिए।
2. सारणी का आकार तथ्यों तथा कागज के आकार के अनुरूप होना चाहिए।
3. सारणी में पंक्तियों तथा स्तम्भों को व्यवस्थित रूप से क्रमबद्ध करना चाहिए।
4. माप की इकाई को परिभाषित करना आवश्यक होता है।
5. कुछ तथ्यों को विशेष महत्त्व सारिणी में देना हो तो उसे कोष्ठ में रखना चाहिए।
6. प्रतिशत तथा अनुपात में तथ्यों को देने से उसकी विश्लेषणात्मक व्याख्या बढ़ जाती है।
7. योग तथा अंतर्योग को जहाँ आवश्यक हो देना चाहिए।
8. सारणी का स्रोत भी अवश्य देना चाहिए।

सारणियों के प्रकार

(Types of Tabulation)

सारणियों का वर्गीकरण आधारों, उद्देश्यों एवं प्रकृति के आधार पर किया जाता है। निम्न चार्ट के अनुसार सारणियों के प्रकार को समझा जा सकता है:

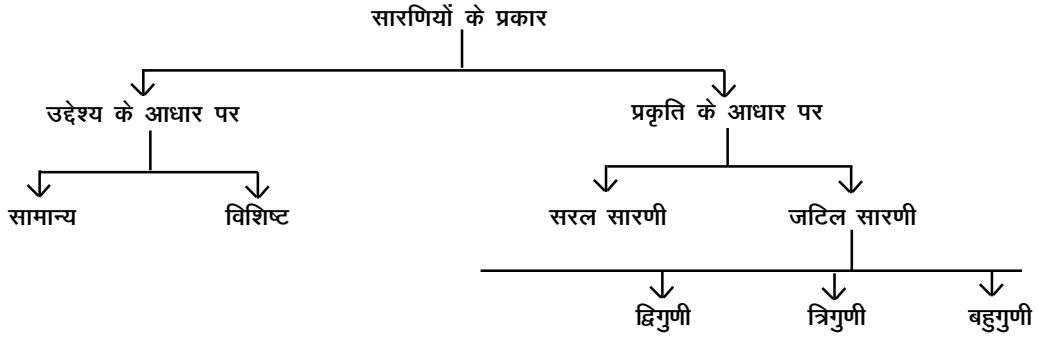

उद्देश्य के आधार पर सारणियों को दो भागों में बाँटा जाता है:

1. **सामान्य व सरल सारणी (Simple Table):** इस प्रकार की सारणी को मूल सारणी कहा जाता है, जिसमें तथ्यों के कुछ सामान्य इकाई को आधार बनाकर संकलित आंकड़ें से सारणी बनायी जाती है। उदाहरणार्थ निम्न सारणी में प्रत्येक वर्ष खाद्यान में कितनी बढ़ोतरी हुई है, उसका अंदाज मिलता है:

तालिका-4.7

देश में कुल खाद्यान उत्पादन, 1995-2002

वर्ष	खाद्यान उत्पादन (मिलियन टन में)
1995	180.4
1996	199.4
1997	192.3
1998	203.6
1999	209.8
2000	195.9
2001	212.0
2002	183.0

स्रोत : फ्रंटलाईन, मई 2003, प ष्ठ संख्या-100

2. **विशिष्ट सारणी (Specific Tables):** विशिष्ट सारणी में किसी एक समस्या को आधार बनाकर तथ्यों को संकलित किया जाता है और फिर संकलित तथ्य को सारणी के माध्यम से दर्शाया जाता है। उदाहरणार्थ सारणी 4.8 में यह दर्शाया गया है कि जिस वर्षा की भविष्यवाणी की गयी थी वहाँ वर्षा कितनी हुई:

तालिका-4.8

देश में मानसून की स्थिति

वर्ष	भविष्यवाणी	वर्षा जो रिकार्ड की गयी
1996	96	103
1997	92	102
1998	99	105
1999	108	96
2000	99	92
2001	98	92
2002	101	81

स्रोत : फ्रंटलाईन, मई 2003ए प0 सं0 100

प्रकृति के आधार पर

(On the Basis of the Nature)

1. **सरल सारणी (Simple Table):** इस प्रकार की सारणियों में केवल एक प्रकार के तथ्यों को आधार बनाकर उनके गुणों को दर्शाया जाता है:

तालिका-4.9

2001 के अनुसार भारत की जनसंख्या

देश/राज्यों के नाम	कुल आबादी
भारत	1,027,015,247
हरियाणा	21,082,989
पंजाब	24,289,296
हिमाचल प्रदेश	6,077,248
दिल्ली	13,782,976

स्रोत : भारत की जनगणना 2001, श्रंखला-7, हरियाणा, प 0 सं0 XIV

2. **जटिल सारणी (Complex Table):** इस प्रकार की सारणी को जटिल सारणी इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इसमें विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को एक साथ ही दिखाया जाता है। इस प्रकार की सारणी में विभिन्न तथ्यों को एक साथ ही प्रस्तुत किया जाता है, जिसके कई अन्य प्रकार हैं जो निम्न हैं:

(i) ***द्विगुणी सारणी*** *(Bivariate Table):* इस प्रकार की सारणी में दो गुणों का प्रदर्शन एवं तुलना एक साथ ही किया जाता है। उदाहरण के लिए निम्न सारणी 4.10 में ये दो गुणों के आधार पर पुरुष तथा महिला के शिक्षा प्रतिशत कुछ चुने हुए राज्यों के संदर्भ में दी गई है:

तालिका-4.10

भारत के विभिन्न राज्यों में पुरुष-महिला का शिक्षा स्तर

देश/राज्यों के नाम	पु०	स्त्री
भारत	75.85	54.16
दिल्ली	87.37	75.00
हिमाचल प्रदेश	86.02	68.08
पंजाब	75.63	63.55
चंडीगढ़	85.65	76.65
राजस्थान	76.46	44.34
हरियाणा	79.25	56.31

(ii) ***त्रीगुणी सारणी*** *(Trivariate Table):* इस प्रकार की सारणी में तीन तथ्यों को इकाई मानकर उनका तुलनात्मक प्रस्तुतीकरण होता है। उदाहरण के लिए निम्न सारणी 4.11 को लिया जा सकता है, जिसमें तीन तथ्यों की तुलना की गयी है:

तालिका-4.11

आय के अनुसार परिवार का आकार

आय	छोटा	मध्यम	बड़ा
उच्च	5	25	60
मध्यम	25	65	20
निम्न	35	55	10

(iii) ***बहुगुणी सारणी*** *(Multivariate Table):* इस प्रकार की सारणी में तीन गुणों या उससे अधिक गुणों वाले संकलित तथ्यों को सारणी के द्वारा प्रकट किया जाता है। उदाहरण के लिए सारणी 4.12 में आय के साथ ही तीन प्रकार के ग्रामीण तथा शहरी परिवार के आकार को दर्शाया गया है:

तालिका-4.12

शहरी तथा ग्रामीण परिवार के आकार और उनकी आय

	शहरी व हत परिवार			शहरी मध्यम परिवार			शहरी छोटा परिवार		
आय	**छोटा**	**मध्यम**	**बड़ा**	**छोटा**	**मध्यम**	**बड़ा**	**छोटा**	**मध्यम**	**बड़ा**
उच्च	5	35	60	5	70	25	10	60	30
मध्यम	25	65	20	10	65	25	40	55	5
निम्न	35	55	10	35	55	10	75	25	0

	ग्रामीण व हत परिवार			ग्रामीण मध्यम परिवार			ग्रामीण छोटा परिवार		
आय	**छोटा**	**मध्यम**	**बड़ा**	**छोटा**	**मध्यम**	**बड़ा**	**छोटा**	**मध्यम**	**बड़ा**
उच्च	-	-	-	-	-	-	-	-	-
मध्यम	-	-	-	-	-	-	-	-	-
निम्न	-	-	-	-	-	-	-	-	-

उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध में सारणीयन का महत्त्व तथ्यों के प्रस्तुतीकरण में काफी महत्त्व रखता है। इसके आधार पर जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं, उसकी विश्वसनीयता विश्लेषण के लिए काफी महत्त्व रखती है। संकलित तथ्यों को सारणीयन के द्वारा अध्ययन के वैज्ञानिक विश्लेषण में काफी मदद मिलती है।

तथ्यों का चित्रमय बिन्दु रेखीय प्रदर्शन
(Graphic Presentation of Data)

सामाजिक अनुसंधान में तथ्यों के वर्गीकरण (classification), संकेतन (codification) तथा सारणीयन (tabulation) के पश्चात् तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्या किया जाता है। अगर इन तथ्यों को यों ही वर्गीकृत तथा सारणी के माध्यम से इसका वर्णन किया जाय तो तथ्यों का प्रस्तुतीकरण नीरस तथा अरूचिकर लगेगा। इसलिए इन तथ्यों को ग्राफ तथा चित्रमय प्रदर्शन के द्वारा आकर्षक, रूचीकर एवं प्रभावशाली बनाया जाता है। ग्राफ तथा चित्रों के प्रदर्शन के माध्यम से तथ्यों का प्रस्तुतीकरण न केवल सरल, आसान व बोधगम्य होता है, बल्कि आज कंप्युटर ने इन ग्राफ तथा चित्रों को बनाना इतना आसान कर दिया है कि आज स्कूली छात्र भी अपने प्रोजेक्ट कार्य में इसका इस्तेमाल छोटे से छोटे तथ्यों के प्रस्तुतीकरण में करते हैं। बाजार में बिकने वाली चीजों को उनकी बिक्री के आधार पर, उत्पादन करने वाले उत्पादित माल तथा अखबारों में चुनावी आंकड़ों के विश्लेषण, आर्थिक सर्वेक्षण की सरकारी रिपोर्ट तथा जनगणना रिपोर्ट में इसका प्रयोग इतना सामान्य हो गया है कि अब आम शहरी, शिक्षित जनता इन तथ्यों के चित्रमय प्रदर्शन के द्वारा ही उन चीजों के प्रति आकर्षित होती है, वरन् उस उत्पादित चीजों में दिलचस्पी ही नह होती है। इन चित्रों को विभिन्न रंग के मिश्रण के द्वारा अलग-अलग श्रेणी में बाँटकर ग्राफ तथा चार्ट के द्वारा प्रकट किया जाता है तो निश्चय ही इनके प्रति साधारण व्यक्ति का भी आकर्षण बढ़ता जाता है।

इसलिए पी० वी० यंग ने लिखा है कि कोई भी व्यक्ति जो सामाजिक शोध में दिलचस्पी रखता है, उसके लिए ग्राफ को बनाने की विधि तथा चार्ट बनाने के तरीके को जानना अनिवार्य हो जाता है। सामाजिक शोधकर्त्ता के लिए न केवल चार्ट का निर्माण आवश्यक होता है बल्कि उसे चार्ट का आयोजन, उसका प्रयोग और दूसरे लोगों द्वारा बनाये गये चार्ट की व्याख्या करने की क्षमता भी होनी चाहिए। अगर ग्राफ तथा चार्ट सही तरीके से बनाये गये हों तो तथ्यों को संक्षिप्त तरीके से प्रकट करना तथा अन्य तथ्यों के साथ उसके संबंध को समझना भी आसान हो जाता है। चित्रमय प्रदर्शन की निम्न विशेषताओं पर ध्यान देना आवश्यक प्रतीत होता हैः

1. चित्रमय प्रदर्शन आंकड़ों को सरल (simple) बनाता है और यह सभी को बोधगम्य होता है।
2. तथ्यों की तुलनात्मक प्रकृति (comparative nature) को भी समझना आसान हो जाता है।

3. चित्रमय प्रदर्शन से अध्ययन के निष्कर्षों को दर्शाना भी आसान हो जाता है।
4. चित्रमय प्रदर्शन का प्रभाव अधिक समय तक रहता है।
5. चित्रमय अभिव्यक्ति द्वारा तथ्यों के आधार पर किसी समस्या का घटना या बढ़ना आसानी से समझ में आ जाता है।

चित्रमय (बिन्दु रेखीय) प्रदर्शन का महत्त्व एवं उपयोगिता

(Importance & Utility of Graphical Presentation of Data)

चित्रमय प्रदर्शन के महत्त्व एवं उपयोगिता निम्न हैं:

1. **तथ्यों का स्पष्टीकरण (Classification of Data):** तथ्यों को स्पष्ट कर उसे प्रस्तुत करना इसका एक प्रमुख उद्देश्य होता है।
2. **तथ्यों को जटिल होने से बचाना (To make data less complicated):** तथ्यों को जटिल होने से बचाकर उसे सरल करना होता है।
3. **तथ्यों के जमाव को सुनिश्चित करना (To avoid facts being crowded):** तथ्यों के जमाव को अधिक होने से बचाना तथा उसे पर्याप्त मात्रा में सीमित करना होता है।
4. **तथ्यों का प्रस्तुतीकरण समस्या के अनुरूप रखना (Appropriate to the Problem):** तथ्यों का प्रस्तुतीकरण समस्या के अनुरूप रखकर उसे किसी उलझन (confusion) से बचाना।
5. निसंदेह चित्रमय प्रदर्शन को शोधकर्त्ता अपने विषय के अनुसार चुनता है और उसे ही यह तय करना होता है कि कौन-सा चित्र व ग्राफ उसके तथ्यों के लिए कितना उपयुक्त होगा।
6. तात्कालिक दशाओं की जानकारी (knowledge of immediate Affairs) भी होती है।
7. शोध तथा प्रचार में उपयोगी (Helpful in Research & Propaganda) होती है।
8. **पूर्वानुमान में सहायक (Helpful in Prediction):** यह पूर्वानुमान में भी काफी सहायक होता है।

शोधकर्त्ता तथ्यों के संकलन के बाद उसका चित्रमय (Diagramatic) प्रदर्शन तथा बिन्दुरेखीय (graphic) प्रदर्शन करता है और इसके लिए विषयों के अनुरूप वह इसका चयन करता है। जहाँ तक बिंदुरेखीय प्रदर्शन का प्रश्न है, यहाँ पर विभिन्न ज्यमीतीय आकारों के द्वारा इसे प्रकट किया जाता है। पी० वी० यंग की पुस्तक में काल्वीन एफ श्मीड ने तीन मुख्य ज्योमीतिय स्वरूप के उपयोगिता की चर्चा करते हुए बिंदुरेखीय चित्र का विस्तार से वर्णन किया है जो निम्न हैं:

1. एक आयतनात्मक बिन्दुरेखीय चित्र (Linear or One Dimensional)
2. दो आयतनात्मक बिन्दुरेखीय चित्र (Aereal or Two Dimensional)
3. तीन आयतनात्मक बिन्दुरेखीय चित्र (Cubical or Three Dimensional)

उपर्युक्त बिन्दु रेखीय चित्र कि एक और विशेषता यह है कि यहाँ पर विभिन्न चित्रमय आकृतियों के द्वारा तथ्यों को प्रदर्शित कर उन्हें रोचक तरीके से प्रस्तुत किया जाता है। शोध में सरल छड चित्र (Bar diagram) तथा चित्रलेख (Pictograms), मानचित्र (Maps), आयत चित्र (Histogram), आव त्ति बहुभुज (Frequency Polygon), आव त्ति चक्र (Frequency Curve), व त्ताकार या पाई चित्र (Circular or Pie Chart), घनाकार चित्र (Cubes), आयताकार चित्र (Rectangular Diagram), वर्गाकार चित्र (Square Diagram) आदि का प्रयोग आमतौर पर संकलित तथ्यों के प्रदर्शन के लिए किया जाता है। यहाँ पर जिन चित्रमय/बिन्दुरेखीय प्रदर्शन का विस्तार से वर्णन किया जायेगा वे निम्न हैं:

1. आव त्ति आयत चित्र (Frequency Histogram)
2. आव त्ति बहुभुज (Frequency Polygon)
3. व त्ताकार या पाई चित्र (Circular or Pie Chart)

1. **आव त्ति आयत चित्र (Frequency Histogram):** आव त्ति आयत चित्र से पहले आव त्ति (Frequency) को समझ लेना आवश्यक है। गणनात्मक वर्गीकरण (quantitative classification) में तथ्यों को पूरे-पूरे अंकों या संख्या में प्रकट किया जाता है, जैसे परिवार में बच्चों की संख्या को पूर्ण अंक अर्थात् 1, 2, 3, 4, 5..... इस प्रकार से अंकों को खंडित

श्रेणी (Discrete Series) कहते हैं और अगर एक ही खंडित अंक व श्रेणी एकत्रित तथ्यों में बार-बार प्रकट हो तो वह बार-बार आने वाली संख्या उस श्रेणी की आव त्ति (Frequency) कहलाती है। ये श्रेणी (Series) दो प्रकार की हो सकती हैं:

(i) ***खंडित श्रेणी (Discrete Series):*** जैसे- 1, 2, 3, 4, 5, 6.....

(ii) ***अखंडित श्रेणी (Continuous Series):*** जैसे- 0-20, 20-40, 40-60, 60-80..... अखंडित श्रेणी में हमें वर्ग आव त्ति (class intervals) का पता चलता है। अगर हम यह पाते हैं कि 20-40 वर्ष की उम्र में ही अधिकांश लोग विवाह करते हैं तो उन अधिकांश लोगों को उनकी आव त्ति के आधार पर उस वर्ग समूह यानि 20-40 वर्ष के वर्ग समूह में रखेगें। अगर तथ्यों के निरीक्षण के बाद यह पाया जाता है कि 50 लोगों के पूछने पर कि उनकी विवाह किस उम्र में हुयी थी तो 40 लोगों का कहना होता है कि 20-40 तो उस वर्ग समूह में विवाहित लोगों की आव त्ति 40 होगी और 10 अन्य दूसरे वर्ग समूहों में उनकी आव त्ति (Frequency) के आधार पर लिखे जायेंगे। आव त्ति को निकालने का अच्छा तरीका होता है मिलान रेखाओं (Tally Bars) के द्वारा उसका प्रस्तुतीकरण नीचे की सारणी में इसका उदाहरण दिया गया है।

तालिका-4.13

आव त्ति वितरण की रचना

अंक	मिलान रेखायें	आव त्ति
10	I	1
20	II	2
30	III	3
40	IIII	4
50	𝍸	5
	योग	15

यह तरीका वहाँ ज्यादा उपयोगी होता है जब निरीक्षण किये गये तथ्यों की पुर्नाव त्ति अधिक होती है। इस प्रकार की प्रश्नाव त्ति अर्थात् तथ्यों को आव त्ति आयत चित्र (Histogram) के द्वारा दर्शाया जा सकता है। विभिन्न वर्गांतरों में आने वाली आव त्तियों को ग्राफ पेपर पर आयतों (Rectangles) की रचना करके दर्शाया जा सकता है। निम्न चित्र में x को भुजाक्ष अर्थात् क्षितिज रेखा (horizontal line) के रूप में दर्शाया गया है और y को कोटी अक्ष अर्थात् लंबवत या खड़ी रेखा (vertical line) पर दर्शाया गया है। भारत की साक्षरता दर को आव त्ति आयत चित्र 4.1 में तथा उसके स्त्री-पुरुष अनुपात को चित्र 4.2 में दर्शाकर यह बताया गया है कि जब शिक्षा-दर समान रूप से रेखीय दिशा (linear direction) में बढ़ रहे हों तो चित्र कैसा बनेगा और जब स्त्री-पुरुष अनुपात रेखीय दिशा के बजाय उपर-नीचे अर्थात् घट-बढ़ (fluctuate) कर रहें हों तो चित्र कैसा बनता है। आव त्ति आयत चित्र कई प्रकार के हो सकते हैं, इसलिए यहाँ निम्न दो प्रकार के चित्रों को जो ग्राफ के द्वारा दर्शाये जा रहे हैं, उन्हें उदाहरण के तौर पर दिया गया है। यह स्मरण रखना भी आवश्यक है कि विद्यार्थियों को कुछ आंकड़ें देकर उन आंकड़ों के आधार पर आव त्ति वितरण की रचना (Histogram) बनाने के लिए कहा जा सकता है।

(ग्राफ पर बने चित्र संख्या 4.1, 4.2 को देखें।)

भारत का साक्षरता दर (1951-2001)

जनगणना वर्ष	साक्षरता दर
1951	18.33
1961	28.30
1971	34.45
1981	45.57
1991	52.20
2001	65.38

स्रोतः भारत की जनगणना, 2001

भारत का साक्षरता दर
(1951-2001)

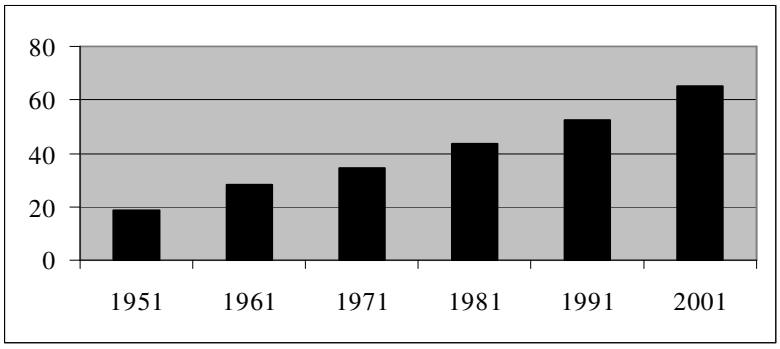

चित्र-4.1

स्त्री-पुरुष अनुपात (1901-2001)

जनगणना वर्ष	स्त्री-पुरुष अनुपात
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	927
2001	933

स्रोतः भारत की जनगणना, 2001

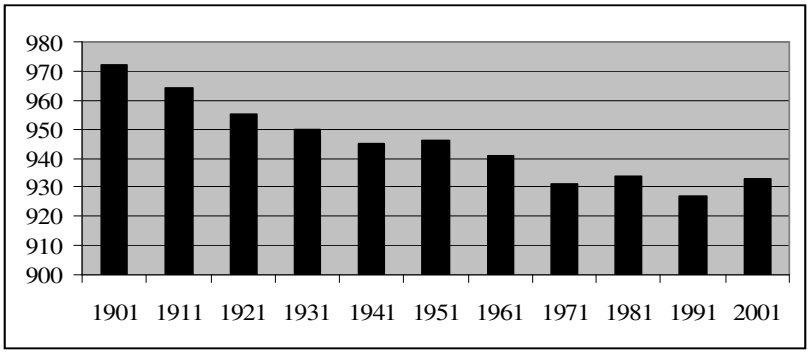

चित्र 4.2

2. **आव त्ति बहुभूज (Frequency Polygon):** आव त्ति वितरण (Frequency Polygon) को आव त्ति बहुभुज द्वारा भी प्रस्तुत किया जाता है। इसकी चार या चार से अधिक भुजायें होती हैं, जिसे आधार बनाकर वर्गांतर को आयतों के द्वारा दर्शाया जाता है। अर्थात् यहाँ यह स्मरण रखना जरूरी है कि आव त्ति बहुभुज के लिए भी आव त्ति आयत चित्र की रचना करनी पड़ती है और इसके बाद सभी आयतों के शीर्ष भाग के मध्य बिंदु का पता कर उन्हें मिला दिया जाता है। अगर आयत के बिना इसकी रचना करनी हो तब आव त्ति से संबंधित बिंदु को अंकित कर उसे उसी के संबंधित वर्गांतर के मध्य बिंदु के सामने लाना पड़ता है। ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि प्रत्येक बिंदु एक वर्गांतर के मध्य के सीध में हो। इन परेशानियों से बचने के लिए आयतों की मदद से आव त्ति बहुभूज का निर्माण आसान हो जाता है। इस प्रकार से निर्मित आव त्ति चक्र (Frequency curve) को संरचित आव त्ति चक्र कहते हैं। उदाहरणार्थ अगर निम्न तथ्य दिये गये हैं तो उससे आव त्ति भूज का चित्र (चित्र संख्या-4.3) निम्न प्रकार से बनाया जा सकता है।

आय-समूह (हजार में)	सदस्यों की संख्या
2-3	3
3-4	16
4-5	33
5-6	55
6-7	30
7-8	15
8-9	2

आव त्ति बहुभुज

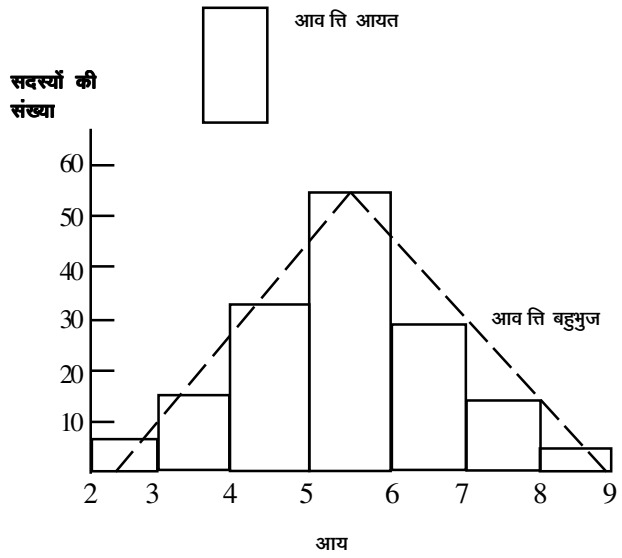

चित्र 4.3

इस प्रकार के उपर्युक्त तथ्यों के आधार निम्न आव ति बहुभुज बनाया जा सकता है। इस चित्र (4.3) से यह स्पष्ट हो जाता है कि दोनों विधि से आव ति बहुभुज बनाया जा सकता है। सर्वप्रथम आव ति (Frequency Histogram) बनाकर या फिर दूसरा मध्य बिन्दु को आधार बनाकर।

आव ति बहुभुज का एक खास उपयोग यह है कि आव ति वितरकों की तुलना भी चित्र के द्वारा संभव है लेकिन आव ति से यह संभव नहीं हो पाता है। इस कारण ही आव ति वितरण की तुलना में आव ति बहुभुज का प्रयोग किया जाता

है। एक महत्वपूर्ण बात जो ध्यान देने योग्य है वह यह कि अव ति वितरकों को जब मध्य बिन्दु को आधार बनाकर आव ति बहुभुज का निर्माण होता है उससे कई प्रकार के आव ति वक्र (frequency curves) भी बनाये जा सकते हैं जो तथ्यों के प्रस्तुतीकरण को और भी आकर्षक तथा बोधगम्य बना देता है। (देखें चित्र 4.3)

3. **पाई चित्र (Pie Diagram):** व त्ताकर या पाई चित्र का भी प्रयोग शोध में किया जाता है। तथ्यों के प्रस्तुतीकरण में पाई चित्र का प्रयोग सामान्य तौर पर जनगणना संबंधित आंकड़ों को प्रदर्शित करने के लिए भी किया जाता है फिर उसी के अनुरूप अर्द्ध-व्यास मानकर व त्त बनाये जाते हैं। अन्तर सिर्फ इतना होता है कि वर्गों में तुलनात्मक तथ्यों के वर्गमूल के अनुसार वर्ग की भुजा की लंबाई निर्धारित कर दी जाती है जबकि व त्ताकार चित्रों में वही वर्ग मूल अर्द्धव्यास (radius) के माप के अनुसार प्रदर्शित की जाती है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि यदि वर्गमूल व त्त खींचने के लिए बहुत बड़ा हो तो एक पैमाना (Scale) मानकर वर्गमूलों को समानुपात रूप से छोटा कर प्रदर्शित किया जाता सकता है व त्त चित्र या पाई चित्र के भी दो प्रकार होते है जो निम्न हैं:

(i) ***साधारण व त्त चित्र*** *(Simple Circle):* इस प्रकार के चित्र में अलग-अलग वर्ग का श्रेणी के तुलनात्मक महत्व या परिणाम को दर्शाने के लिए अलग-अलग व त्तों का प्रयोग किया जाता है। भारत की साक्षरता दर में 1951-2001 के दौरान जो व द्धि हुई है उसे विभिन्न व त्तों के द्वारा दर्शाया जा सकता है:

उदाहरण:

भारत का साक्षरता दर 1951-2001

जनगणना वर्ष	साक्षरता दर
1951	18.30
1961	28.30
1971	34.45
1981	45.57
1991	52.20
2001	65.38

स्रोतः भारत की जनगणना, 2001

आंकड़ों के आधार पर साधारण व त्तचित्र से भेद स्पष्ट हो जाता है कि कैसे विभिन्न वर्षों में भारत की साक्षरता दर की स्थिति क्या रही है। निम्न चित्रों के सहारे आंकड़ों को प्रदर्शित करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पिछले पाँच दशकों में भारत में साक्षरता दर में लगभग साढ़े तीन गुणा की व द्धि हुई है परन्तु 1991-2001 के दशक में साक्षरता दर में व द्धि 13 प्रतिशत के ऊपर दर्ज की गई जिसे व त्त चित्र द्वारा आसानी से समझा जा सकता है (चित्र 4.4)

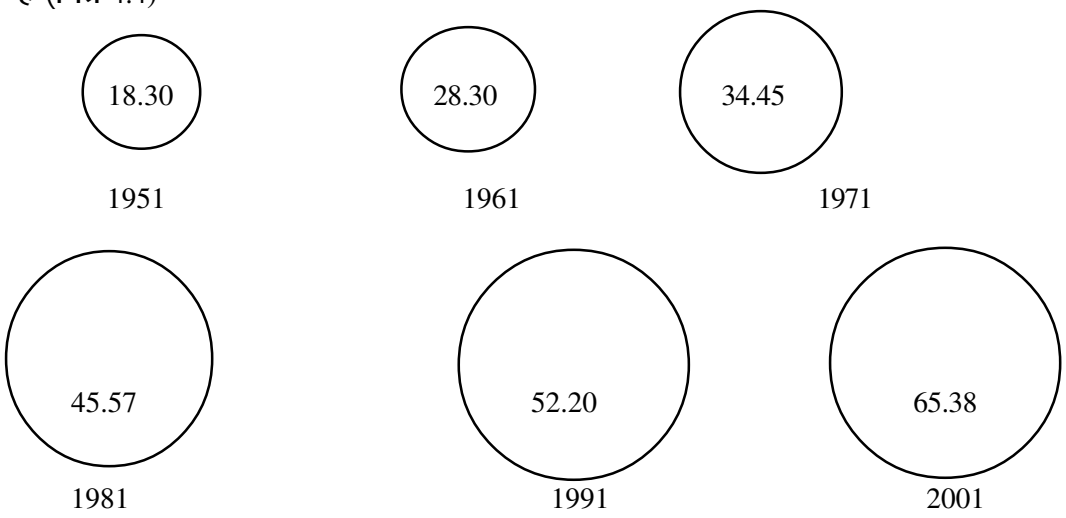

चित्र 4.4

2. ***उप-विभाजित या अंतविभक्र चित्र (Sub-divided circle)*:** जिस प्रकार छड़ (Bar) आयत (Histogram) तथा धन (Cubes) के द्वारा तथ्यों का तुलनात्मक परिणाम प्रस्तुत किया जाता है उसी प्रकार व त को भी अंतर्विभक्त करके उनका तुलनात्मक परिणाम प्रस्तुत किया जाता हैं। इस प्रकार के व त्ताकार चित्र के भी दो संभावित रूप हो सकते है। पहला तो यह एक ही व त्त को अंतर्विभक्त करके हम श्रेणियों को उनके अनुपात के अनुसार बराबर हिस्सों में जैसा कि आंकड़ें दर्शाते हैं उसी अनुपात मे प्रदर्शित कर देते है। इस प्रकार के अंतर्विभक्त चित्रों (चित्र 4.5, 4.6) के माध्यम से केवल एक ही घटना के विभिन्न श्रेणियों का तुलनात्मक महत्त्व स्पष्ट होता है। जैसा कि दसवीं पंचवर्षीय योजना में विभिन्न मदों मे खर्च का प्रतिशत वितरण निम्न सारणी मे दिया गया है।

चित्र 4.5: दसवीं पंचवर्षीय योजनाओं के विभिन्न मदों में खर्च का प्रतिशत अनुपात

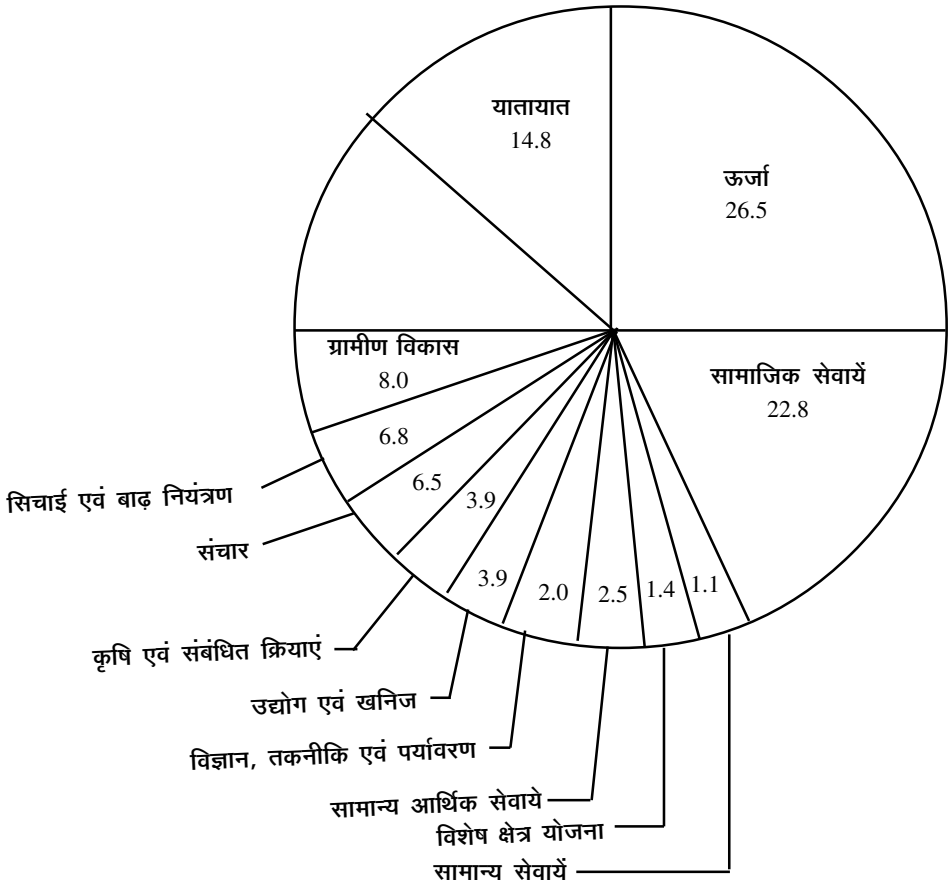

चित्र 4.6: अंतर्विभक्त

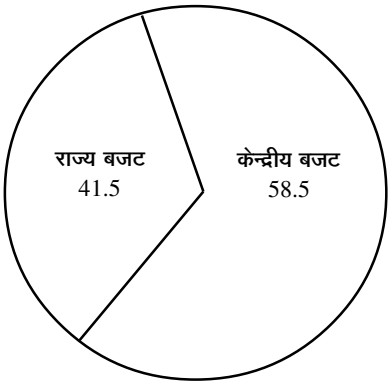

दसवीं पंचवर्षीय योजनाओं के विभिन्न मदों मे खर्च का प्रतिशत अनुपात

क्रम संख्या	विकास के क्षेत्र	प्रतिशत विवरण
1.	कृषि संबंधित क्रियाएं	3.9
2.	ग्रामीण विकास	8.0
3.	विशेष क्षेत्र योजना	1.4
4.	सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण	6.8
5.	ऊर्जा	26.5
6.	उद्योग एवं खनिज	3.9
7.	यातायात	14.8
8.	संचार	6.5
9.	विज्ञान, तकनीकि तथा पर्यावरण	2.0
10.	सामान्य आर्थिक सेवा में	2.5
11.	सामाजिक सेवायें	22.8
12.	सामान्य सेवायें	1.1
13.	कुल योग	100.00
	a. केंद्रीय योजना	58.5
	b. राज्य योजना	41.5

इस प्रकार उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि पाई चित्र एक व त्त है जिसमे किसी एक घटना को इकाई मानकर उसके विभिन्न श्रेणियों को कई खंडों मे बाँटकर प्रदर्शित किया जाता है। इसके लिए पहला काम यह होता है कि विभिन्न श्रेणियों से संबंधित तथ्यों को प्रतिशत में बाँट दिया जाता है और उसे व त्त में प्रदर्शित करने के लिए प्रत्येक श्रेणी को 3.6 से गुणा कर व त्त में उसके 360° के अनुपात में अंकित कर दिया जाता है पी०वी०यंग के अनुसार पाई चार्ट की सबसे बड़ी उपयोगिता इसका सरल होना है। सैद्धान्तिक रूप से इसकी विशेषता उन व त्त में कटे व त्ताकार चित्रों से है परन्तु किस कोण पर उन रेखाओं को खींचा गया है इसका अनुमान लगाना साधारणतया मुश्किल ही होता हैं। परंतु इसके बाबजूद भी यह कहा जा सकता है कि आजकल विभिन्न रंगों में पाई चित्र के विभिन्न मदों को तीन स्तरीय या चार स्तरीय भागों मे बाँटकर देखने से इसका आकर्षण थोड़ा बड़ा है और थ्री डी प्रभाव से इसके द्वारा प्रदर्शित चित्र काफी सजीव लगते है। निश्चय ही शोध के कार्यो को इस प्रकार के चित्रों के द्वारा प्रदर्शित करने से आंकड़ों की रोचकता तथा आकर्षण बढ़ा है।

सारांश

इस खंड मे आंकड़ों के विभिन्न स्रोतों की चर्चा करने के बाद उन स्रोतों पर आधारित तथ्यों की गुणवत्ता को बढ़ाने मे वर्गीकरण, संकेतन तथा सारणीयन का क्या महत्त्व है इसकी जानकारी विस्तार से मिलती है। कैसे तथ्यों की विश्लेषणात्मक गुणवत्ता, वर्गीकरण, संकेतन तथा सारणीयन से बढ़ती है इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि जब इन तथ्यों को सारणी के रूप में प्रदर्शित किया जाता है और फिर विभिन्न तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन किया जाता है। वे तथ्य जो कभी बेजान ओर नीरस लगते थे वे अपने आप शोधकर्त्ता को उसके निष्कर्ष तक पहुँचा देते हैं। शोध में दिलचस्पी रखनेवालों को आज के इस कंप्युटर युक्र शोध मे इस प्रकार से तथ्यों की अभिव्यक्ति को एक नया आधार मिला है। विद्यार्थियों में भी लधु स्तर पर ही सही जो प्रोजेक्ट के कार्य किये जाते है वह भी ज्यादा रूचिकर हो गया है। दूरदर्शन पर अक्सर चित्रमय प्रदर्शन के द्वारा, जनगणना, मौसम, अपराध तथा चुनावी आंकड़ों के लिए इसका इस्तेमाल एक रूटीन सी बात हो गयी है।

मूल्याकंन हेतु प्रश्न

1. स्रोत क्या है? इसके विभिन्न प्रकारों का उदाहरण सहित वर्णन करें
2. शोध में प्राथमिक स्रोत के महत्त्व का विस्तार से वर्णन करें।

3. द्वैतियक स्रोत के द्वारा शोध किस हद तक विश्वसनीय होता है।
4. वर्गीकरण के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण सहित वर्णन करें।
5. सामाजिक शोध में सारणीयन के प्रकारों का वर्णन करें।
6. सामाजिक शोध में तथ्यों के चित्रमय प्रदर्शन का मूल्यांकन करें।

अध्याय-5
सामाजिक शोध में सांख्यिकी विधि
(Statistical Methods in Social Research)

सामाजिक शोध में संख्यात्मक तथ्य का प्रयोग अब एक साधारण बात हो गयी है। यहाँ तक की समाचार, विज्ञापन, दूरदर्शन में कोई सूचना तथा विज्ञापन आदि में जिस प्रकार इन संख्यात्मक तथ्यों का प्रयोग किया जाता है वह अपने आप में इस बात का द्योतक है कि इस प्रकार से तथ्यों का प्रदर्शन कितना प्रचलित हो गया है।

अंग्रेजी भाषा के शब्द Statistical की उत्पत्ति लैटिन भाषा के स्टेटस (Status), इटेलियन भाषा के स्टाट्सा (Statsa) तथा जर्मन भाषा के स्टेटीस्टीक (Statistic) से हुई है। जर्मनी के प्रसिद्ध गणिताचार्य गाटफ्रायड एचेनवाल (Gottfried Achenwall) ने सर्वप्रथम इसका प्रयोग तथ्यों को गणित के रूप में किया जिसके कारण उन्हें सांख्यिकी का जन्मदाता कहा जाता है। पिछले तीन सौ वर्ष में सांख्यिकी विज्ञान का चौमुखी विकास हुआ है। इसके विकास में आर0 ए0 फिशर तथा कार्ल पियर्सन के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं जिन्होंने इसे एक प्रचलित विधि के रूप में प्रतिष्ठित किया। सांख्यिकी शब्द का अभिप्राय बताते हुए वेब्स्टर (Webster) ने लिखा है कि वे तथ्य जिनको अंकों के रूप में अथवा किसी भी सारणी या वर्गित पद्धति द्वारा प्रस्तुत किया जाता है सांख्यिकी कहलाते हैं। बाउले (Bowley) ने सांख्यिकी (Statistics) को अंकों में व्यक्त करने वाले तत्त्वों के विवरण का विषय कहा है जिसमें तथ्यों को सांख्यिकी रूप देकर इसके संबंध को दर्शाया जाता है। सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सांख्यिकी में तथ्यों के उस समूह का प्रयोग किया जाता है जो अनेक कारणों से प्रभावित होते हैं जिन्हें अंकों में व्यक्त किया जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि सांख्यिकी की तीन मुख्य विशेषताएँ हैं:

1. इसमें तथ्यों को संख्यात्मक रूप में व्यक्त किया जाता है।
2. यह तथ्य शोध से सम्बन्धित होते हैं।
3. तुलना करने के लिए इन तथ्यों को एक-दूसरे के सम्बन्ध में रखा जा सकता है।

सांख्यिकी विधि के निम्न प्रमुख लक्षण हैं:

1. तथ्यों के समूह (Aggregate of Facts) को इकाई बनाकर सांख्यिकी में इसका प्रयोग होता है।
2. यहाँ तथ्यों के ऊपर कई कारणों का प्रभाव पड़ता है, जिसका तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।
3. तथ्यों को संख्यात्मक रूप में अभिव्यक्ति मिलती है।
4. सांख्यिकी विधि के द्वारा जिन तथ्यों को विश्लेषण के लिए चुना जाता है उनकी शुद्धता (Accuracy) पर कोई संदेह नह होता।
5. तथ्यों को सुनियोजित ढंग से संग्रहित किया जाता है।
6. तथ्यों को पूर्वनिर्धारित उद्देश्यों के आधार पर एकत्र किया जाता है।

जहाँ तक सांख्यिकी के द ष्टिकोण से तथ्यों के संकलन का प्रश्न है, इन सांख्यिकी इकाई के निम्न गुण महत्त्वपूर्ण है, जिसकी चर्चा पी0 वी0 यंग ने भी की है। पी0 वी0 यंग के अनुसार उन सांख्यिकी इकाई के निम्न गुण होने चाहिएं:

1. **प्रासंगिकता (Appropriateness):** तथ्यों की प्रासंगिकता शोध के उद्देश्य से जुड़ी होती है। एक सांख्यिकी इकाई अगर एक घटना के अध्ययन के लिए सार्थक है तो इसका अर्थ यह नह निकालना चाहिए की दूसरी घटना के अध्ययन में उस इकाई को सार्थक माना जा सकता है।

2. **मापयोग्यता** (Measurability): जिन सांख्यिकी इकाईयों का इस्तेमाल किया जाता है, उन्हें मापयोग्य होना भी आवश्यक है।

3. **स्पष्टता** (Clarity): जिन सांख्यिकी इकाईयों को महत्त्व दिया जाता है, उसका स्पष्ट होना भी एक आवश्यक शर्त है।

4. **तुलनात्मक क्षमता** (Comparability): एक सांख्यिकी इकाई की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि उस सांख्यिकी इकाई को दूसरी इकाई के साथ उसकी तुलना की जा सकती है या नहीं।

इस प्रकार सांख्यिकी का महत्त्व, सामाजिक शोध में काफी है।

माध्य प्रव त्तियों का माप
(Measures of Central Tendencies)

सामाजिक शोध के दौरान जिन सांख्यिकी तथ्यों की तलाश की जाती है, उन तथ्यों का वर्गीकरण तथा सारणियन करना आवश्यक है। इसी कारण सांख्यिकी तथ्यों का प्रचलन शोध को सरल बनाने के लिए किया जाता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शोध यथार्थ पर आधारित हैं। सांख्यिकी विधि के द्वार तुलनात्मक अध्ययन के लिए सारणीयन को आधार बनाकर तथ्यों को रखा जाता है। यह कहा जा सकता है कि हर एक आँकड़ों की स्थिति एक जैसी नहीं हो सकती। फिर भी सभी आँकड़ों में से एक ऐसे अंक की खोज कर ली जाती है जो की सभी व्यक्तिगत आँकड़ों का उचित प्रतिनिधत्व कर सके। ऐसी योग्यता या मूल्य को ही माध्य प्रव त्ति (Central Tendency) कहते हैं। माध्य प्रव त्ति अलग-अलग आँकड़ों या तथ्यों या व्यक्तियों की योग्यता या मूल्य पर प्रकाश नहीं डालती, बल्कि वह सामूहिक रूप से सम्पूर्ण वर्ग या श्रेणी की योग्यता का प्रतिनिधित्व करती है और इस प्रकार वह पूरे समूह की प्रव त्ति या मूल्य की ओर संकेत करती है। उदाहरणर्था यदि किसी परीक्षण मे पांच छात्रों को क्रमशः 6,7,5,4 और 9 अंक प्राप्त होते होते हैं तो ऊपरी तौर पर यही कहा जाएगा कि पाँच छात्रों की योग्यता एक -दूसरे से भिन्न है। परन्तु इन प्राप्तांकों को ध्यानपूर्वक देखने से मालूम होगा कि 6 अंक ऐसा अंक है जिसके आस-पास अन्य अंक स्थित है। दो अंक 6 से छोटे और दो 6 से बड़े हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि 6 इस पूरे समूह का प्रतिनिधित्व करने वाला अंक है। इसलिए हम 6 को उपरोक्त पाँचों प्राप्तांकों की केन्द्रीय प्रव त्ति कहेंगे। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि वह मूल्य जो हमें समूह की योग्यता को संक्षिप्त रूप से एक अंक मे ही बतला देते है केन्द्रीय प्रव त्तिक माप (Measures of Central Tendency) कहलाते हैं। इन मूल्यों को सांख्यिकी में माध्य (Mean or Average) कहते हैं।

इस प्रकार माध्य एक ऐसी सरल अभिव्यक्ति है जिसमे कई संख्याओं का सार केन्द्रीत होता है। ऐल्हांस का यह मानना था कि माध्य एक ऐसी संख्या है जिसका प्रयोग सम्पूर्ण श्रेणियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया जाता है। वह श्रेणी न तो न्यूनतम मूल्य होती है और न ही उच्चतम मूल्य, बल्कि वह मूल्य इन दोनों सीमाओं के बीच का एक मूल्य होता है जो मूल्यों के बीच में केन्द्रित होती है। इस प्रकार माध्य को ध्यान में रखकर सम्पूर्ण श्रेणियों की केन्द्रीय विशेषता का पता लगाया जा सकता है। सामाजिक शोध मे तथ्यों की विवेचना, विशलेषण तथा निष्कर्ष निकालने मे माध्यम की उपयोगिता स्वीकार की गई है। एक आदर्श माध्य के निम्नलिखित आवश्यक तत्व होते हैं

1. **निश्चितता एवं स्पष्टता** (Definite and clarity): माध्य का पूर्णतयः निश्चित एवं स्पष्ट होना एक आदर्श माध्य की विशेषता होती है।

2. **सरलता** (Simplicity): एक आदर्श माध्य का गुण होता है, उसकी गणना पद्धति को सरल तथा उपयुक्त बनाना।

3. **समूह का प्रतिनिधित्व** (Representative character of the Group): माध्य पूरी श्रेणी की विशेषताओं का भी प्रतिनिधित्व करता है।

4. **निर्पेक्षता** (Secular): माध्य पूर्णतयः र्निपेक्ष होता है, यह कम व अधिक तथा घटने का बढ़ने वाला नहीं होता।

5. **बीजगणितीय विवेचन** (Algebric Description): माध्य के द्वारा बीजगणितीय विवेचन भी सम्भव होता है। अर्थात् एक अच्छे व आदर्श माध्य को बीजगणितीय तथा अंकगणितीय के सुत्रों के द्वारा परखा जा सकता है।

6. **निःदर्शन से कम प्रभावित**: एक अच्छा माध्य वह है जो निःदर्शन में परिवर्तन आने पर भी उससे प्रभावित नहीं होता।

7. **श्रेणियों का संक्षिप्तीकरण (Summerisation of facts)**: माध्य के द्वारा जटिल श्रेणियों को संक्षिप्त रूप से प्रकट करना आसान हो जाता है।

8. **तुलनात्मक अध्ययन तथा विश्लेषण में सहायक (Useful in Comparative Study and Analysis)**: एक अच्छे माध्य की यह भी विशेषता यह है कि यह तुलनात्मक माध्यम तथा विशिष्ट विश्लेषण में सहायक होता है।

मार्गदर्शन करना

(Path Finding)

मार्गदर्शन माध्य की उल्लेखनीय भुमिका होती है।

इस प्रकार उपयुक्त विशेषताओं से यह स्पष्ट है कि माध्य एक संक्षिप्त तथा सरल चित्र प्रस्तुत करता है। नियोजन तथा नीतिर्निधारण में इसकी प्रमुख भूमिका को स्वीकार किया गया है क्योंकि इसकी सहायता से तुलनात्मक अध्ययन द्वारा वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना आसान हो जाता है इसलिए कुछ सीमाओं के बावजूद भी इसका सामाजिक शोध मे एक महत्त्वपूर्ण स्थान हो जाता है।

माध्य के प्रकार

माध्यों के यूँ तो कई प्रकार होते हैं, परन्तु पी0वी0 यंग ने तीन निम्नलिखित प्रकारों को महत्त्वपूर्ण माना है।

1. अंकगणितीय माध्य (Arithmetic mean)
2. बहुलक (Mode)
3. मध्यंका (Median)

समानान्तर माध्यः विधि एवं महत्व

(Mean: Procedure of its Calculation and Importance)

समानांतर माध्य (Mean) वास्तव में औसत शब्द का ही रूपांतरित स्वरूप है। इसके द्वारा (Mean) श्रेणी के समस्त मदों के मूल्यों के योग को उनकी संख्या से भाग दे कर प्राप्त किया जाता है। अर्थात् समानांतर माध्य वह मूल्य है जो किसी श्रेणी के समस्त मूल्यों के योग में उनकी संख्या का भाग देने से प्राप्त होता है। पी0वी0 यंग ने भी यह लिखा है कि सांख्यिकी शोध में गणना (Calculate) करने का यह एक सबसे आसान तरीका है। उदाहरण के लिए अगर 6 विद्यार्थी 50, 55, 60, 50, 45, 40 अंक प्राप्त करते हैं। जो उन सबके योग अर्थात् 300 को 6 से गुणा कर इसका माध्य आसानी से निकाला जा सकता है। इस उदाहरण मे 6 विद्यार्थियों के प्राप्तांक का माध्य 50 आता है अतः माध्य 50 हुआ।

समानांतर माध्य की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं।

1. **सरल विधि (Simple Series)**: समानांतर माध्य केन्द्रीय विधि की प्रव त्ति को माप करने की एक सरल विधि हैं।
2. **समान महत्त्व (Equal Importance)**: इसमें समस्त पद मूल्यों का प्रयोग किया जा सकता है और सभी समस्त पदों को महत्त्व दिया जाता है।
3. **आसान गणना (Easy Calculation)**: समानांतर माध्य का पता करने के लिए प्रत्येक पद की गणना केवल एक बार ही की जाती है।
4. **पदमूल्यों का महत्त्व (Importance of Total)**: समानांतर माध्य में पदों की आव ति की तुलना मे पदमूल्यों को अधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता है।

सरल श्रेणी द्वारा समानांतर माध्य निकालने की विधि

(Calculation of Mean in Simple Series)

समानांतर माध्य सरल श्रेणी (Simple Series), खण्डित श्रेणी (Discrete Series) तथा सत्त श्रेणी (Continuous Series)में विभिन्न विधियों द्वारा निकाला जाता है। यहाँ सरल श्रेणी में समांतर माध्य निकालने की विधि पर विचार किया गया है।

समानांतर माध्य दो विधियों द्वारा निकाली जाती है, जो निम्न हैं

1. प्रत्यक्ष रीति द्वारा (Direct Method)
2. लधु रीति द्वारा (Shortcut Method)

1. **प्रत्यक्ष रीति (Direct Method)**: इस विधि के द्वारा समानंतर माध्य निकालने के लिए, सबसे पहले समस्त पदों के मूल्यों का योग निकाला जाता है, फिर उस योग में पदों की कुल संख्या का भाग दिया जाता है। इस प्रकार से प्राप्त लब्धी समांतर माध्य होता है। निम्नलिखित उदाहरण के द्वारा इसे समझा जा सकता है।

उदाहरण:

10 विद्यार्थीयों की लम्बाई का समानतर माध्य ज्ञात करने के लिए निम्न आँकड़ें उपलब्ध हैं। सभी विद्यार्थीयों की लम्बाई सैन्टीमीटर में इस प्रकार है 155, 153, 168, 162, 164, 166, 180, 165, 157, 160

समानंतर माध्य निकालने के लिए उपर्युक्त तथ्यों को निम्न सारणी मे व्यवस्थित कर दिया गया है।

संख्या	X
1	155
2	153
3	168
4	162
5	164
6	166
7	180
8	165
9	157
10	160
N=10	ΣX =1630

प्रत्यक्ष रीति द्वारा ऊपर दिए गए समस्त पदों के मूल्यों को जोड़ने से उनका कुल योग 1630 आता है। इस योग को पदों की कुल संख्या अर्थात् N=10 से भाग देने पर प्रतिफल 163 आता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उपर्युक्त आँकड़ों का समानतर माध्य 163 है।

इसके लिए निम्न सूत्र इस प्रकार हैं

सूत्र $\bar{x} = \frac{\Sigma x}{N}$ सूत्रों के आधार पर निकाला गया समांतर माध्य

$=163$

जहां = समांतर माध्य

Σ = योग

X = पदों का मूल्य

N = पदों की कुल संख्या

Σx = समस्त पद मूल्यों का योग

इस प्रकार प्रत्यक्ष रीति द्वारा विद्यार्थीयों की लंबाई का समांतर माध्य 163 सेंटीमीटर प्राप्त हुआ।

2. **लघु रीति द्वारा (Short cut Method)**: जब श्रेणी लंबी हो, पदों की संख्या हो, वे बड़ी संख्या हो, वे बड़ी संख्या में या दशमलव वाली संख्या में हो, तब लघु रीति द्वारा समांतर माध्य ज्ञात करने में सरलता रहती है। इस रीति में सर्वप्रथम श्रेणी के किसी भी पद को कल्पित माध्य (Assumed mean) मान लेते हैं। कल्पित माध्य मान लेने के पश्चात् सभी मूल्यों से विचलन (Deviation) का पता चलाया जाता है। इसके बाद माध्य निकालने के लिए जिस सूत्र का प्रयोग किया जाता है वह निम्न है:

यहाँ

	=	सामान्तर माध्य
A	=	कल्पित माध्य
N	=	पदों की संख्या
d	=	विचलन
x	=	पदमूल्य
	=	विचलन से प्राप्त पदमूल्यों का योग

निम्न उदाहरण में भी उसी तथ्य व आंकड़ों का प्रयोग किया गया है जैंसा कि प्रत्यक्ष रीति द्वारा माध्य निकाला जायेगा।

उदाहरण

$$\bar{X} = A + \frac{\Sigma dx}{N}$$

$$\bar{X} = 166 + \frac{-30}{10}$$

संख्या *N*	लंबाई (से.मी.में) *X*	*A=166* *dx*
1	155	(155-166)-11
2	153	(153-166)-13
3	168	(168-166)+2
4	162	(162-166)-4
5	164	(164-166)-2
6	166	(166-166)-0
7	180	(180-166)+14
8	165	(165-166)-1
9	157	(157-166)-9
10	160	(160-166)-6
N=10		= -46+16 = -30

$\bar{X}$ = 166-3

= 163

अतः समांतर माध्य 163 सेंटीमीटर होगा। यहाँ स्मरण रखने योग्य बात यह है कि समांतर चाहे प्रत्यक्ष रीति से निकाला जाए यह लघु रीति से दोनों का उत्तर एक समान ही आता है।

खंडित श्रेणी में समांतर माध्य निकालना

(Calculation of Mean in Discrete Series)

खंडित श्रेणी में भी समांतर माध्य प्रत्यक्ष तथा लघु रीति से निकाली जा सकती है। प्रत्यक्ष रीति के माध्य ज्ञात करने की विधि निम्नलिखित है।

प्रत्यक्ष रीति

(Direct Method)

1. सर्वप्रथम पद मूल्यों को आव ति से गुणा करते हैं।
2. सभी पदों के गुणन फल का योग करते हैं।
3. गुणन फल के योग को आव तियों के योग से भाग देते हैं।
4. भाग देने से प्राप्त लब्धि को ही समांतर माध्य कहा जाता है। प्रत्यक्ष रीति से इसे एक सूत्र में भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

जहाँ

$\bar{X}$ = समांतर माध्य

= पदों की आव ति

Σfx = पद के मूल्यों और आव ति के गुणनफलों का योग

उदाहरण

प्राप्त अंक : 24, 23, 22, 21, 20, 18, 15, 10, 20, 25

छात्र : 4, 6, 10, 2, 3, 5, 7, 5, 3, 5

प्राप्तांक x	*छात्र* f	*मूल्यों का आव ति का योग* fx
24	4	96
23	6	138
22	10	220
21	2	42
20	3	60
18	5	90
15	7	105
10	5	50
30	3	90
25	5	125
	N=50	=1016

$$= \frac{1016}{50}$$

$$= 20.32$$

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इस उदाहरण में समांतर माध्य 20.32 आता है।

लघु रीति

(Short-Cut Method)

खंडित श्रेणी में समांतर मध्य लघु रीति से भी निकाला जा सकता है। लघु रीति में निम्न चरण (Steps) को अपनाया जाता है:

1. पद-मूल्यों मे से किसी एक को कल्पित मध्य (Assumed Mean) मान लिया जाता है।
2. कल्पित माध्य से मूल्यों का विचलन पता लगा लिया जाता है।
3. प्रत्येक विचलन का सम्बन्धित आव ति से गुणा करके कुल विचलन का भी पता लगा लिया जाता है। फिर विचलित मुल्यों के गुणन फलों का योग निकाल लिया जाता है। सूत्र तथा इसके उदाहरण नीचे दर्शाए गए हैं

सूत्र

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

$\overline{X}$ = समांतर माध्य
A = कल्पित माध्य
N = पदों की संख्या
f = पदों की आव ति
d = विचलन
= आव ति व विचलित मूल्यों के गुणनफलों का योग उदाहरण

प्राप्तांक : 24, 23, 22, 21, 20, 18, 15, 10, 30, 25
छात्र : 4, 6, 10, 2, 3, 5, 7, 5, 3, 5

प्राप्तांक x	छात्र संख्या f	विचलन $A=22$	विचलित मूल्य व आव ति fdx
22	4	+2	+8
23	6	+1	+6
22	10	0	0
21	2	-1	-2
20	3	-2	-6
18	5	-4	-20
15	7	-7	-49
10	5	-12	-60
30	3	+8	+24
25	5	+3	+15
	N=50	+14-26= -12	= 53-137
			= - 84

Σfdx
$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$

$$= 22 + \frac{-84}{50}$$
$$= 22 - 1.68$$
$$= 20.32$$
$$= 20.32$$

अतः यहाँ पर इस उदाहरण में छात्रों के प्राप्तांकों का समांतर माध्य 20.32 आता है।

3. **सतत श्रेणी में समांतर माध्य निकालना (Calculation of Mean in Continous Series) :** सतत श्रेणी में भी समांतर माध्य दो रीतियों द्वारा निकाला जा सकता है। प्रत्यक्ष रीति से समांतर माध्य ज्ञात करने कि विधि निम्नलिखित है -

1. सबसे पहले वर्गान्तरों (Class-intervals) का मध्यमान निकाला जाता है।
2. मध्य मूल्य से इसे गुणा किया जाता है।
3. इसके बाद सभी मध्य मूल्य के गुणन फल का योग करते हैं।
4. फिर गुणन फल के योगों को आव त्तियों के योग से भाग देते है। और भाग देने के पश्चात् प्राप्त लब्धि को ही समांतर माध्य कहा जाता है।

प्रत्यक्ष रीति

(Direct Method)

प्रत्यक्ष रीति से इसे एक सूत्र तथा उदाहरण द्वारा यहाँ दर्शाने की कोशिश की गई है।

सूत्र

$$\overline{X} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

जहाँ

$\overline{X}$ = समांतर माध्य

N = आव त्तियों का योग

= पद मूल्यों एवं आव त्तियों के गुणनफलों का योग

उदाहरण

दैनिक मजदूरी (रू): 3-5, 6-8, 9-11, 12-14, 15-17, 18-20, 21-23, 24-26

श्रमिकों की संख्याः 2, 6, 8, 11, 10, 4, 3, 1

दैनिक मजदूरी	श्रमिक संख्या	मध्य मूल्य	मध्य मूल्य का योग
x	f	x	fx
3-5	2	4	8
6-8	6	7	42
9-11	8	10	80
12-14	11	13	143
15-17	10	16	160
18-20	4	19	76
21-23	3	22	66
24-26	1	25	25
	$N=45$		$=600$

$$= \frac{600}{45}$$

$$\overline{X} = 13.33$$

इस प्रकार उपर्युक्त उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मज़दूरी का समांतर माध्य 13.33 होगा।

लघु रीति

(Short-cut Method)

सत्त श्रेणी में समांतर माध्य लघु रीति द्वारा भी निकाला जाता है। लघु रीति से माध्य ज्ञात करने की विधि इस प्रकार है।

1. सबसे पहले वर्गान्तरों से मध्य मूल्य निकालते हैं।
2. मध्य मूल्यों में से किसी एक मूल्य को कल्पित मध्य मान लेते हैं।
3. कल्पित माध्य से मूल्यों का विचलन पता किया जाता है।
4. प्रत्येक विचलन को आव ति से गुणा करके गुणन फलों का योग निकाला जाता है।

लघु रीति से इसे सूत्र तथा उदाहरण के द्वारा नीचे दर्शाया गया है

सूत्र

$$\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$$

जहाँ

$\overline{X}$ = समांतर माध्य

A = कल्पित माध्य

N = आव त्तियों का योग

= पद विचलनों व आव त्तियों के गुणनफलों का योग

उदाहरण

दैनिक मज़दूरी : 3-5, 6-8, 9-11, 12-14, 15-17, 18-20, 21-23, 24-26

श्रमिकों की संख्या : 2, 6, 8, 11, 10, 4, 3, 1

Σfdx $\overline{X} = A + \frac{\Sigma fdx}{N}$

दैनिक मज़दूरी	श्रमिक संख्या	मध्य मूल्य	विचलन A=16	विचलन मूल्य आव ति योग
x	f	x	dx	fdx
3-5	2	4	-12	-24
6-8	6	7	-9	-54
9-11	8	10	-6	-48
12-14	11	13	-3	-33
15-17	10	16	0	0
18-20	4	19	+3	+12
21-23	3	22	+6	+18
24-26	1	25	+9	+9
	N=45			= -159 + 39
				= -120

$$= 16 + \frac{-120}{45}$$

$$= 16\text{-}2.67$$

$$\overline{X} = 13.33$$

इस प्रकार उपर्युक्त उदाहरण से यह स्पष्ट है कि दैनिक मज़दूरी का समांतर माध्य 13.33 होगा।

इसके अतिरिक्त सत्त श्रेणी में समांतर माध्य निकालने की एक और विधि का उल्लेख आता है जिसे पद-विवेचन रीति (Step Deviation Method) कहा जाता है। परन्तु ध्यान देने योग्य बात यह है कि यह रीति ज्यादा प्रचलित रीति मे नहीं आती है। परन्तु फिर भी यहाँ इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि चाहे किसी भी रीति द्वारा समातंर माध्य निकालने की कोशिश की जाए, इन सभी रीतियों के निष्कर्ष एक समान ही प्रकट होते हैं।

माध्य की उपयोगिता एवं गुण

(Usefulness & Merits of Means)

समांतर माध्य के महत्त्व तथा उसकी उपयोगिता निम्न हैः

1. **सरलता (Simple):** समांतर माध्य की गणना करना व समझना काफी सरल है।
2. **निश्चितता (Definitive):** समांतर माध्य निश्चित, स्थिर तथा स्पष्ट तरीके से परिभाषित होता है।
3. **बीजगणितीय विवेचन (Algebric description):** पदों की संख्या और पद मूल्यों के योग के समांतर माध्य पता लेने के बाद उसका बीजगणितीय विवेचन भी संभव है।
4. **सभी मूल्यों को समान महत्त्व (Equal Importance):** दिया जाता है।
5. **तुलनात्मक मूल्यांकन (Comparative Evaluation):** समांतर माध्य मे तुलनात्मक मूल्यांकन का प्रयोग किया जाता है।
6. **जाँच संभव (Verification):** समांतर माध्य जिस प्रकार निकाला जाता है उसकी परीक्षण व जाँच संभव है जो इसे वैज्ञानिक आधार प्रदान करता है।

उपर्युक्त गुणों के साथ ही माध्य की कुछ सीमाएं भी हैं जो निम्न हैंः

1. कई बार समांतर माध्य ऐसे परिणामों को प्रस्तुत करता है जो वास्तव में असंभव होता है।
2. जब असाधारण इकाइयाँ बहुत बड़ी या बहुत छोटी हों तब समांतर माध्य पर इसका अनुचित प्रभाव पड़ने की संभावना बनी रहती है।
3. जब पदों की संख्या अधिक हो तो इसे निरीक्षण मात्र से पता नहीं लगाया जा सकता है।
4. यहाँ पर यह आवश्यक होता है कि पदमात्रा के समस्त पदों के मापों का योग अलग-अलग मालूम किया जाये, यदि कोई पद छूट जाता है जो माध्य निकाला नहीं जा सकता है।
5. समांतर माध्य प्रगतिशील (Progressive) तथा प्रतीयगामी (Regressive) को नहीं दर्शाता है।

बहुलकः अर्थ, विधि एवं महत्व
(Mode: Meaning, Procedure of the Calculation and Importance)

अंग्रेजी के मोड़ शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच भाषा के La mode से हुई है जिसका अर्थ रिवाज, फैशन (fashion) से जुड़ा हैं। सांख्यिकी मे बहुलक उस मान को कहतें हैं जो उस पदमात्रा में अधिक बार आता है। उदाहरणार्थ यदि मज़दूरों को क्रमशः 70, 90, 70, 50, 80, 120, 70, 60, 80 रूपयें एक दिन की मज़दूरी मिलती हो तो इसका बहुलक 70 आता है जो इस बात को दर्शाता है कि अधिकांश मज़दूरों को दैनिक मज़दूरी 70 मिलती है।

गिलफोर्ड ने बहुलक की परिभाषा देते हुए लिखा है कि बहुलक माप के पैमाने का वह बिन्दु है जहाँ कि किसी वितरण में सर्वाधिक आव ति होती है।

बहुलक की विशेषताएं
(Chracteristics of Mode)

1. किसी भी पदमूल्यों में बहुलक वह अंक है जिसकी आव त्ति सर्वाधिक होती है।
2. बहुलक पद मूल्यों पर नहीं, अपितु आव ति पर निर्भर करता है।
3. इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अन्य केन्द्रीय प्रव त्तियों की तुलना में इसकी गणना सरल है।
4. बहुलक सभी पद-मूल्यों का अर्थात् समग्र का प्रतिनिधित्व करता है।

व्यक्तिगत श्रेणी में बहुलक निकालने की विधि
(Computation of Mode)

1. निरीक्षण द्वारा (Through Observation)
2. खंडित श्रेणी में बदलकर (Transforming them in Discrete Series)
3. माध्यिका एवं समांतर माध्य के आधार पर (Grouping Method)

1. **निरीक्षण द्वारा (Through Observation):** व्यक्तिगत श्रेणी में बहुलक का पता लगाने के लिए सबसे पहले पदों को एक क्रम में व्यवस्थित कर लिया जाता है और उस पद में आव त्ति के आधार पर बहुलक की पहचान कर ली जाती है।

उदाहरणार्थ दिये गये पद मूल्य है।

2, 7, 6, 5, 4, 5, 8, 5, 6 & 4

बहुलक पता लगाने के लिए पदमुल्यों को निम्न क्रम में रखा जाता है

2, 4, 4, 5, 5, 5, 6, 6, 7 & 8

उपर्युक्त पद मूल्यों में 5 की आव त्ति 3 बार हुई है और इस आधार पर अन्य अंकों की तुलना में यह सबसे ज्यादा है इसलिए इस पदमूल्य का बहुलक 5 होगा।

2. खंड़ित श्रेणी में बदलकर बहुलक निकालना (Computation of Mode through Discrete Series): जब व्यक्तिगत श्रेणी के अनेक मूल्य दो या दो से अधिक बार पाये जाते हैं तो उन्हें आरोही क्रम में व्यवस्थित कर उनकी आव त्ति को उनके सामने लिख दिया जाता है। आव ति जिस मूल्य की सबसे अधिक होती है वह उसका मूल्य बहुलक कहलाता है। उदाहरण के लिए निम्न सारणी में 50 व्यक्तियों की आयु ही आयी है जिसका बहुलक निकालना है।

इस आयु श्रेणी को आरोही क्रम में व्यवस्थित किया गया है:

पदमूल्य (व्यक्तियों की आयु)	आव त्ति (Frequency)
20	4
21	6
22	12
23	18
24	7
25	3

उपर्युक्त सारणी से यह स्पष्ट हो जाता है कि अधिकतम आव त्ति 18 है जिसका पदमूल्य 23 है। अतः बहुलक आयु 23 हुआ।

3. समांतर माध्य का सामूहिकरण रीति के द्वारा बहुलक निकालना (Computation of Mode Through Grouping Method): किसी व्यक्तिगत श्रेणी का बहुलक सामूहिकरण रीति के द्वारा भी निर्धारित किया जाता है जिसके लिए निम्न सूत्र है

सूत्र $Z= 3M -2 x$

यहाँ

Z = बहुलक

M=माध्यिका

X= समांतर माध्य

निम्न पदमूल्यों में से समांतर माध्य के आधार पर बहुलक ज्ञात करना होगा

33, 20, 35, 50, 37, 33, 35, 25, 35, 35, 34 & 35

इस पदमाला या समंकमाया में माध्यिका 35 और इसका समांतर माध्य 33.8 होगा

तो बहुलक $Z = 3M -2 x$

$Z= 3 x 35-2 x 33.8$

$Z=105 - 67.6$

$Z= 37.4$

इस प्रकार इस पदमूल्य का बहुलक 37.4 आता है।

खण्डित श्रेणी में बहुलक का निर्धारण

(Location or Computation of Mode in Discrete Series)

1. सर्वप्रथम निरीक्षण विधि द्वारा सर्वाधिक आव त्ति का मूल्य यानि बहुलक पता करना होता है।

अगर पदों का मान : 5, 9, 13, 17, 7, 11, 19, 15

आव त्ति 1, 7, 11, 5, 2, 9, 4, 8

सर्वाधिक आव त्ति 11 है जिसका पद मूल्य 13 है तो बहुलक 13 होगा।

2. समूह रीति द्वारा बहुलक का निर्धारण (Computation of Mode Through Grouping Method): जब आव त्तियों का क्रम अनियंत्रित होता है तब समूहन विधि द्वारा बहुलक का पता लगाया जाता है। इस विधि में आव त्तियों के विभिन्न समूह बना लिये जाते हैं और उसके बाद विश्लेषण सारणी बनाकर उनका बहुलक पता लगाया जाता है।

समूह रीति के लिए 6 कालम की सारणी बनानी पड़ती है और निम्न चरण का अनुसरण करना पड़ता है:

(i) पदमूल्यों को क्रम में लिखकर आव त्तियाँ प्रदर्शित कर दी जाती है।

(ii) दो-दो आव त्तियों को लिखकर उनका योग कालम 2 में लिखा जाता है।

(iii) प्रथम आव त्ति को छोड़कर दो दो आव त्तियों को लेकर उनका योग कालम 3 में लिखा जाता है।

(iv) तीन तीन आव त्तियों को लेकर उनका योग कालम 4 में लिखा जाता है।

(v) प्रथम आव त्ति को छोड़कर तीन-तीन आव त्तियों को लेकर उनका योग कालम 5 में लिखा जाता है।

(vi) प्रथम दो आव त्तियों को छोड़कर तीन-तीन आव त्तियों को लेकर योग करके कालम 6 में लिखा जाता है।

निम्न सारणी मे सामूहिक रीति से यह प्रदर्शित किया गया है:

उदाहरण समूहन सारणी

पदों के मान	आव त्ति *(f)*	2	3	4	5	6
5	1					
7	2	3				
9	7		9	10	18	
11	9	16				27
13	11		20			
15	8	19				
17	5			28	24	
19	4	9	13			17

समूहन रीति के सारणी बनाने के बाद प्रत्येक कालम से अधिकतम अंक के आधार पर विश्लेषण सारणी बनायी जाती है। प्रत्येक कालम के अधिकतम अंक से संबंधित आव त्ति के मूल्यों पर निशान लगाकर उसकी गिनती कर बहुलक का पता लगाया जाता है।

विश्लेषण सारणी

कालम नं.								
	5	**7**	**9**	**11**	**13**	**15**	**17**	**19**
1					1			
2					1	1		
3				1	1			
4				1	1	1		
5					1	1	1	
6			1	1	1			
आव त्तियों का योग			1	3	6	3	1	

विश्लेषण सारणी से स्पष्ट होता हे कि 6 आव त्ति सर्वाधिक है जिसका पदमूल्य 13 है। अतः बहुलक 13 होगा। याद रहे कि बहुलक की गणना चाहे निरीक्षण विधि से की जाए या समूहन विधि से, दोनों ही विधियों में उत्तर एक-सा ही होगा।

3. **तीन आव त्तियों की जोड़ विधि द्वारा बहुलक का निर्धारण** - दो पद-मूल्यों की आव त्ति एकसमान होने पर इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इसमें अधिकतम आव त्ति के आगे आने वाली एवं पीछे आने वाली आव त्तियों को जोड़ा जाता है। तीनों आव त्तियों को जोड़कर योगफल की तुलना करके सर्वाधिक योगफल ज्ञात किया जाता है। इस योगफल से सम्बन्धित मूल्य ही बहुलक होता है।

उदाहरण

पद का मूल्य : 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9,

आव त्ति : 3, 4, 5, 6, 7, 6, 7, 4, 4

अधिकतम आव त्ति 7 **दो बार है, अतः**

सम्भावित बहुलक मूल्य -	5	7
सम्भावित बहुलक मूल्य के आगे की आव त्ति	6	4
सम्भावित बहुलक मूल्य के पीछे की आव त्ति	6	6
सम्भावित बहुलक मूल्य के आव त्ति	7	7
	19	17

दोनों योगफलों में 19 **आव त्ति का पद मूल्य** 5 **है, अतः बहुलक** 5 **होगा।**

सतत् श्रेणी में बहुलक का निर्धारण

(Computation of Mode in Continuous Series)

सत्त श्रेणी में दो विधियों द्वारा बहुलक निर्धारित किया जाता है:

1. **निरीक्षण विधि द्वारा** (Observation Method)
2. **समूहन विधि द्वारा** (Grouping Method)

सत्त श्रेणी में बहुलक निर्धारण के लिए सर्वप्रथम निरीक्षण द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि सबसे अधिक आव त्ति वाला वर्ग कौन सा है, वही बहुलक वर्ग कहलाता है। सबसे अधिक आव त्ति वाले वर्ग एक से अधिक हों तो निरीक्षण द्वारा बहुलक ज्ञात नहीं होता, तब समूहन विधि द्वारा बहुलक वर्ग निश्चित किया जाता है। बहुलक वर्ग निश्चित हो जाने के बाद सूत्र द्वारा बहुलक निर्धारित किया जाता है:

सूत्र

$$z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2fi - f_0 - f_2} \times i$$

इस सूत्र में -

Z = **बहुलक**

L_1 =**बहुलक वर्ग की निम्न सीमा**

f_1 =**बहुलक वर्ग की आव त्ति**

f_0 =**बहुलक वर्ग से पहले वाले वर्ग की आव त्ति**

f_2 =**बहुलक वर्ग से बाद वाले वर्ग की आव त्ति**

i =**बहुलक वर्ग की निम्नतम व उच्चतम सीमाओं का अन्तर**

निरीक्षण विधि द्वारा बहुलक निर्धारण

(Computation of Mode through Observation Method)

उदाहरण - निम्न समंकों से भूयिष्ठक मजदूरी ज्ञात कीजिए।

मजदूरी (रूपयों में) : 0-10, 10-20, 20-30, 30-40,

मजदूरों की संख्या	:	3	8	10	15
		40-50,	50-60,	60-70	
		12	7	5	

मजदूरी(रूपयों में) (x)	मजदूरों की संख्या (f)
0-10	3
10-20	8
20-30	10*fo*
30-40	15 f
40-50	12 f_2
50-60	7
60-70	5

निरीक्षण से स्पष्ट है कि सबसे अधिक आव त्ति 15 है, अतः बहुलक वर्ग 30-40 हुआ।

सूत्रः $$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

$$Z = 30 + \frac{15-10}{2\times 15 - 10 - 12} \times 10$$

$$= 30 + \frac{5}{8} \times 10$$

$$= 30 + \frac{50}{8}$$

$$Z = 30 + 6.25$$

$$Z = 36.25$$

$$Z = L_1 + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

अतः बहुलक मजदूरी 36-25 रुपये होगी।

2. **समूहन विधि द्वारा बहुलक निर्धारण (Computation of Mode through Grouping)-** सर्वप्रथम खण्डित श्रेणी के समान समूहन व विश्लेषण सारणी द्वारा बहुलक वर्ग ज्ञात किया जाता है। फिर निम्न सूत्र द्वारा बहुलक निर्धारित किया जाता हैः

सूत्रः

मजदूरी (रु० में) x	**मजदूरों की संख्या** f (i)	(ii)	(iii)	(iv)	(v)	(vi)	**अधिकतम आव त्तियों की संख्या**	**योग**
0—10	3	} 11		} 21				
10—20	8		18		} 33		1	1
20—30	10	} 25				} 37		
30—40	15		} 27	} 34			|||	3
40—50	12	19			} 24		卌|	6
50—60	7		} 12				|||	3
60—70	5								1

इस तालिका से यह स्पष्ट है कि अधिकतम आव त्ति 6 है, उसका वर्ग 30-40 ही बहुलक वर्ग होगा।

सूत्र में प्रयुक्त चिह्नों का अर्थ पहले दिया जा चुका है।

$$= 30 + \frac{5}{30-22} \times 10$$

$$= 30 + \frac{50}{8}$$

अतः बहुलक मजदूरी 36.25 रुपये होगी।

बहुलक के गुण

(Merits of Mode)

इसके गुण निम्नलिखित हैं:

1. **सर्वाधिक प्रतिनिधित्व (Adequate Representation):** बहुलक सम्पूर्ण श्रेणी की सर्वाधिक आव त्ति पर निर्भर होने के कारण केन्द्रीय प्रव त्ति के माप की अन्य विधियों की तुलना में श्रेणी का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करता है।
2. **सरल एवं लोकप्रिय (Simple & Popular):** बहुलक को समझना एवं गणना करना सरल एवं आसान है।
3. **श्रेणी का महत्त्वपूर्ण माप**- श्रेणी के समस्त मूल्यों में से बहुलक वह अंक है जो सबसे अधिक मात्रा में एक समंकमाला में पाये जाने के कारण वास्तविक एवं महत्त्वपूर्ण माप है।
4. **चरम मूल्यों का न्यूनतम प्रभाव**- बहुलक पर श्रेणी की बड़ी संख्या या छोटी संख्या का कोई प्रभाव नह पड़ता। बहुलक तो आव त्ति पर निर्भर करता है।
5. **बिन्दुरेखीय विधि द्वारा निर्धारण**- बहुलक का निर्धारण बिन्दुरेखीय विधि एवं ग्राफ की सहायता से बहुत सरलता से किया जा सकता है।
6. **बड़े पैमाने के उत्पादन में महत्त्वपूर्ण**- बड़े पैमाने के उत्पादन वाले उत्पादकों के लिए बहुलक अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। उत्पादन के आकार को उत्पादक बहुलक की सहायता से ही निर्धारित करता है।

बहुलक के दोष

(Demerits of Mode)

इसके दोष इस प्रकार हैं:

1. **सभी मूल्यों पर आधारित नह** - बहुलक में न्यूनतम और अधिकतम पद-मूल्यों की अवहेलना की जाती है। यह तो केवल अधिकतम आव त्ति वाले पद-मूल्यों पर निर्भर करता है।
2. **बीजगणितीय विवेचन असम्भव है** - सभी मूल्यों पर आधारित न होने के कारण, बहुलक की बीजगणितीय विवेचना करना संभव नह होता।

3. **निश्चितता का अभाव** - कभी-कभी एक श्रेणी में दो या दो से अधिक भूयिष्ठक आ जाते हैं। ऐसी स्थिति में आव त्ति को देखकर भूयिष्ठक निर्धारित नह किया जा सकता।

4. **अनुपयुक्त माप** - कभी-कभी बहुलक द्वारा प्राप्त निष्कर्ष वास्तविकता से परे होते हैं, जैसे, 50 विद्यार्थियों में से 5 विद्यार्थियों के अंक आठ-आठ हैं तो बहुलक 8 होगा जो शेष 45 विद्यार्थियों का वास्तविक प्रतिनिधित्व नह करेगा।

बहुलक में उपर्युक्त कमियां होते हुए भी विभिन्न क्षेत्रों में आज इसका प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है, जैसे तापमान, वर्षा के आधार पर स्थानों का निर्धारण करने में बहुलक का प्रयोग किया जाता है।

माध्यिका: अर्थ, विधि एवं महत्व

(Median: Meaning, Procedure of its Calculation & Importance)

किसी समंक श्रेणी को आरोही या अवरोही क्रम में जमा कर मध्य पद मालूम किया जाता है। उस मध्य पद का मूल्य ही माध्यिका कहलाता है, जैसे परिवार के 11 सदस्यों को आयु के अनुसार खड़ा किया जाए तो छठे सदस्य की आयु माध्यिका कहलायेगी।

यदि समंकमाला में पदों की संख्या सम (even number) में है तो मध्य के पदो के मूल्यों को जोड़कर आधा करने से माध्यिका मूल्य ज्ञात होता है।

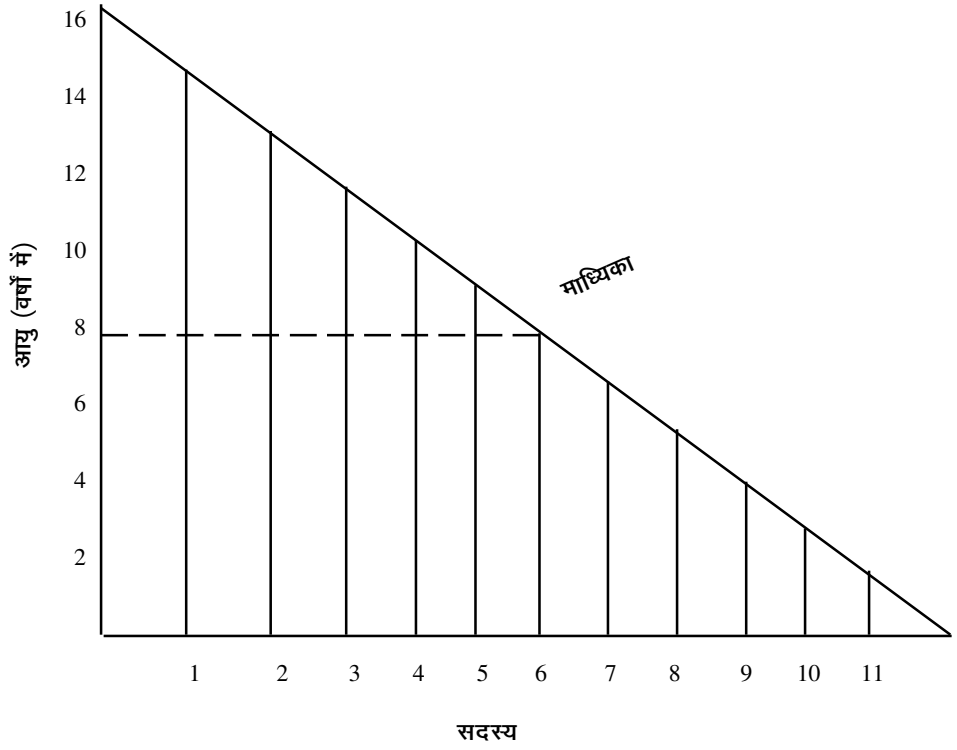

कार्नर (Corner) के अनुसार, "माध्यिका एक समंकमाला का वह पद-मूल्य है जो समूह को बराबर भागों में इस प्रकार बांटता है कि एक भाग के सारे मूल्य दूसरे भाग से कम होते हैं।"

अतः स्पष्ट है कि माध्यिका वह केन्द्रीय मूल्य है जो क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित समंकमाला को दो समान भागों में विभाजित करता है।

माध्यिका की विशेषताएं

(Characteristics of Median)

1. माध्यिका समंकमाला के केन्द्र में स्थित एक विशेष पद-मूल्य होता है।
2. माध्यिका सम्पूर्ण समंक श्रेणी को दो बराबर-बराबर भागों में विभाजित करती है।

3. माध्यिका ज्ञात करने के लिए पदों को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना पड़ता है।

4. माध्यिका को प्रायः पद-मूल्यों की क्रमिक व द्धि पर ही आधारित किया जाता है।

माध्यिका का निर्धारण

(Computation of Median)

विभिन्न प्रकार की समंकमालाओं से माध्यिका निकालने की विधियां इस प्रकार हैं:

1. **व्यक्तिगत श्रेणी में माध्यिका निकालना (Calculation of Median in Individual Series):**

(i) सबसे पहले श्रेणी को आरोही अथवा अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है।

(ii) श्रेणी को व्यवस्थित करने के बाद निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right)\text{th item}$$

अथवा

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right)\text{वें पद का मान}$$

(iii) यदि श्रेणी में कुल पदों की संख्या सम (even number) हो तो निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है- उदाहरण के रूप में, यदि 8 सदस्यों की आयु का माध्यिका ज्ञात करना है तो

M = Size of (N + 1)th item

$$M = \text{Size of } \left(\frac{8+1}{2}\right)\text{th item}$$

M = 4.5th item

Size of 4.5th item =

द्वारा माध्यिका ज्ञात की जाती है।

उदाहरण - विषम संख्या से माध्यिका का पता चलाना हो तो निम्न विधि का प्रयोग किया जाता है:

सदस्य	:	1	2	3	4	5	6	7
आयु (वर्षों में)	:	15	17	23	19	15	14	13

हल-

सदस्य	आयु (वर्षों में)
1	13
2	14
3	15
4	15
5	17
6	19
7	23
N = 7	

M = Size of th item

जहाँ, M = Median (**माध्यिका**)

N = Number of items

M = Size of $\left(\frac{7+1}{2}\right)$ th item

M = Size of = 4th item

4वें पद का मूल्य 15 **है, अतः माध्यिका आयु** 15 **वर्ष होगी।**

उदाहरण - सम संख्या से माध्यिका ज्ञात करना हो तो निम्न विधि का प्रयोग किया जाता है:

सदस्य :	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आयु (वर्षों में) :	10	12	24	42	29	13	18	54	48	18

हल-

सदस्य	**आयु** (वर्षों में)
1	10
2	12
3	13
4	18
5	18
6	24
7	29
8	42
9	48
10	54

$$\left(\frac{N+1}{2}\right) \quad \frac{Size\ of\ 5th\ item + Size\ of\ 6th\ item}{2}$$

M = Size of th item

M = Size of $\left(\frac{10+1}{2}\right)$ th item

M = Size of = 5.5th item

Size of 5.5th item =

=

माध्यिका आयु 21 वर्ष होगी।

2. **खण्डित श्रेणी में माध्यिका का निर्धारण (Calculation in Discrete Series)**

(i) सबसे पहले यह देखा जाता है कि खण्डित श्रेणी व्यवस्थित क्रम में है या नह , यदि वह अव्यवस्थित हो तो श्रेणी को व्यवस्थित किया जाता है।

(ii) श्रेणी की आव त्तियों की संचयी आव त्ति ज्ञात करते हैं।

(iii) निम्नांकित सूत्र का प्रयोग किया जाता हैः

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right)\text{th item}$$

इस प्रकार जो पद आता है वह जिस संचयी आव त्ति में स्थित होता है, उस संचयी आव त्ति का पद मूल्य माध्यिका कहलाता है।

उदाहरण - निम्न श्रेणी की माध्यिका ज्ञात करना हो तो निम्न विधि का प्रयोग किया जाता हैः

मूल्य (रुपयों में)	:	44	45	46	47	48	49	50	51
दुकानें	:	9	10	21	27	21	6	4	2

मूल्य	**दुकानें**	**संचयी आव त्ति**
x	*f*	*fx*
44	9	9
45	10	19
46	21	40
47	27	67
48	21	88
49	6	94
50	4	98
51	2	100
	N = 100	

$$M = \text{Size of } \left(\frac{N+1}{2}\right)\text{th item}$$

$$M = \text{Size of } \left(\frac{100+1}{2}\right)\text{th item}$$

M = Size of = 50.5th item

50.5वां पद संचयी आव त्ति 67 में शामिल है। 67 संचयी आव त्ति का पद मूल्य 47 है तो माध्यिका = 47 रुपये विक्रय मूल्य होगा।

3. **सतत श्रेणी में माध्यिका का निर्धारण (Computation of Median in constant series)**

(i) सतत श्रेणी में विभिन्न पदों की आव त्तियों को संचयी आव त्तियों में बदल लेते हैं।

(ii) th item द्वारा माध्यिका वर्ग ज्ञात करने के बाद निम्न सूत्र की सहायता से माध्यिका ज्ञात की जाती है।

M =

जहाँ, M = माध्यिका

f = माध्यिका वर्ग की आव त्ति

c = माध्यिका वर्ग से पहले वाले वर्ग की संचयी आव त्ति

m = $\frac{n}{2}$ से निकाला गया पद

L_1 = माध्यिका वर्ग की निम्नतम सीमा

L_2 = माध्यिका वर्ग की उच्चतम सीमा

i = माध्यिका वर्ग का वर्गान्तर

उदाहरण - सतत श्रेणी से माध्यिका ज्ञात करना हो तो निम्न विधि का प्रयोग किया जाता है।

आय (रु0 में) :	100-200	200-300	300-400	400-500	500-600
व्यक्तियों की सं0 :	15	33	63	83	100

आय (रुपयों में)	व्यक्तियों की संख्या	संचयी आव त्ति
x	f	cf
100-200	15	15
200-300	33	48 (15+33)
300-400	63	111 (48+63)
400-500	83	194 (111+83)
500-600	100	294 (194+100)
	N = 294	

M = th item

M = = 147th item

147वां पद संचयी आव त्ति 194 में स्थित है जिसका वर्गान्तर 400-500 है। यही 400-500 माध्यिका वर्गान्तर कहलाता है।

सूत्रः

M =

$$M = 400 + \frac{500 - 400}{83}(147\text{-}111)$$

M = 400 + (36)

M = 400 +

M = 400 + 43.37 = 443.37

अतः आय की माध्यिका 443.37 **रुपये होगी।**

उदाहरण -

मजदूरी	:	40-50	30-40	20-30	10-20	0-10
व्यक्तियों की सं0	:	7	14	13	11	5

मजदूरी	**व्यक्तियों की संख्या**	**संचयी आव त्ति**
x	*f*	*cf*
40-50	7	7
30-40	14	21
20-30	13	34
10-20	11	45
0-10	5	50
	N = 50	

M = Size of th item

M = Size of = 25th item

25**वां पद** 34 **संचयी आव त्ति में शामिल है तो माध्यिका वर्ग** 20-30 **हुआ।**

M =

$$M = 30 - \frac{30 - 20}{13}(25 - 21)$$

$$M = 30 - \frac{10}{13}(4)$$

$$M = 30 - \frac{40}{13}$$

$$M = 30 - 3.08$$

$$M = 26.92 \text{ रुपये}$$

अतः माध्यिका मजदूरी 26.92 रुपये होगी।

माध्यिका के गुण

(Merits of Median)

1. **सरलता** - माध्यिका को समझना व गणना करना बहुत आसान है, क्योंकि व्यवस्थित श्रेणी में बीचोबीच माध्यिका स्थित होती है।
2. **स्पष्टता** - प्रत्येक समंकमाला में माध्यिका मूल्य स्पष्टता से केवल पदों की संख्या मालूम होने पर ज्ञात किया जा सकता हैं
3. **बिन्दुरेखीय विवेचन** - माध्यिका का निर्धारण बिन्दुरेखीय पद्धति से भी किया जा सकता है।
4. **चरम मूल्यों का न्यूनतम प्रभाव** - माध्यिका पर श्रेणी की बहुत बड़ी संख्या या छोटी संख्या का अनुचित प्रभाव नह पड़ता है।
5. **गुणात्मक तथ्यों के अध्ययन में सहायक** - गुणात्मक तथ्यों, जैसे स्वास्थ्य, ईमानदारी, बौद्धिक स्तर आदि का अध्ययन करने में माध्यिका द्वारा प्रत्यक्ष माप सम्भव होने के कारण, यह सबसे उपयुक्त माध्य है।
6. **उचित प्रतिनिधित्व** - माध्यिका मान में सभी पदों पर आधारित होने के कारण उचित प्रतिनिधित्व का गुण पाया जाता है।
7. सामाजिक समस्याओं, जैसे बेकारी, निर्धनता, जनसंख्या समस्या, आदि के अध्ययन में भी माध्यिका का प्रयोग किया जाता है।

माध्यिका के दोष

(Demerits of Median)

1. **समंकों को क्रम में जमाना आवश्यक** - केवल माध्यिका में ही सम्पूर्ण श्रेणी को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करना आवश्यक है अन्यथा माध्यिका मूल्य सही नह होगा।
2. **उचित प्रतिनिधित्व नह** - माध्यिका श्रेणी के सभी पदों पर आधारित नह होने के कारण इसे उचित प्रतिनिधित्वपूर्ण माप नह कहा जा सकता।
3. **बीजगणितीय विवेचन असम्भव** - माध्यिका का बीजगणितीय विवेचन करना सम्भव नह है, जैसे विभिन्न श्रेणियों की केवल माध्यिका ज्ञात हो तो उनकी सम्मिलित माध्यिका ज्ञात नह की जा सकती।

विचलन का माप

(Measures of Variation)

सांख्यिकी में विचलन को एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा के रूप में देखा जाता है। विचलन शब्द का सम्बोधन अंग्रेजी के निम्न शब्दों

द्वारा भी किया जाता है, यह शब्द है डिस्पर्शन (Dispersion, Scatteration, Spread and Deviation). इस इकाई में माध्य बहुलक तथा मध्यांक का विस्तार से वर्णन किया है और इनके वर्णन से एक सम्पूर्ण श्रेणी की केन्द्रीय प्रव त्ति का कैसे पता लगाया जा सकता है, उस विधि को भी दर्शाया गया है, लेकिन इसके बावजूद भी विभिन्न व्यक्तिगत मानों का औसत क्या है और श्रेणी की रचना तथा स्वरूप क्या है, यह पता नहीं लग पाता निःसन्देह यह कहा जा सकता है कि अंकों की गणना में कई बार ऐसे स्थल आते हैं जब निष्कर्ष भ्रम पैदा करते हैं अगर किसी तालाब की औसतन गहराई 4 फुट हो और किसी समूह को यह तालाब पार करनी हो जहाँ सभी सदस्यों की ऊँचाई 5 फीट से ऊपर हो तो यह कहा जा सकता है कि उस समूह के सभी सदस्य तालाब को पार कर सकते हैं। परन्तु वास्तव में विचार किया जाए तो ऐसी स्थिति भ्रामक भी हो सकती है, क्योंकि उसी तालाब में कई स्थान ऐसे भी हो सकते हैं, जहाँ तालाब की गहराई 6 फुट हो सकती है और कहीं यह 3 फुट भी हो सकती है। ऐसी स्थिति में तालाब को पार करने वाले समूह के वो सदस्य जिनकी ऊँचाई 6 फीट से कम हो वह सभी डूब भी सकते हैं। ऐसी स्थिति में केवल माध्य को प्राप्त करके ही हम सही निष्कर्ष नहीं निकाल सकते। उसका सही अनुमान उस तालाब की अधिकतम गहराई और उसकी औसत गहराई में अंतर करके ही पता लगाया जा सकता है। इससे यह स्पष्ट है कि पर्याप्त जानकारी के लिए किसी पदमाला का माध्य जानना ही आवश्यक नहीं है बल्कि विभिन्न व्यक्तिगत माध्यों का उस माध्य से औसत अंतर जानना भी आवश्यक है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि श्रेणी का प्रत्येक मध्य, माध्य से कितनी दूरी पर या कितना बड़ा या छोटा है, यह जानना आवश्यक है। इसलिए विचलन की परिभाषा देते हुए बाउले ने कहा है कि "यह अपकिरण (Dispersion) मदों (Items) के विचलन का माप है (Measures of Central Tendency) एक आदर्श विचलन की निम्न विशेषताएँ मानी जाती है।

1. समझने में सरल
2. निर्धारण में सरल
3. श्रेणी के सभी मूल्यों पर आधारित
4. निदर्शन के परिवर्तन का न्यूनतम प्रभाव
5. स्पष्ट परिभाषा
6. बीजगणितीय विवेचन संभव

विचलन के महत्त्व की चर्चा करते हुए पी० वी० यंग ने कहा है कि मूल्यों के वितरण में अक्सर यह देखा जाता है कि उन सभी का औसत लगभग एक है परंतु उन पदमूल्यों में काफी अंतर पाया जाता है। कुछ वितरण में कुछ पदमूल्य ऐसे भी हो सकते हैं जब औसत उन पदमूल्यों के नजदीक हो और दूसरों में ये काफी बिखरे हों। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि व्यक्तिगत मूल्यों का निर्धारण माध्य प्रव त्तियों के दोनों तरफ हो सके। यहाँ पर हम माध्य प्रव त्तियों की तीन विधियों का विस्तार से वर्णन करेंगे:

1. प्रसार क्षेत्र या परिसर (Range)
2. चतुर्थांश विचलन (Quartile Deviation)
3. औसत या मध्यमान विचलन (Average or Mean Deviation)
4. मानक विचलन (Standard Deviation)

परिसर या विस्तार

(Range)

किसी पदमाला के सबसे बड़े व सबसे छोटे मान के अंतर को विस्तार कहते हैं, यह विचलन ज्ञात करने की सबसे सरल विधि है। परिसर की गणना निम्नलिखित प्रकार से की जाती है:

1. श्रेणी का अधिकतम मान और न्यूनतम मान निकाला जाता है। अखण्डित श्रेणी में न्यूनतम वर्ग की निचली सीमा का न्यूनतम मान और अधिकतम वर्ग की उच्च सीमा को अधिकतम मान माना जाता है।

2. परिसर निकालने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है:

R = L-S

R = विस्तार (Range)

L = श्रेणी का उच्चतम मूल्य (Largest value)

S = श्रेणी का निम्नतम मूल्य (Smallest value)

उदाहरण के लिए यह मान ले कि दस छात्रों के प्राप्तांक इस प्रकार हैं- 90, 60, 55, 52, 50, 48, 45, 44, 43 और 40 इनमें उच्चतम मूल्य 90 और निम्न मूल्य 40 है, अतः उपर्युक्त सूत्र के अनुसार इसका विस्तार क्षेत्र 90-40 = 50 होगा।

चतुर्थक विचलन

किसी भी श्रेणी के त तीय व प्रथम चतुर्थकों के आधे को चतुर्थक विचलन (Quartile Range) या अन्तर चतुर्थक विस्तार या परिसर (Semi-inter Quartile Range) कहा जाता है। चतुर्थक विचलन को पता करने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है:

$$Q - D = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

Q - D = चतुर्थक-विचलन (Quartile Deviation)

Q_1 = प्रथम चतुर्थक (First Quartile)

Q_3 = त तीय चतुर्थक (Third Quartile)

चतुर्थक-विचलन गुणक (Coefficient of Quartile Deviation) चतुर्थक-विचलन, अपिकरण (variation) का निरपेक्ष मान होता है। इसका सापेक्ष माप चतुर्थक-विचलन गुणक कहलाता है। इसे ज्ञात करने के लिए चतुर्थक-विचलन के निरपेक्ष माप की दोनों चतुर्थकों के माध्य से भाग दे दिया जाता है।

$$\text{Coeff. of } Q.D = \frac{\frac{Q_3 - Q_1}{2}}{\frac{Q_3 + Q_1}{2}} = \frac{Q_3 - Q1}{Q_3 + Q_1}$$

चतुर्थक-विचलन तथा चतुर्थक-विचलन गुणक का मूल्य ज्ञात करने के लिए प्रथम चतुर्थक तथा त तीय चतुर्थक का मूल्य ज्ञात करना पड़ता है, फिर उपयुक्त सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

उदाहरण: अगर निम्न पदमूल्यों से चतुर्थक-विचलन ज्ञात करना हो:

पदमूल्य : 170, 82, 110, 100, 150, 120, 200, 116, 250

निम्न विधि का प्रयोग करेंगे। सूत्र:

$$\text{Coef. of } Q - D = \frac{Q_3 - Q_1}{Q_3 + Q_1}$$

अर्थात् Q_1 और Q_3 का मूल्य निकालने से चतुर्थक विचलन गुणक की गणना की जा सकती है। Q_1 और Q_2 का मूल्य ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम पदमूल्यों को आरोही (Ascending order) में व्यवस्थित किया जाता है जैसे:

82	150
100	170
110	200
116	250
120	

Q_1 = Size of $\left(\frac{N+1}{4}\right)$ th item = $Q_1 = \frac{9+1}{4} = 2.5^{th}$ item

Size of 2.5th item =

Q_2 = Size of $3\left(\frac{N+1}{4}\right)$th item = $\frac{3\times 10}{4} = 7.5$ th item

Size of 7.5th item = $\frac{7\text{th item} + 8\text{th item}}{2} = \frac{170+200}{2} = 185$

Q_3 = 185; Q1 = 105

Coef. of Q.D = $\frac{185-105}{185+105} = \frac{80}{290} = 0.276$

परिसर के गुण एवं दोष

गुण

सांख्यिकी में परिसर की कई उपयोगिताएं हैं जो निम्नलिखित हैं:

1. यह विचलन का सबसे सरल और सामान्य मापक है।
2. जब विचलन का शीघ्रता से अनुमान लगाना होता है तब इसका प्रयोग किया जाता है।
3. यहां केवल उच्चतम एवं निम्नतम मूल्य को ही ढूंढना पड़ता है जो सरलता तथा शीघ्रता से ज्ञात किया जा सकता है।

दोष

1. परिसर के प्रयोग में विश्वसनीयता की कमी होती है क्योंकि इसमें केवल पदमाला के उच्चतम एवं न्यूनतम मूल्यों को ही महत्त्व दिया जाता है।
2. इसमें विचलन का यथार्थ माप नह हो पाता है।
3. परिसर को इसकी अशुद्धता के कारण विचलन मापन का एक मोटा साधन (crude method) कहा जाता है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि परिसर का सांख्यिकी में प्रभावी तरीके से प्रयोग नह किया जा सकता परन्तु अगर सम्पूर्ण पद मूल्यों का किसी श्रेणी में मान प्राप्त करना हो तब परिसर का प्रयोग लाभदायी हो सकता है अगर पद मूल्यों की संख्या ज्यादा बड़ी ना हो।

माध्य विचलन या औसत विचलन
(Mean Deviation or Average Deviation)

माध्य विचलन को औसत विचलन भी कहा जाता है क्योंकि यह किसी पदमाला में सभी विभिन्न प्राप्तांकों का उनके मध्य मान या केन्द्रीय प्रव त्तियों से विचलनों का औसत होता है। मध्यमान को ही केन्द्रीय प्रव त्ति माना जाता है यद्यपि कभी-कभी मध्यांक तथा बहुलक का भी प्रयोग होता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि माध्य विचलन में एक मुख्य औसत निकालने का प्रयास किया जाता है। गैरेट ने औसत विचलन की परिभाषा देते हुए यह लिखा है कि "मध्यमान विचलन किसी पदमाला में सब विभिन्न प्राप्तांकों का उनके मध्यमान से विचलनों का औसत होता है।

माध्य विचलन की विशेषताएँ:

माध्य विचलन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1. यह गणितीय विधि से निकाला जाता है जिसमें श्रेणी की प्रत्येक इकाई को आधार मानते हैं।
2. विचलन माध्य से निकाला जाता है, जो समान्तर माध्य, मध्यांक और बहुलक हो सकता है। समान्तर माध्य से निकाले गए विचलन को माध्य विचलन कहते हैं और मध्यांक से निकाले गए विचलन को विचलन मध्यांक और इसी प्रकार बहुलक से निकाले गए विचलन को बहुलक से माध्य विचलन कहते हैं।
3. विचलनों का माध्य निकालने के लिए समान्तर माध्य का ही प्रयोग होता है।

माध्य विचलन की गणना

(Computation of Mean Deviation)

माध्य विचलन का निर्धारण विभिन्न श्रेणियों में अलग-अलग ढ़ंग से किया जाता है। माध्य विचलन के निर्धारण का निम्न सूत्र है:

साधारण श्रेणी में माध्य विचलन निकालने का सूत्र:

$$\text{M.D} = \frac{\Sigma d}{N}$$

d = माध्य विचलन - माध्य या मध्यांक से विचलन (+ या - चिन्ह को छोड़ते हुए)

N = पदों का योग

विधि

1. उस माध्य का परिगणन किया जाता है जिससे माध्य विचलन निकालना है- अधिकतर मध्यांक का प्रयोग किया जाता है।
2. घन + और ऋण - चिन्हों को छोड़ते हुए मध्यांक या अन्य माध्य से विभिन्न मूल्यों के विचलन निकाले जाते हैं।
3. इन विचलनों का जोड़ (Σd) प्राप्त किया जाता है।
4. विचलनों के योग को मदों की संख्या से भाग देते हैं। प्राप्त भागफल माध्य विचलन होता है।

माध्य विचलन गुणक निकालने के लिए माध्य-विचलन को सम्बन्धित माध्य से भाग दे दिया जाता है।

उदाहरण:

निम्नलिखित प्राप्तांकों के माध्य को आधार मानते हुए माध्य विचलन इस प्रकार से ज्ञात किया जा सकता है:

6, 8, 10, 12, 14

इन प्राप्तांकों का माध्य (Mean) M = $\frac{6+8+10+12+14}{5} = \frac{50}{5} = 10$

माध्य = 10 (M = 10)

माध्य विचलन निकालने के लिए हम इन प्राप्तांकों को निम्नांकित तालिका का रूप दे सकते हैं:

प्राप्तांक (Scores)	माध्य (Mean)	विचलन (d) (Deviation)
6	10	– 4
8	10	– 2
10	10	0
12	10	+ 2
14	10	+4
N = 5		$\Sigma d = 12$

$\frac{\Sigma fd}{N}$

$$MD = \frac{\Sigma d}{N} = \frac{12}{5}$$

MD = 2.4 अभीष्ट उत्तर।

इसी प्रकार व्यक्तिगत श्रेणी में (साधारण श्रेणी) उपरोक्त सूत्र का प्रयोग करते हुए बहुलक और मध्यांक को आधार मानकर माध्य विचलन ज्ञात किया जा सकता है।

खंण्डित श्रेणी और सतत् श्रेणी में माध्य विचलन ज्ञात करने का सूत्र निम्न है:

MD =

$\frac{}{N}$

उपरोक्त सूत्र में-

MD = माध्य विचलन

Σ = योग

f = पदों की आव त्तियां

d = माध्य से प्रत्येक पद का विचलन अर्थात् माध्य और प्रत्येक पद के बीच का अन्तर।

N = आव त्तियों का कुल योग।

सतत् श्रेणी में भी उपरोक्त सूत्र का प्रयोग करते हुए माध्य विचलन ज्ञात किया जाता है परन्तु ऐसी स्थिति में पहले प्रत्येक वर्गान्तर का मध्य बिन्दु ज्ञात कर लिया जाता है। खंडित एवं सतत् श्रेणी में भी बहुलक, माध्य और मध्यांक को आधार मानते हुए माध्य विचलन की गणना की जाती है।

सरल श्रेणी में माध्य विचलन निर्धारण की विधि मध्यंका के द्वारा

इसके लिए पदमूल्यों को बढ़ते व घटते क्रम में व्यवस्थित करते हैं तथा प्राप्तांकों से इसका मध्यंका निकाला जाता है। उसके बाद मध्यंका से उसका विचलन ज्ञात किया जाता है। निम्न उदाहरण द्वारा इसे दर्शाया गया है:

सूत्रः

अतः मध्यंका क्रम संख्या 3 के सामने अर्थात् 10 है।

क्रम संख्या	प्राप्तांक	d
1	6	4
2	8	2
3	**10**	0
4	12	2
5	14	4
N = 5		$\Sigma dm = 12$

$$MD = \frac{\Sigma dm}{N} = \frac{12}{5} = 2.4$$

खण्डित श्रेणी में माध्य विचलन निर्धारण की विधि

इस श्रेणी में माध्य विचलन मध्य, मध्यंका तथा बहुलक के द्वारा निकाला जा सकता है।

उदाहरण: निम्नलिखित आव त्ति के आधार पर माध्य विचलन इस प्रकार निकाला जा सकता है।

पदमूल्य x	आव त्ति f	fx	d	fd
3	2	6	–4.49	8.98
5	7	35	–2.49	17.43
7	10	70	–.49	4.90
9	9	81	+2.49	22.41
11	5	55	+3.51	17.55
	N = 33	Σfx = 247		Σfd = 71.27

$$\frac{\Sigma fd}{N} = \frac{71.27}{33} = 2.16$$

$$\text{Mean} = \frac{\Sigma fx}{N}$$

$$\text{Mean } \frac{\Sigma fx}{N} = \frac{247}{33} = 7.49$$

यहाँ

Σ = योग

f = आव त्ति

x = पदमूल्य

N = आव त्ति का योग

माध्य विचलन M.D. =

माध्य के द्वारा माध्य विचलन निर्धारण

इसके लिए सर्वप्रथम प्रत्यक्ष विधि द्वारा माध्य निकाला जाता है। इसके बाद माध्य से विचलन प्राप्त किया जाता है।

उपर्युक्त दी गई सारणी को आधार मानकर माध्य विचलन मध्यंका द्वारा निकालने की निम्न विधि का प्रयोग किया जाता है:

पदमूल्य x	आव त्ति f	cf	dm	fdm
3	2	2	4	8
5	7	9	2	14
7	10	19	0	0
9	9	28	2	18
11	5	33	4	20
	N=33			Σfdm=60

मध्यंका $= \frac{N+1}{2} =$

N = 33

cf = संचायिका आव त्ति

उपर्युक्त सारणी में संचयिका आव त्ति रखने पर पदमूल्य 7 मध्यंका आता है।

$$MD = \frac{\Sigma fd}{N} = \frac{60}{33} = 1.8$$

इसी प्रकार उपर्युक्त सारणी को आधार बनाकर माध्य विचलन बहुलक के द्वारा निकालने की निम्न विधि का प्रयोग किया जाता है:

पदमूल्य x	आव त्ति f	dz	fdz
3	2	4	8
5	7	2	14
7	**10**	0	0
9	9	2	18
11	5	4	20
	N=33		Σfdz=60

यहाँ पर अधिकांश आव त्ति 10 है इसलिए उक्त सारणी में 10 के सामने वाली पदमूल्य 7 वो बहुलक कहा जायेगा। यहाँ स्मरण रखने योग्य बात यह है कि जब आव त्तियों का आपसी अंतर नगण्य हो तब बहुलक ज्ञात करने के लिए आव त्तियों को 6 कालम में वर्गीकृत कर बहुलक निकाला जाता है।

सूत्रः $\text{MD} = \frac{\Sigma fdz}{N} = \frac{60}{33} = 1.8$

z = बहुलक से विचलन

सतत् श्रेणी

(Continuous Series)

इसी प्रकार सतत् श्रेणी या अखंडित श्रेणी में भी माध्य विचलन, माध्य, मध्यंका तथा बहुलक से ज्ञात किया जाता है।

उदाहरणः निम्न सारणी के द्वारा माध्य विचलन ज्ञात किया जा सकता है। यहाँ पर माध्य को आधार बनाकर माध्य विचलन निकालने की विधि को दर्शाया गया हैः

प्राप्तांकों x	M	आवृत्ति (f)	dx	fdx	d = 25	fd
0–10	5	2	–2	–4	20	40
10–20	15	7	–1	–7	10	70
20–30	25	10	0	0	0	0
30–40	35	5	+1	5	10	50
40–50	45	3	+2	6	20	60
		N = 27			Σfdx = 0	

$$\frac{\Sigma fd}{N} = \frac{220}{27} = 8.14$$

$$\text{Mean} = \text{A} + \frac{\Sigma dx}{N} \text{X} i \quad = 25 + \frac{0}{27} \times 10 = 25$$

MD = 8.14

सतत् श्रेणी में माध्य विचलन को मध्यंका तथा बहुलक से भी ज्ञात किया जा सकता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि यहाँ पर निम्न सूत्रों का प्रयोग होता हैः

मध्यंका के द्वारा निम्न सूत्र का प्रयोग होता हैः

$$\text{MD} = \frac{\Sigma fdz}{N}$$

बहुलक के द्वारा निम्न सूत्र अपनाये जाते हैंः

$$\text{MD} = \frac{\Sigma fdz}{N}$$

माध्य विचलन के गुण एवं दोष - माध्य विचलन के निम्नलिखित गुण और दोष माने जाते हैंः

गुणः

1. माध्य विचलन श्रेणी के सभी मूल्यों पर आधारित होता है।
2. इसका निर्धारण मानक विचलन के अपेक्षा सरल होता है।
3. इस विचलन पर चरम मदों का न्यूनतम प्रभाव पड़ता है।

4. इसकी गणना किसी भी माध्य से अर्थात् मध्यक, मध्यांक से हो सकती है, परन्तु मध्यांक का प्रयोग अन्य माध्यों से श्रेष्ठ माना जाता है।

दोषः

1. माध्य विचलन की सबसे बड़ी सीमा यह है कि यहाँ पर विचलन निर्धारण करते समय बीजगणितीय धन (+) और ऋण (-) को छोड़ दिया जाता है। सभी विचलनों को धनात्मक माना जाता है। चिन्हों को नजरअंदाज करने पर यह माप गणितीय द ष्टिकोण से अशुद्ध और अवैज्ञानिक हो जाता है।

2. इस विचलन का बीजगणितीय विवरण संभव नहीं है।

3. माध्य विचलन की विश्वसनीयता सदैव संदिग्ध रहती है। क्योकि मध्यंका के अनिश्चित होने के कारण उससे विचलन निकालना ही उपयुक्त नहीं होता है जबकि मध्यंका चरम सीमाओं से अधिक प्रभावित हो सकता है। उपर्युक्त सीमाओं के कारण ही सांख्यिकी में इसका अधिक प्रयोग नहीं होता है।

माध्य विचलन के अर्थ, परिभाषा, विशेषताओं एवं निर्धारण के विधि का तीनों श्रेणियों में विस्तार से वर्णन करने के पश्चात् अब हम मानक विचलन की अवधारणा का विस्तार से वर्णन करेंगें।

मानक विचलन

(Standard Deviation)

माध्य विचलन की तरह ही मानक विचलन भी माध्य विचलन के एक इकाई का प्रतिनिधित्व करता है यह माध्य विचलन से भिन्न इस रूप में है कि इसमें विचलन ज्ञात करते वक्त योग निकालने से पहले पदमुल्यों का वर्गमूल निकालते हैं। मानक विचलन का निर्धारण माध्य से होता है जबकि माध्य विचलन का निर्धारण माध्य, मध्यंका तथा कभी-कभी बहुलक से भी होता है।

विचलन के मापों में मानक विचलन का सांख्यिकी में सबसे अधिक प्रयोग होता है। मानक विचलन के द्वारा विचलन मापन की विभिन्न विधियों के दोषों को दूर किया जाता है। मानक विचलन श्रेणी के सभी मुल्यों पर आधारित होता है इसके निर्धारण में धन (+) तथा ऋण (-) चिन्हों को छोड़ा नही जाता। इसके अलावा विचलन सदैव समान्तर माध्य से ही लिए जाते हैं क्योंकि उसे ही केन्द्रीय प्रव ति का सर्वश्रेष्ठ माप माना जाता है। रीशमैन ने मानक विचलन की परिभाषा देते हुए इसे "औसत विचलन का वर्गमूल कहा है। यह वितरण के औसत से सब विचलनों के वर्गों के वर्गमूल का औसत होता है।"

मानक विचलन की गणना

मानक विचलन की गणना करने के लिए विभिन्न सूत्रों का प्रयोग किया जाता है। सूत्रों का प्रयोग इस बात पर निर्भर करता है कि पदमाला व्यक्तिगत श्रेणी में है या खण्डित और सतत् व अखिण्डत श्रेणी में है। प्रत्येक श्रेंणियों में मानक विचलन ज्ञात करने की दो रीतियां हैं प्रत्यक्ष विधि (Direct Method) और लघु विधि (Shortcut Method).

व्यक्तिगत श्रेणी में मानक विचलन का निर्धारण

(Calculation of Standard Deviation in Individual Series)

प्रत्यक्ष विधि (Direct Method) - व्यक्तिगत श्रेणी में प्रत्यक्ष विधि द्वारा मानक विचलन ज्ञात करने में निम्न सूत्र का प्रयोग होता है।

मानक विचलन $\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}}$

उपरोक्त सूत्र में Σ= कुल योग

σ = प्रमाप विचलन

d^2 = समान्तर माध्य के प्रत्येक पद के विचलन का वर्ग

N= पदों की संख्या

उदाहरणः

निम्नलिखित श्रेणी का मानक विचलन प्रत्यक्ष विधि द्वारा निम्न प्रकार से ज्ञात किया जाता सकता है

पद मूल्य : 15, 20, 17, 18, 25, 22, 24, 26, 30, 23

पद मूल्य (x)	समान्तर माध्य से विचलन (d) = 21	विचलन का वर्ग (d^2)
15	-6	36
20	-1	1
17	-4	16
18	-3	9
25	+4	16
22	+1	1
24	+3	9
26	+5	25
30	+9	81
23	+2	4
		$\Sigma d^2 = 198$

$\frac{\Sigma X}{N} = \frac{210}{10} = 21$

समान्तर माध्य (M)=

M= 21

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}} = \sqrt{\frac{198}{10}} = \sqrt{19.8}$$

σ = 4.45 लगभग

लघु विधि द्वारा मानक विचलन का निर्धारण (Short-cut Method): व्यक्तिगत श्रेणी में संक्षिप्त विधि द्वारा मानक विचलन निकालने का निम्न सूत्र हैः

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N} - \left(\frac{\Sigma d}{N}\right)^2}$$

उपरोक्त सूत्र में

d = मूल्यों का कल्पित माध्य से विचलन

N= पदों की संख्या

d^2=समान्तर माध्य के प्रत्येक पद के विचलन का वर्ग

Σ =कुल योग

उदाहरणः

निम्नलिखित श्रेणी का मानक विचलन संक्षिप्त विधि द्वारा निम्न प्रकार से ज्ञात किया जा सकता हैः

पद मूल्य : 15, 20, 17, 18, 25, 22, 24, 26, 30, 23

इस विधि द्वारा सबसे पहले कल्पित माध्य को निर्धारित किया जाता है।

यहां पर पद मूल्य का कल्पित माध्य (A) 22 **है।**

पद मूल्य (x)	**कल्पित माध्य (A) = 22 से विचलन d= (x-A)**	**विचलन का वर्ग d^2**
15	-7	49
16	-6	36
17	-5	25
20	-2	4
22	0	0
23	1	1
24	2	4
25	3	9
26	4	16
30	8	64
N= 10		

S.D. = (σ)

यहाँ

$\Sigma d^2 = 208,\ \Sigma d = -2, N = 10$

$$\sigma = \sqrt{\frac{208}{10} - \left(\frac{-2}{10}\right)^2}$$

$\sigma = \sqrt{20.8 - 0.04} = \sqrt{20.76}$

σ = 4.45 **लगभग**

खंडित श्रेणी में मानक विचलन का निर्धारण (Calculation of Standard Deviation in Discrete Series): खंडित श्रेणी में भी मानक विचलन का निर्धारण दो विधियों द्वारा ज्ञात किया जाता है-प्रत्यक्ष विधि एवं लधु विधि-परन्तु व्यवहार में संक्षिप्त विधि का प्रयोग ही ज्यादातर किया जाता है

प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)

सूत्रः

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}$$

σ = मानक विचलन (S.D)

Σ =योग

f =पदों की आव तियां

d=वर्गान्तर का माध्य से विचलन

N=आव तियों का योग

उदाहरणः

$= \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}$ यहाँ निम्नलिखित प्राप्तांक और नीचे लिखी आव ति को आधार मानकर मानक विचलन ज्ञात करने की प्रत्यक्ष विधि का वर्णन किया गया है।

प्राप्तांक	21	20	19	18	17	16	15	14	13	12	11	10	9	8	7	6	5
आव ति	1	0	0	2	1	2	3	2	3	4	6	8	7	5	2	1	3

सूत्र (S.D) σ

प्राप्तांक (x)	**आव ति (f)**	**fx**	**d= (x-m) M=11**	**fd**	**fd^2**
21	1	21	10	10	100
20	0	0	9	0	0
19	0	0	8	0	0
18	2	36	7	14	98
17	1	17	6	6	36
16	2	32	5	10	50

Contd...

15	3	45	4	12	48
14	2	28	3	6	18
13	3	39	2	6	12
12	4	48	1	4	4
11	6	66	0	0	0
10	8	80	-1	-8	8
9	7	63	-2	-14	28
8	5	40	-3	-15	45
7	2	14	-4	-8	32
6	1	6	-5	-5	25
5	3	15	-6	-18	108
	$N(\Sigma f)=50$	$\Sigma fx=550$			$\Sigma fd^2=612$

समान्तर माध्य $(M)=\frac{\Sigma fx}{N}=\frac{550}{50}=11$

M=11

मानक विचलन $(\sigma)=\sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}$

$\Sigma fd^2=162, N=50$

$\sigma=\sqrt{\frac{612}{50}}=\sqrt{12.4}$

$\sigma=3.5$ **लगभग**

संक्षिप्त विधि द्वारा हल

सूत्रः

यहाँ पर माना दिए गए प्राप्तांकों का कल्पित माध्य (A)=10 **है**

प्राप्तांक *(x)*	**आवृति** *(f)*	**कल्पित माध्य (A)=10 से प्राप्ताकों का विचलन** *d*	*fd*	*fd²*
21	1	11	11	121
20	0	10	0	0
19	0	9	0	0
18	2	8	16	128

Contd...

17	1	7	7	49
16	2	6	12	72
15	3	5	15	75
14	2	4	8	32
13	3	3	9	27
12	4	2	8	16
11	6	1	6	6
10	8	0	0	0
9	7	-1	-7	7
8	5	-2	-10	20
7	2	-3	-6	18
6	1	-4	-4	16
5	3	-5	-15	75
	N=50		$\Sigma fd = 50$	$\Sigma fd^2 = 662$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}$$

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N} - \left(\frac{\Sigma fd}{N}\right)^2}$$

$\Sigma fd^2 = 662,\ N = 50,\ \Sigma fd = 50,\ N = 50$

$$\sigma = \sqrt{\frac{662}{50} - \left(\frac{50}{50}\right)^2}$$

$$\sigma = \sqrt{13.24 - (1)^2} = \sqrt{12.24}$$

$\sigma = 3.5$ लगभग

अखिण्डत एवं सतत श्रेणी में मानक विचलन का निर्धारण

(Calculation of Standard Deviation in Continous Series)

सतत श्रेणी में भी मानक विचलन की गणना प्रत्यक्ष एवं लधु दोनों विधियों द्वारा की जाती है। निम्न उदाहरण में दोनों विधियों का प्रयोग करते हुए मानक विचलन की गणना की गई है। इस श्रेणी में S.D निकालने के लिए सर्वप्रथम श्रेणी के मध्य बिन्दु ज्ञात कर लिए जाते है।

प्रत्यक्ष विधि

(Direct Method)

सूत्र :

σ = मानक विचलन

कुल योग

f = आव ति

N= पदों की आव तियों का कुल योग

उदाहरणः

निम्नलिखित आकड़ों का अखिण्डत श्रेणी में प्रत्यक्ष विधि एवं संक्षिप्त विधि द्वारा मानक विचलन निर्धारण की विधि को दर्शाया गया है।

वर्ग	0-10	10-20	20-30	30-40	40-50
आव ति	10	3	2	1	4

प्रत्यक्ष विधि

वर्ग	मध्य बिन्दू (x)	*f*	*fx*	*d=(x-m)*	d^2	fd^2
0-10	5	10	50	-13	169	1690
10-20	15	3	45	-3	9	27
20-30	25	2	50	7	49	98
30-40	35	1	35	17	289	289
40-50	45	4	180	27	729	2916
		N=20	Σfx=360			

$$M=\frac{\Sigma fx}{N}=\frac{360}{20}=18$$

M=18

$$S.D(\sigma)=\sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}}=\sqrt{\frac{5020}{20}}=\sqrt{251}=15.84$$

$\sigma=15.84$

संक्षिप्त विधि द्वारा मानक विचलन का निर्धारण: उपरोक्त पदमूल्यों के आधार पर ही लधु विधि द्वारा मानक विचलन की गणना करने के लिए सबसे पहले कल्पित माध्य का निर्धारण करते हुए विचलन ज्ञात करेगें।

सूत्र :

$$\sigma=\sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N}-\left(\frac{\Sigma fd}{N}\right)^2}$$

वर्ग	मध्य बिन्दू x	f	$d=(x-A)$ $A=25$	fd	d^2	fd^2
0-10	5	10	-20	-200	400	4000
10-20	15	3	-10	-30	100	300
20-30	25	2	0	0	0	0
30-40	35	1	10	10	100	100
40-50	45	4	20	80	400	1600
		N=20	$\Sigma fd=-140$			$\Sigma fd^2=6000$

$$\sigma=\sqrt{\frac{\Sigma \mathrm{fd}^2}{N}-\left(\frac{\Sigma fd}{N}\right)^2}=\sqrt{\frac{600}{20}-\left(\frac{-140}{20}\right)^2}$$

$$\sigma=\sqrt{300-49}=\sqrt{251}=15.84$$

$$\sigma=15.84$$

मानक विचलन के गुण एवं दोष

गुण:

1. यह माप श्रेणी के सभी मूल्यों पर आधारित होता है।
2. यह माध्य ज्ञात करने के लिए उपयोगी है।
3. यह वितरण का अधिक स्थिर (Stable) मापक है।
4. यह विचलन का स्पष्ट और निश्चित माप है।
5. यह अधिक विचलन वाली पदमाला में सरलता से प्रयोग किया जा सकता है।
6. यह श्रेणी में किसी अंक विशेष की स्थिति बताने में सहायक होता है।
7. यह दो या दो से अधिक पदमालाओं के विचलन की सीमा ओर समजातीयता के अंशों की तुलना करने के लिए उपयोगी है।

दोष :

1. इसकी गणना सरल नहीं है।
2. यह माध्य की सहायता से निकाला जाता है इसलिए इस पर चरम मूल्यों का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इतना ही नहीं, मध्यक से लिए गए विचलनों के वर्ग और भी बड़े होते हैं जिसके कारण विचलन बढ़ जाता है।

सारांश:

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि सांख्यिकी विधि में प्रयुक्त होने वाले शोध की विभिन्न प्रक्रियाओं का अपना अलग महत्त्व है। संभवतः इसीलिए सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठ तरीके से शोध करने की विधि को सांख्यिकी तकनीकि द्वारा अपना कर शोध करने का प्रचलन बढ़ा है। यहाँ पर सामाजिक शोध में सांख्यिकी विधि का महत्त्व दर्शाने के लिए माध्य

प्रव तियों की माप की माध्य, बहुलक तथा मध्यंका की उपयोगिता को दर्शाने के लिए उनके अर्थ, परिभाषा और विशेषता का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् इन्हें निकालने की विधि का भी वर्णन किया गया है। माध्य विचलन और मानक विचलन की अवधारणा के साथ-साथ, परिसर की अवधारणा तथा उन्हें ज्ञात करने की विधि को भी उदाहरण द्वारा दर्शाया गया है। इन उदाहरणों के अलावा इस प्रकार के कई और उदाहरणों को लेकर जितना ज्यादा अभ्यास करेंगें उतनी बेहतर समझ इन सांख्यिकी विधि के निर्धारण के तरीकों के बारे में होगी।

मूल्यांकन हेतु प्रश्नः

1. सामाजिक शोध में सांख्यिकी विधि की विशेषताओं एवं महत्व का विवेचन करें।
2. माध्य प्रव ति क्या है? इसके द्वारा माध्य कैसे निकाला जाता है।